शरद जोशी

अखिल नियोगी स्वपनबूड़ो

प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली-२

समर्पण

स्नेही बंधु
डॉ० प्रेम प्रकाश भट्ट
को सप्रेम

)

प्राक्कथन

□□

पाठक-समुदाय मे स्वपनबूडो नाम स सुपरिचित बगला साहित्यकार श्री अखिल नियोगी ने अपने जीवन म बगाल के ऐस अनेक महाजना का सान्निध्य प्राप्त किया है जो साहित्य चित्रकला, रगमच आदि के क्षेत्रा म भारत मे ही नही विश्व भर म जान माने जात ह। रवीन्द्रनाथ, शरत् चन्द्र, अवनीन्द्रनाथ दक्षिणारजन, शिशिर कुमार, परशुराम, दुर्गादास हमेन्द्रकुमार हमेन्द्र प्रसाद हरेन्द्र कुमार (राज्यपाल महोदय) सजनीकान्त, छवि विश्वास—य वे द्वादश विभूतिया है जिनके सान्निध्य के अतरग सस्मरण श्री नियोगी न इस कृति (मूल स्वनामधन्यर सान्निध्य) म प्रस्तुत किय है।

यह कृति दो तरह स महत्वपूर्ण है। एक तो इसलिए कि यह स्वय श्री नियोगी के जीवन और व्यक्तित्व का जानन का अच्छा-खासा अवसर प्रदान करती है। दूसरी बात यह कि इस कृति म जिस युग का चित्रण है वह एक विशिष्ट हलचलवाला कालखण्ड रहा है। करीब सौ वर्षो तक फैले उस कालखण्ड का परिचय प्राप्त करना निश्चय ही बडे आनन्द की बात ह। वस्तुत इन सस्मरणा को पढकर मुझे रवीन्द्रनाथ का वह गीत याद आ गया जिसम उन्हाने इस विश्व रगमच की चहल पहल पर अपनी चरम आनन्द-तृप्ति व्यक्त की है—(हिन्दी पद्यानुवाद)

विस्तत जग के रगमच पर
खेल किये कितन ही पल पल
और नेत्रद्वय विस्फारित कर
दखी क्या सब अद्भुत हलचल !

अनुक्रम

परिशिष्ट

महापुरुषों के सान्निध्य

रवीन्द्र के सन्निकट

□□

हमने अपने बचपन में रवीन्द्रनाथ को पहली बार कब देखा यह बात हलफनामे पर तो नहीं बता सकता। बहरहाल, एक दिन की बात अच्छी तरह याद है। हम लोग तब स्काटिश चर्च स्कूल के छात्र थे। खाये-पीयें स्कूल जायें, और शाम के वक्त नये दोस्तों के साथ हेदो (आज का आजाद हिन्द बाग) पर घूम फिरें।

हेदो पर उस वक्त लोगों की इतनी भीड़ न थी। हम सब मिलकर आनंदपूर्वक पानी के किनारे हरी घास के गलीचे पर बैठकर महफिल जमाते। कोई तो विद्यालय के शिक्षकों की निर्ममता सविस्तार बखानता, कोई कविता-पाठ करता, कोई गला खोलकर गाना ही शुरू कर देता। इन्हीं दिनों हम लोग कक्षा की एक हस्तलिखित पत्रिका प्रकाशित करते थे, इसलिए साहित्य के साथ धीरे-धीरे सम्पर्क स्थापित होने लगा था। हम लोगों में से कोई-कोई तो अच्छे चित्र बना लेता था। मैं स्वयं छिप छिपकर एकाध चित्र बनाने की चेष्टा करता, मगर किसी को दिखाने का साहस न होता।

उन दिनों छात्रों में इस तरह बहुत ज्यादा सिनेमा देखने का रिवाज न था। कभी-कभार बच्चों के लायक चित्र आता, तो हम लोगों को देखने का मौका मिलता।

हेदो पर तैराकी सीखने का रिवाज तब भी चालू था। किसी किसी दिन हम लोग दूसरों को तैरता देखकर भी खुश होते।

इसी तरह हमारे दिन कट रहे थे कि एक दिन हमारा एक दोस्त शाम वाली उस मजलिस में आकर बोला— 'अरे, सुना तुम लोगों ने ? रवीन्द्रनाथ कलकत्ता आ रहे हैं।"

सुनकर हम सभी उछल पड़े। तब तक रवीन्द्रनाथ का बस नाम ही सुना था, उन्हें आंखों से देखने का सौभाग्य कभी नहीं हुआ। आजकल तो

रवीन्द्रनाथ की कविताए पाठ्य पुस्तकों म खूब मिलती है, उन दिनो बच्चो के लिए एसी व्यवस्था नही थी। हम लाग निषिद्ध फल की तरह एक-दो रवीद्र कविताए इधर उधर पढकर इच्छा पूरी करत थे। और सुना था कि रवि ठाकुर न शाति निकेतन म छात्रो के लिए एक एसा मजेदार स्कूल खोला है जहा जब खुशी पढना काफी ! शिक्षको का उत्पीडन नही, धमकाना नही और न होमटास्क का बहुत भार ! पेडो के नीचे बैठकर पढने की व्यवस्था। जब खुशी पढो जब चाहो घूमो फिरो चित्र बनाओ, गीत गाओ। कोइ तुमस कहने वाला नही। धमकाकर कमर म 'कनफान' कर नही रखेगा।

उस सब पक्षेछिर दश' (एसा दश जहा लगे कि सब मिल गया) के लिए कलकत्ता के लडको के मन छटपटात रहत।

बहरहाल दोस्त की वह खबर सुनकर हम लोगो को लगा जस आकाश का चाद हाथ म आ गया। सब एक साथ पूछ बैठे— 'कहा आ रहे है कब आ रहे हैं ? दोस्त न हम चुपकर कहा— अरे तुम तो कुछ नही जानत। रवि ठाकुर की वाडी है न जोडा साको म। अपन घर म ही रुकेंगे। एक दिन शाम के वक्त ब्राह्मसमाज म भाषण दगे।

सुनकर हम लोग और भी खुश। ब्राह्मसमाज ? वह तो हदो के बहुत पास है। तब तो वहा दल बनाकर जाना है। रवि ठाकुर को एक बार आखो स दखना है।

मगर उस दिन ब्राह्मसमाज मे खूब भीड होगी' हम लोगो को सावधान करत हुए दोस्त न कहा— पहल नही पहुचे तो सम्भव है घुस ही न सकें।

इस पर वही बैठ-बैठ विचार विमर्श कर यह तय किया गया कि हम सब हदो पर आकर इकट्ठे होगे फिर वहा से ब्राह्मसमाज चलग।

बीच म दो दिन थ मगर व दो दिन ही दो महीन की तरह लम्बे हो गय। वक्त जस वक्त किसी तरह भी कटना ही नही चाहता। लिखना पढना अच्छा नही लग रहा—स्कूल स चपत होने की इच्छा करती है— यहा तक कि हदो का जो मजलिश हम लोगो के लिए नदन-कानन थी, उसम भी सिफ रवि ठाकुर की बात चलती है।

हर चीज का अत है। हमारी दो दिन की उस प्रतीक्षा का भी अन्त आया।

उस दिन स्कूल की पढाई मे जरा भी मन न लगा। कब छुट्टी हो, कब हम लोग घर पहुचकर हाफपैण्ट बदलकर धोती कुर्ता पहनकर हदो पर इकट्ठे हो—बस यही बात कहते सोचते रहे।

छुट्टी के बाद उडते पक्षी की तरह दौडकर घर पहुचा। किसी तरह दो-चार कौर नाश्ते के निगले और कपडे बदलकर हदो जा पहुचे। देखा कि सभी आ चुके, सिर्फ एक दोस्त नही आया। उसे छोडकर जाना भी मभव नही। हम लोगो की हालत यह कि न आगे जा सकें, न पीछे।

हदो से ब्राह्मसमाज बहुत दूर नही। हम लोगो का मन उड जाना चाहता था, मगर उस दोस्त को छोड जाना अच्छा नही लग रहा था। दु ख और गुस्से के मारे बस यही इच्छा हो रही थी कि अपना हाथ चबा डालें। अन्त मे उसकी आशा छोड हम सब रास्ते पर चल पडे। देखा कि वह हडबडाता उसी तरफ आ रहा है। उसे जी भरकर बक-बकाकर हम लोगो ने जल्दी से कार्नवालिस स्ट्रीट पकड ली।

ब्राह्मसमाज के सामने पहुचकर देखते है कि फुटपाथ पर बहुत लोगो की भीड है। ब्राह्मसमाज की सीढिया आमन्त्रित लोगो की भीड से भरी हैं। सभी कवि के आने की प्रतीक्षा मे खडे है। हॉल मे घुसने का तो कोई उपाय ही नही। हम लोगो ने अपने उस लेट लतीफ दोस्त पर फिर गुस्सा उडेलना शुरू कर दिया, शायद इसी से कुछ शान्ति मिले।

फुटपाथी भीड और बढ गई। हमारा बच्चो का दल धक्का मुक्की कर किसी तरह एक कोने मे जाकर खडा हो गया। जब आ ही गये तो रवि ठाकुर को देखे बिना नही लौटेंगे—हदो की नरम घास का गलीचा हाथ के इशारे से कितना ही क्या न बुलाये।

'वो आ गये, वो आये!' चारो ओर मे एक आवाज उठी। थोडी ही देर मे ब्राह्मसमाज मदिर के सामने एक गाडी आकर रुकी। मूगिया रग का एक ढीला कुर्ता पहन स्वय रवि ठाकुर गाडी से उतरे। आखो पर चश्मा, जिससे काला डोरा लटक रहा है। बाद मे सुना था कि उसे 'पाशने' चश्मा कहते हैं। उन्हे पैरो तक ठीक तरह से नही देख पाए। ऋषि की तरह लबे

बाल और दाढी! दखकर हम लोग ता अवाक्! जो लोग उनका स्वागत करन के लिए खडे हुए थे, उनकी ओर मदुभाव से हसकर कवि सीढिया चढकर ऊपर चले गय।

गोया कि कोई दवता भूतल पर उतर आया है—एसे एक विस्मय क साथ हम सव किशोर छात्र उसी ओर असहाय की तरह देखते रहे। 'हाल' म घुसन का तो कोइ उपाय ही नही था। हम लोग एक-दूसरे की ओर देखने लगे। मन ही मन वस यही सोचन लगे कि एक वार और कैसे कवि को देखा जाय। उपाय नही था। नितात असहाय की तरह हम सवन सिर नीचा कर हदो की तरफ कदम वढा दिये। यह था हम लोगा का प्रथम रवि ठाकुर दशन।

इसके काफी कुछ दिना वाद मेर दिमाग मे हठात् यह वात आई कि रवि ठाकुर को एक पत्र लिखा जाय। उन दिना हमारी वह हस्तलिखित पत्रिका पूरे जोर पर थी। हमारे विभाग से ही दो पत्रिकाए प्रकाशित होती थी—एक दिवाकर दूसरी अरुण। इन दोना पत्रिकाओ मे कविता म 'प्रश्न' उत्तर चलते थे। कौन किसे हरा सकता है इस वात के पीछे छन्द माध्यम स वाग्युद्ध चलता था।

मन मे कुछ अभिमान आ गया—पत्रिकाए जब चलाते हैं तो हम लोग भी साहित्यकार है। रवि ठाकुर को चिटठी लिखन की योग्यता थोडी है ही। पत्र लिख डाला। जाने क्या-क्या लिख मारा था स्पष्टरूप से कुछ याद नही।

उन दिनो हम लोग सिफ इतना ही जानते थे कि रवि ठाकुर शातिनिकेतन म रहत हैं, इसका मतलब पत्र वही भेजना होगा। वह आबोल-ताबोल भरी चिटठी लिफाफे म रखकर शातिनिकेतन के पत पर भेज दी।

इसके बाद स्कूल की पढाई, खेलकूद, हेदो की मजलिस पत्रिका प्रकाशन, आनद-कलरव—इन सव चक्करो म पडकर कवि को लिखी उस चिटठी की वात एक तरह से भूल गया।

जो मित्र लोग इस पत्र की वात जानते थ, वे वीच-वीच म रसिकता के साथ कहते— 'क्यो रे रवि ठाकुर का जवाव आया ?"

सुनकर मुझे शर्म आती। किस दुर्बल मुहूर्त में उस चिट्ठी की बात बता बैठा था, सोचकर मेरे संकोच का ठिकाना न रहता। रवि ठाकुर बहुत बड़े आदमी हैं, सैकड़ों कामों में व्यस्त हैं। एक छोटे लड़के की चिट्ठी का जवाब देने के लिए उनके पास वक्त कहाँ? इसकी आशा लेकर बैठे रहना ही मेरी भूल है।

दिन पर दिन गुजरता गया। एक दिन एकाएक घर के दरवाजे पर डाकिए की आवाज सुनाई पड़ी। आश्चर्य! वह मेरा नाम ही पुकार रहा है। दौड़ा गया। उसने एक लिफाफा मुझे थमा दिया। ऐं! मुझे लिफाफे में चिट्ठी किसने भेजी?

लिफाफे की ओर देखकर ही सारे देह मन में एक सिहरन दौड़ गई। हाथ की इस लिखावट से मैं अच्छी तरह परिचित हूँ! कारण भी स्पष्ट बता दूँ।

उन दिनों प्रवासी के पृष्ठ पर 'दिलखुश' का विज्ञापन छपता था। उसमें रवीन्द्रनाथ के हस्ताक्षरों के ब्लॉक के साथ अभिमत प्रकाशित होता था। उस लिखावट को देखकर हम लोग नकल करने की चेष्टा करते। यही कारण है कि रवीन्द्रनाथ की लिखावट से हम लोग खूब परिचित थे।

झटपट लिफाफा खोलकर पत्र आँखों के आगे रखा। जो सोचा था, वही। पत्र के अंत में हस्ताक्षर हैं—श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर। मैं उस वक्त की बात कह रहा हूँ जब रवीन्द्रनाथ ने 'श्री' लगाना नहीं छोड़ा था।

उन्होंने क्या लिखा था, यह तो इतने दिन बाद याद नहीं आता, मगर उस दिन यही बात सबसे ज्यादा महत्त्व की थी कि स्वयं रवि ठाकुर ने पत्र लिखा। मेरे मन की हालत ऐसी थी जैसे पागल को पारसमणि की खोज मिल गई हो। जिसे देखूँ उसी को चिट्ठी खोलकर दिखाऊँ।

इस घटना के बहुत दिनों बाद की बात। तब हम लोग कॉलेज में पढ़ते थे। एकाएक सुना कि रवीन्द्रनाथ कलकत्ता आ रहे हैं। एलफ्रेड मंच पर उनका लिखा 'शारदोत्सव' नाटक खेला जायेगा।

हैरिसन रोड और कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ के पास ऐलफ्रेड थियेटर है। आज वह सिनेमा हाउस हो गया है और उसका नाम भी बदल गया है।

गज प्रौढ भद्रपुरुप न आगे आकर पूछा—"आप लोग वावामशाय से मिलन आये है?"

काजीदा ने सिर हिलाकर कहा—"हा।"

वे सज्जन बोले— 'अच्छा, आप लोग वैठक मे वैठिये, मैं उनसे कहता हू "

कहकर वे भीतर चले गये तव हमे पता चला कि य रवीन्द्रनाथ के एकमात्र पुत्र रथीन्द्रनाथ है।

फिर नये सिरे म दिल की धुकधुकी शुरू हुई। हम सब शकित चित्त से वठक मे जाकर बडे ढग से बैठकर कवि की प्रतीक्षा करन लगे।

थोडी ही देर वाद प्राचीन भारत के मूर्तिमान ऋषि की तरह ही मानो रवीन्द्रनाथ का उदय हुआ।

हम लोगो के गले रुध गये। उस देवतुल्य मूर्ति की ओर असीम विस्मय के साथ देखते रहे। काजीदा ने उठकर कवि के पैर छुए तव हम लोगो की चेतना लौटी। अरे हा! अभी विश्वकवि की पदरज तो स्पश की ही नही। हम सबने एक एक कर उठकर कवि के पैर स्पश कर अपने को धन्य समझा।

कवि काजीदा को वडा स्नेह करते थे। इससे पहले उन्होने नजरुल से शाति निकेतन जाकर रहने का अनुरोध किया था। सिफ इतना ही नही, उन्होंने अपना 'वसन्तोत्सव' नाटक अपने स्नेह पात्र नजरुल इस्लाम को समर्पित कर इसी वीच उन्हे असामान्य सम्मान से भूपित किया था।

नजरुल को देखकर कवि का चेहरा खिल गया। बोले—"अच्छा तो तुम लोग भी दार्जिलिंग घूमन आये हो। अच्छा, अच्छा!" काजीदा न सिर हिलाया। और फिर एक-एक कर हम सब का परिचय कराया।

मैं इस सुयोग की ही प्रतीक्षा मे था। मैने जल्दी से अपनी पुस्तक आगे रखकर कहा—' आपके सत्तरहवे वप मे पदापण करने के उपलक्ष म यह सामान्य पुस्तक आपको समर्पित की है "

कवि ने मृदुहास्य के साथ हाथ वढाया। शुभ्र सुन्दर हाथ। हाथ की कलाई काफी मोटी। मुझे याद आया—'जीवन-स्मृति' मे पढा था—बचपन मे रवीन्द्रनाथ कुश्ती लडत थे। उन्ही बलिष्ठ हाथो म मैंन अपनी बच्चे वहकाने वाली मामूली पुस्तक सौंप दी।

इस कविता को पढकर व क्या हसेंगे ! दिल धक् धक् करने लगा। काफी रात हो गई मगर करवट ही बदलना रहा, नीद नही आई। वह एक अनास्वादित अनुभूति थी ! हा अगले दिन सुबह सानाली धूप निकलने के साथ वह भय मन से अवश्य निकल गया। जिन्होंने 'दूर विधा जमि' लिखी है 'पुरातन भृत्य' लिखी है—व क्या कडे मिजाज के आदमी होंगे ? निश्चय ही नही।

सुबह का नाश्ता कर हम सब तीथ के पडा काजीदा के पीछे-पीछे चल पडे। नजरुल सारे रास्ते हम लोगो को हसाते-हसाते ले गये। काजीदा बात-बात में रवीन्द्रनाथ की कविताओ की परोडी तैयार कर लेते थे, यह एक मजे की बात थी। रास्ते भर यही किया। बीच-बीच में जहानारा को चिढाते रहे। बोले— तुम आई हो यह पता लगने पर कवि शायद हम लोगो से मिलने को तैयार ही न हो।" सुनते ही जहानारा आग-बबूला हो जाय ! इस तरह मजे लेते-लेते हम लोग कवि-तीर्थ की ओर चलते रहे।

काजीदा ने पहले से ही पूछताछ कर रवीन्द्रनाथ का दार्जिलिंग का पता मालूम कर लिया था। वे चलते चलते बोले—"जहानारा जानती हो, कवि गीत सुनना बडा पसद करते हैं ? सम्भव है तुम्हारा गाना सुनना चाहें।'

जहानारा होठ उलटकर बोली—' वा जी वा ! अभी तो आप कह रहे थे कवि को पता चल गया कि मैं आई हू तो वे आप लोगो से मिलना ही नही चाहेंगे ! और फिर मै तो गाना बिलकुल नही जानती मै कौन सा गीत सुनाऊगी उह ?

काजीदा ने रसिकता के साथ उत्तर दिया— क्या वही गीत सुनाना "

कौन-सा ?'

' जो तुम खूब अच्छी तरह जानती हो। वही गीत—तुमि केमन करे गान कर हे गुणि !'

हू ! मैं खूब अच्छा गाती हू न !'

धीरे धीरे बातचीत, हसी मजाक मे रास्ता कट गया। अत मे हम लोग सचमुच ही कवि भवन के आगे जा पहुचे। जैसे ही आगन मे पहुचे, एक

गजे प्रौढ भद्रपुरुष न आगे आकर पूछा—"आप लोग बाबामशाय से मिलने आये हैं?"

काजीदा ने सिर हिलाकर कहा—"हा।"

वे सज्जन बोले— 'अच्छा, आप लोग बैठक म बैठिय, मै उनसे कहता हू"

कहकर वे भीतर चले गये तब हम पता चला कि ये रवीन्द्रनाथ के एकमात्र पुत्र रथीन्द्रनाथ है।

फिर नये सिरे से दिल की धुकधुकी शुरू हुई। हम सब शकित चित्त से बैठक मे जाकर बडे ढग से बठकर कवि की प्रतीक्षा करने लगे।

थोडी ही देर बाद प्राचीन भारत के मूर्तिमान ऋषि की तरह ही मानो रवीन्द्रनाथ का उदय हुआ।

हम लोगो के गले रुध गये। उस देवतुल्य मूर्ति की ओर असीम विस्मय के साथ देखते रहे। काजीदा ने उठकर कवि के पैर छुए तब हम लोगो की चेतना लौटी। अरे हा! अभी विश्वकवि की पदरज तो स्पश की ही नही। हम सबने एक एक कर उठकर कवि के पैर स्पश कर अपने को धय समझा।

कवि काजीदा को बडा स्नेह करत थे। इससे पहले उन्होंने नजरुल से शाति निकेतन जाकर रहने का अनुरोध किया था। सिफ इतना ही नही उन्होने अपना 'वसन्तोत्सव' नाटक अपने स्नेह पात्र नजरुल इस्लाम को समर्पित कर इसी बीच उन्हे असामान्य सम्मान से भूषित किया था।

नजरल को देखकर कवि का चेहरा खिल गया। बोले— 'अच्छा, तो तुम लोग भी दार्जिलिंग घूमने आये हो। अच्छा, अच्छा!" काजीदा न सिर हिलाया। और फिर एक एक कर हम सब का परिचय कराया।

मैं इस सुयोग की ही प्रतीक्षा मे था। मैंन जल्दी से अपनी पुस्तक आगे रखकर कहा— आपके सत्तरहवें वष म पदापण करने के उपलक्ष म यह सामान्य पुस्तक आपको समर्पित की है"

कवि ने मृदुहास्य के साथ हाथ बढाया। शुभ सुन्दर हाथ। हाथ की कलाई काफी मोटी। मुझे याद आया— जीवन स्मति' मे पढा था—बचपन में रवीन्द्रनाथ कुश्ती लडत थे। उन्ही बलिष्ठ हाथा म मैन अपनी बच्चे बहकान वाली मामूली पुस्तक सौप दी।

उन्होंने आग्रह के साथ पुस्तक खोली। पहले वह उत्सर्ग-पत्र पढ़ा। तत्पश्चात पन्ने पलट-पलटकर चित्र देखने लगे। इस पुस्तक में मेरे बनाये चित्र प्रत्येक पृष्ठ पर थे। चित्रों की तरफ कवि की खास नजर है, यह बात उनका पृष्ठ उलटना देखकर ही पता चल गई।

एक बार सिर उठाकर मृदु स्वर में बोले—"तुम कहानी भी लिखते हो और चित्र भी बनाते हो ?"

उनकी बात का मैं कोई उत्तर न दे सका सिर्फ चुपचाप उनका पृष्ठ पलटना देखता रहा। काजीदा बोले—'हां अखिल चित्र खूब बनाता है। मेरी कई पुस्तकों के आवरण चित्र बनाये हैं '

कवि चित्र देखते देखते बोले— अच्छा ! शांति निकेतन पहुंचकर तुम्हारी पुस्तक पढ़ूंगा।' कहकर उन्होंने पुस्तक एक तरफ रख ली।

इसके बाद शुरू हुई काजीदा के साथ बातचीत। कवि ने कौतुक के साथ प्रश्न किया— काजी आजकल तो तुम थियेटर के लिए बड़े गीत लिख रहे हो ?

काजी नजरुल ने अपने घने बाल हिलाते हुए उत्तर दिया—"हां थोड़े-बहुत लिखने पड़ रहे हैं। इस मन्मथ के बहुत-से नाटकों के गीत मुझे रचने पड़ रहे हैं।

कवि ने एक बार मन्मथ राय की ओर देखा, फिर कहा— बंग रंग-मंच की क्या खबर है ?"

नये-नये जो नाटक उस वक्त खेले जा रहे थे मन्मथ राय ने उनकी एक तालिका पेश की। काजीदा बोले— बंगला नाटक में एक नया दृष्टि-कोण आया है। नाटककारों में मन्मथ राय और शचीन सेनगुप्त के नाम ही पहले लिये जाते हैं।

कवि प्रसंग बदलकर गीतों की बात करने लगे। काफी देर तक काजीदा के साथ उनके गीतों की चर्चा चली। हम लोग गायन का व्याकरण बिल्कुल नहीं समझते गीत सुनना अच्छा लगता है सो सुनते हैं। यही कारण था कि हम सब दोनों कवियों की गायन चर्चा सुनते रहे।

बंगला गीत के विषय में बहुत सी बातें हुई। संगीत के तकनीक से चल कर चर्चा धीरे धीरे संगीत रचयिता तक जा पहुंची। इस प्रकार द्विजेंद्रलाल

कात कवि, सत्येन दत्त, अतुल प्रसाद और नजरुल—इनके सुबन्ध गीतो की चर्चा हुई। चर्चा बडी रसीली बन पडी। मगर इतने दिन बाद उसका विस्तृत विवरण देना सभव नही। बस इतना ही याद है कि रवीन्द्रनाथ ने नजरुल की बहुमुखी प्रतिभा की प्रशसा की थी।

इस बार कवि की नजर पडी जहानारा पर। उन्होने काजीदा से पूछा—"यह बच्ची कौन है?" नजरुल ने उसका परिचय दिया। इस पर जहानारा ने साहस बटोरकर अपनी वर्षवाणी के लिए कवि से कविता की प्रार्थना की। परवर्ती काल मे कवि ने उसकी वह प्रार्थना स्वीकार की थी।

कवि ने जहानारा की ओर देखकर कहा— "तुम जब नजरुल के साथ आई हो, तो निश्चय ही गाना जानती हो। मुझे एक गीत सुनाओ"

लाज से जहानारा का चेहरा लाल हो गया। मृदु स्वर से उत्तर दिया—"मैं तो गाना नहीं जानती।"

कवि ने रसिकता के साथ कहा—"यह क्या काजी, तुम्हारी सगिनी है, और गाना नही जानती?"

काजीदा स्वय असमजस मे पड गए। बोले—"जी, आजकल यह लिख रही है। बडा अच्छा लिखती है। इन लोगो का खूब पढा-लिखा परिवार है। मा-दादा सभी शिक्षित है।"

कवि मद मद मुस्कराने लगे। बोले—"अच्छा, अच्छा!"

इसके बाद कुछ देर वर्तमान साहित्य पर रसीली चर्चा हुई।

बहुत-से लोग शायद यह नही जानते कि कवि नजरुल ने जब 'धूमकेतु' अखबार प्रकाशित किया था तब कवि ने शातिनिकेतन से यह शुभेच्छा भेजी थी—

'आय चले आय रे धूमकेतु
आधारे बाध अग्नि-सेतु—
दुर्दिनेर एइ दुर्ग शिरे उडिये दे तोर विजय-केतन,
अलक्षणेर तिलक रेखा
रातेर भाले होक ना लेखा
जागिये दे रे चमक मेरे आछे जारा अर्धचेतन॥"

(भावार्थ आ, चला आ, रे धूमकेतु! अधकार मे अग्नि-सेतु

के दुर्दिन इस दुग पर अपनी विजय पताका फहरा। रात्रि के ललाट पर अपशकुन की तिलक रेखा अंकित न हो। जो लोग अध चेतना म है उन्ह चौंकाकर जगा दे।)

उस साहित्य चचा के बीच हम सभी की भूमिका निवाक श्रोताआ की रही। नजरल ने एकाएक इतालव कवि दानेतसिओ के विषय म चचा शुरू कर दी।

कवि न कहा—' बडी मशक्त रचना है इसम सदेह नही। हा वेपरवाह बहुत ह वे।"

नजरुल न जानना चाहा कि कवि नया क्या लिख रहे हैं। इस विषय म कुछ दर बातचीत हुई।

उस दिन बातचीत के दौरान कवि ने जिस रसिक्ता-सरसता का परिचय दिया उससे हम लागा को लगा जैसे शीतल वषा जल म स्नान कर लिया। इतनी देर तक कवि को इतन निकट देखेंगे—यह बात हम लागो की धारणा क परे ही थी। विश्वकवि है मगर साधारण आदमी की पकड मे आ जाते हैं इतन सहज होकर। मन ही मन यह पक्ति गूजन लगी ' गगन नहिले तोमारे धरिबे केवा।"

कवि की बातें सुनते-सुनते इतना समय कस बीत गया कोई समय नही पाया। एकाएक रवीन्द्रनाथ कमरे म आकर बाल—' बहुत देर हो गइ। बारह बज रह हैं। बाबामशाय (पिताजी) के खान म थोडी देर हो रही है '

तब कही हम अपने अपराध की मात्रा मालूम हुई। कवि को इतनी दर बिठाये रखना कतई उचित नही रहा। काजादा का अनुसरण कर पुन कवि के चरण-स्पश कर दार्जिलिंग के दोपहरी धूपीले पथ पर निकल आये। लगा जसे हम लोग पुन्य सलिला मे स्नान कर लौटे हैं।

शरत्चन्द्र के आस-पास

□□

उस वक्त मेरी किशोरावस्था थी। स्काटिश स्कूल की निचली कक्षा मे पढता था। बगला की कोई पुस्तक हाथ लगती, तो अकाल-पीडित व्यक्ति की तरह बिना कुछ सोच विचार के निगल जाता। घर पर प्रवासी भारत-वप आदि मासिक पत्रिकाए आती थी। उन्ह भी छिपे छिपे पढ लेता था।

एक दिन अचानक एक छोटी पतली पुस्तक मेज पर दिखाई पडी। शाम को घूमने जाने की बात थी मगर वह सकल्प त्यागकर उस पुस्तक को लेकर मैं छत पर चढ गया। उस पुस्तक का मूल्य था आठ आना, नाम था अरक्षणीया'।

जसे जैस उस पुस्तक को पढू, मेरा मन उस अपरिचित लडकी के दुख से भारी होता जाय। अन्त म मैं यह दखकर अवाक रह गया कि पुस्तक पढ-कर मै रो रहा हू! कहानी पढकर आसू बहान मे कितना सुख है यह बात जीवन म पहली बार उसी दिन पता चली। कहानी खत्म हुई, तो मैंने गौर किया—पश्चिम के लाल रग के बादलो के साथ मेरा मन रक्तिम वेदना से जैस एकाकार हो गया है।

वह ज्ञानदा, सूखा जला काठ—उन सब चिर परिचित लोगो ने चुपके से मरे मन मे घर कर लिया।

इसके बाद जब भी शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय की लिखी कोई पुस्तक घर आती मैं छिप-छिपकर पढ लेता। और इस व्यक्ति को देखने का मौका मिला, इस घटना के बहुत बाद।

शरत्चन्द्र राम मोहन लाइब्रेरी मे अपने 'पल्ली समाज' के विषय म चचा करेंगे, यह खबर सुनकर छात्र वग एकाएक चचल हो उठा। हम लोग भी अपना दल लेकर वहा जा पहुचे। मगर सही बात कहने म डर क्या शरत्चन्द्र का भाषण सुनकर उस दिन जरा भी खुशी न हुई। एक आशा-भग की वेदना लेकर ही घर लौटे।

रह रहकर एक यही बात मन म उठती थी—जो लेखक अपने कहानी कहने के गुण से आदमी की आखो से पानी निकलवा सकता है, वक्तता के मामले म उसकी इतनी दीनता क्यो ?

उन्होने रमा और रमेश का मिलन क्यो नहीं कराया, इस विषय मे उनके पास प्राय ही लोगो की शिकायतें आती हैं। इस अभियोग का खडन करने के लिए ही उनका वह भाषण था। मगर अपनी उस किशोरा वस्था म ही हम महसूस हुआ कि वे कोई भी बात ढग से नहीं कह पाये। उस दिन छात्र समाज के क्षोभ की सीमा न रही।

शरतचन्द्र को और भी निकट से और भी घरेलू तौर पर देखा इस घटना के बहुत बाद।

मैं देशबन्धु चितरजन द्वारा प्रतिष्ठित बगवाणी दैनिक समाचार पत्र से सयुक्त था। वतमान म जहा सरस्वती प्रेस है उसी बिल्डिंग म फारवड बगवाणी और नवशक्ति के कार्यालय थे। बन्धुवर गोपाल सान्याल उस वक्त बगवाणी के सम्पादक थे। बधुवर प्रेमेन्द्र मित्र आदि तरुण साहित्यकार पत्रकारिता का अभ्यास करते थे। नवशक्ति के सम्पादक थे नाटककार शचीन्द्रनाथ सेनगुप्त। आना जाना रहता था दुमजिले पर कमरे म चाय के दौर और साहित्य की गोष्ठिया चलती थी।

एक दिन गोपाल सान्याल महाशय हडबडाये से आये और बोले—शरतचन्द्र के पचास वर्षो म देश की जो गलती रही, तिरेपन वष म उसका सशोधन करना पडेगा। व्यापक स्तर पर शरतचन्द्र के जन्मोत्सव का आयोजन किया जा रहा है। गोपाल बाबू ने मुझे जबरन उत्सव कमेटी का सहकारी सम्पादक बना दिया। काफी भागदौड मेहनत का काम था। देश के बडे-बडे गण्यमान्य व्यक्ति स्वागत समिति के सदस्य थे। निर्वासितर आत्मकथा के उपेन बद्योपाध्याय काजी नजरुल इस्लाम, दिलीप राय आदि कमर कसकर काम म लग गये। साथ ही साथ हम लोग भी जुट गये। देशभर म छात्र वग म कसी उत्तेजना थी। काजी नजरुल ने नया गीत तयार किया— कौन शरत पूर्णिमा चाद आसते ए धरातल! बडी धूमधाम के साथ शरत्चन्द्र का अभिनन्दन हुआ—उनकी तिरेपन वष की उम्र म।

वेहाला के मणीन्द्र राय शरत्चन्द्र के विशेष प्रेमी थे। शरत्-अभिनन्दन में जो कार्यकर्ता थे और जिन्होने बडी भागदौड की थी, उन सभी को आमंत्रित कर मणीन्द्र बावू ने एक बहुत बडे भोज का आयोजन किया। उनके वेहालावाले घर पर एक सन्ध्या वडी गोष्ठी हुई। मध्यमणि थे स्वयं शरत्चन्द्र जी। खोलकर गीत गाये दिलीप राय और काजी नजरुल इस्लाम ने। गायन के बाद शरत्चन्द्र की रसीली कहानी शुरू हुई। मणीन्द्र राय महाशय ने हर थाली कटोरियो से इस तरह सजाई थी जैसे नाती जमाई[1] लोग इकट्ठे हुए हो। गीत गल्प और भोज की दृष्टि से वह एक स्मरणीय सन्ध्या थी। उस भोज का सरस वर्णन मैंने 'वंगवाणी' में किया था।

'रसचक्र' में हम लोगो ने शरत्चन्द्र से और भी पास से और भी घनिष्ठ भाव से भेंट की थी। कविशेखर कालिदास राय ने इस 'रसचक्र' की प्रतिष्ठा की थी। इसमे प्रति सप्ताह बहुत से प्रवीण नवीन साहित्यकारो का संगम होता था। शरत्चन्द्र इस प्रतिष्ठान के भी मध्यमणि थे। विश्वपति चौधुरी, असमंज मुखोपाध्याय, प्रबोध, प्रेमेन शैलजा, सुविमल आदि सभी लोग यहा आकर उस साहित्य-तीर्थ के पुण्य जल मे गोते लगा जाते। हम लोग भी सुयोग पाते ही पहुच जाते। शरत्चन्द्र की कहानी और विशुदा (विश्वपति चौधुरी) की टिप्पणी विशेष रूप से उपभोग्य थी। रसचक्र की ओर से बीच-बीच मे उद्यान सम्मेलन होता। उसमे शरत्चन्द्र का उत्साह सबसे ज्यादा होता। वे हम लोगो के साथ हुक्का हाथ मे लेकर एक पेड के नीचे बठते और फिर अपने वचपन की कहानियां साप पकडने के किस्से, जालादल की कहानियां, रगून के संस्मरण—सब धीरे-धीरे रस ले-लेकर सुनाते। कैसी-कैसी विचित्र बाते थी—उस वक्त लिख कर रखी जाती, तो एक सुंदर पुस्तक तैयार होती।

एक उद्यान-सम्मेलन मे शरत्चन्द्र ने हम लोगो से पूछा— तुम लोगो मे से कविता कौन-कौन लिखते हो, हाथ ऊपर करो। हम लोगो ने बडे गर्व के साथ हाथ उठा दिये। इस पर शरत्चन्द्र ने सबको आश्चर्य मे डालते हुए कहा— 'आज से तुम सब कविता लिखना छोड दो।' सुनकर तरुण साहित्यकार तो सभी हक्कबक्का गये। भला यह क्या कह रहे है शरत्चन्द्र!

[1] पोती या नातिनी का पति।

हम सब के मुह की ओर देखकर शरतचन्द्र बोले—"देखो, मैंने ठीक ही कहा है। जिस देश म रवीन्द्रनाथ न जन्म लिया है, उस देश म नये सिर से कविता रचने के कोई मानी नही। मैंने भी पहले कविता स ही शुरुआत की थी। बाद म रवीन्द्रनाथ को पढकर कविता लिखना चुपके से छोड दिया। अच्छा तुम लोग ही बताओ नया और क्या है लिखने को—रवीन्द्र-नाथ क बाद ? वे सभी कुछ सुदर ढग स कह गये हैं।"

इसक बाद किसी भी तरुण साहित्यकार न कविता रचनी नही छोडी, सही है मगर उस दिन शरत्चन्द्र ने सही बात ही कही थी।

इस रसचक्र म व अनक साहित्यकारो के अभिनदन का आयोजन करते। व कहत है जो नये लोग लिख रह हैं उन्हें प्रेरणा की आवश्यकता है। हम लोगो को अपने बचपन म लिखने के लिए किसी प्रकार का उत्साह या प्रेरणा नही मिली।

शरत्चन्द्र ने दक्षिण कलकत्ता मे अपना घर तैयार किया, तो उस नये भवन म उन्होंने अपन स्नेह पात्र अनुज साहित्यकारो को आमत्रित किया था। उस महोत्सव म उपस्थित होन का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ। अपनी पुस्तको की नायिकाओ की तरह उन्हे सबको खिलाना पिलाना बडा अच्छा लगता। दोतले पर खान पान की व्यवस्था थी। वे स्वय कभी तो मुड्ढे पर बैठकर कभी घूम फिरकर सभी का ध्यान रख रहे थे। किसकी पत्तल पर किस चीज की आवश्यकता ह इस बात की ओर उनकी विशेष नजर थी। शरतचन्द्र स्वय बठकर खिला रह हैं—यह दुलभ सौभाग्य हम लागो को मिला था।

इसके बाद शरतचन्द्र के घर कई बार गया हू, कभी तो उनकी उपस्थिति म कभी अनुपस्थिति म। उनका वह स्नेहभरा चेहरा कभी नही भूल सकता। साहित्य से प्रेम कर उन्होंने बगला दश के साहित्कारो को भी अपना बना लिया था।

'रूपवाणी' की स्थापना से ही मैं उनका प्रचार-सचिव था। जब न्यू थियेटस ने उनके दत्ता' उपन्यास के आधार पर 'विजया' छायाचित्र का निमाण किया, तो यह तय हुआ कि रूपवाणी म ही वह विजया' मुक्ति लाभ करेगा।

श्री अविनाश घोषाल और मैं रूपवाणी की ओर से शरत्चन्द्र को निमत्रण देने गये ताकि वे उद्घाटन समारोह के वक्त रूपवाणी म उपस्थित रहं। शरतदा थोडे शर्मीले स्वभाव के व्यक्ति थे। वे लोगो की भीड मे आने के लिए कतई तयार न हो और हम लोग भी उन्ह छोडें नही। एक तरह का टग ऑफ-वार। अत मे हमारे अनुरोध पर उन्ह राजी होना पडा।

उत्सव वाले दिन तीसरे पहर हम लोग ही गाडी ले जाकर उन्ह ले आये। शाम के शो मे उन्होने 'विजया' देखी। उत्सव के अत मे दातल की लाबी म जाकर जसे ही बैठे, मैंने एक डायरी उनके आग कर कहा—"शरतदा आपको 'विजया' कसी लगी कुछ लिख दीजिये।"

अब तक शरत्चन्द्र धैय धारण कर किसी तरह चुप थे। इस बार वे आग-बबूला हो गये। बोले—'तुम लोगो मे बस यही ता खराबी है अखिल, हर बात म चटपट लेन देन चाहिए! इसी वक्त मैं क्या लिखू बोलो?'

इस तुरत लिखा पढी के पीछे अवश्य ही एक उद्देश्य था। मरी आतरिक इच्छा यह थी कि रातारात शरतचन्द्र के अभिमत का ब्लॉक तयार करवाकर अगले दिन के समाचार पत्र मे छपवा द। शरत्दा शुरू मे चाहे जितने नाराज हुए हो मैं उनके पीछे लगा रहा तो काम हासिल कर लिया। अगले दिन समाचार पत्र मे शरत्दा के स्वय के हाथ के अक्षरो म उनका अभिमत प्रकाशित हुआ।

रवि वासर मे भी हम लोगो न शरत्चन्द्र को एकात आत्मीय के रूप म पाया था। स्वय रवीन्द्रनाथ और अयान्य नामी साहित्यकार पचास व्यक्ति इस रवि वासर के सदस्य थे। एक एक कर सभी सदस्यो के घर पर अधिवेशन बुलाये जाते थे और उनम भोज की एक प्रतियोगिता चलती थी। इन सभाओं मे साहित्य चर्चा, सगीत आदि चलता, और चलती शरतचन्द्र की मजलिसी कहानी। वह कितनी मजेदार चीज थी—आमने-सामने बैठकर सुने बिना समझ मे नही आने की। हम लोग यह सोचकर अवाक् हो जाते कि जो आदमी सभा-समिति म भाषण बिलकुल नही द पाता, वह घण्टे पर घण्टे मजलिस कैसे जमाये रखता है!

रवि-वासर के प्राय प्रत्येक अधिवशन म शरतचन्द्र उपस्थित रहने की चेष्टा करते। स्वास्थ्य निहायत ही खराब होता, तो व न आ पाते। इसके

अलावा शेष वयस म उन्होने पानित्रास मे नदी किनारे शात ग्रामाचल म एक मकान बनाया था। बीच-बीच म वहा भी जाकर रहते। तब रवि वासर आना न होता।

आखिर मे वे प्राय ही तरह-तरह के रोगो से घिरे रहते। सबसे मिलना-जुलना नही होता, इस बात पर उनकी मनोवेदना का अत न था। बच्चे की तरह कहते— मैने धर पर फोन लगवा लिया है, तुम सब मुझसे फोन पर बात किया करो।' आदमी से वे कितना प्रेम करते थे, इन छोटी छोटी बातो से पता चलता है। फिर उनका कूकुर प्रेम तो जगविख्यात है!

प्राफेसर खगद्रनाथ सेन के घर पर रवि-वासर का अधिवेशन चल रहा था कि खबर आई नर्सिंग होम म हम सभी के प्रिय शरतदा चल बसे। तुरत अधिवेशन बद हो गया। हम सब रास्ते पर चल पडे।

शरतचद्र के श्राद्धवाले दिन अनुज साहित्यकार आमत्रित किये गये थे। पहुचने पर देखा कि एक शिल्पी न शरत्‌दा की आदमकद मूर्ति बनाकर रखी है—शरतदा बैठे-बैठे हुक्का पी रहे है। एसी सुन्दर मूर्ति कि नजरें हटाना मुश्किल!

इस घटना के बहुत दिना बाद शरतचद्र के पल्ली भवन पानित्रास से निमन्त्रण मिला वहा के लडके-लडकिया शरत्‌चद्र के घर मे एक सब पेयेछिर आसर' की प्रतिष्ठा करेंगे। नाम रखा गया है शरत्‌चद्र सब पेयेछिर आसर'।

इससे अधिक आनन्द का समाचार मेरे लिए और क्या हो सकता था? जब तक वे रहे तरह-तरह से उनका स्नेह प्राप्त कर धन्य हुआ। आज यदि उनके पल्ली भवन म एक आसर' शुरू होता है, तब तो वे उस आसर के लडके-लडकिया के बीच अमर रहेगे। यह भी खबर मिली कि शरतचद्र का जन्मोत्सव एव आसर का प्रतिष्ठा-उत्सव दोना एक ही दिन सम्पन्न होगे।

यथासमय लडके आकर मुझे शरत्‌दा के पानित्रास वाले घर ले गये। घर के सामने एक तालाब है, देखकर लगा जसे इसी के पानी मे 'कार्तिक-गणेश' अब भी घूम फिर रहे हैं, बेपरवाह राम अभी भोला को लेकर इस घाट पर आ निकलेगा। सामने एक अमरूद का पेड है। क्या इसी पेड पर चढकर राम ने नारायणी की लडाकू मा पर अमरूद फेंककर मारा था?

मन-ही मन आशा जगी घर म घुसते ही शायद बहुत लोगो से मुलाकात होगी।

जिस कमरे मे बैठकर शरत्चद्र लिखते थे, वह लडका ने मुझे दिखाया। वे जिस तरह उसे काम मे लेते थे, ठीक उसी तरह उसे सज्जित कर रखा गया है।

थाडो दूर नदी के किनारे शरत्चद्र और उनके सन्यासी भाई की चिताभस्म रखी गयी है। दो छोटे छोटे स्तम्भ बनाए गय हैं। सगम्रमर पर खुदी हुई हैं—ज म मत्यु की सन्-तारीखें।

उस दिन के उत्सव म प्रचुर जनसमागम देखकर समझ मे आया कि शरत्दा इस पल्ली-अचल म कितन लोकप्रिय थे। ये लोग शहर वाला से अपने 'दाठाकुर' की बातें जी भरकर सुनना चाहते है।

उमा प्रसाद मुखोपाध्याय इस उत्सव मे भाग लेने के लिए कलकत्ता से गए थे। ये बगाल के बाघ सर आशुतोष के पुत्र हैं। एक समय था जब इ ही के प्रतिष्ठित मासिक पत्र 'बगवाणी' मे शरत्चद्र का 'पथेर दावी' धारावाहिक प्रकाशित होता था। उन दिनो बगाल मे कैसी उत्तेजना देखने मे आती थी।

अनुष्ठान के बाद उमा प्रसाद को और मुझे हमारी पूजनीया भाभीजी हिर मयी देवी (शरत्चद्र की सहधर्मिणी) ने ऊपर दोतले पर बुलवाया। प्रचुर जलपान का आयोजन था। उ होंने पास बैठकर तरह-तरह की बातें करते हुए हम लोगो को नाश्ता कराया। शरत्चद्र के नारी-चरित्रो की प्रीति-स्नेह-ममता की बात नये सिरे से याद आते ही हम लोगो की आखें भर उठी। आते वक्त नि शब्द उनके पर छुए। मन-ही मन प्रश्न उठा हमारा यह प्रणाम (चरण-स्पश) क्या शरत्चद्र के पास भी पहुचेगा?

शिल्प-गुरु अवनीन्द्र नाथ

□□

जोडासाको ठाकुरवाडी के दक्षिणी बरामदे म बैठे मनोयोग के साथ अपरूप शिल्प मजन किये जा रहे हैं अवनीन्द्र नाथ । भेंट करना चाहते हो ?

नही-नही, काड भेजन की जरूरत नही । बायें हाथ की सीढिया चढ कर सीधे दोतले पर चले जाओ । वहा पास पास आसन विछाये चित्र बना रहे है दो भाई—गगनेन्द्र नाथ और अवनीन्द्र नाथ ।

नजरूल की भाषा म—बहुत दूर कीचड मे चलने के बाद कमल फूलो से भरा तालाब देखकर आखो को जो राहत मिलती है, ठीक वही अनुभूति । चितपुर के गदे इलाके के बाद जोडासाको का यह दक्षिणी बरामदा ! यह दृश्य सारे भारत वष म तुम्हे सिफ जोडासाको ठाकुरवाडी मे ही मिलेगा, और कही नही ।

प्रतिदिन आकाश का वक्ष प्रकाशित होता है, पृथ्वी की गोद म फूल फूटते हैं, पक्षी गाते हैं—

> फूल से यदि पूछो—फूल तुम फूटते क्यो हो ?
> तो फूल उत्तर देगा—सुगन्ध बिखेरनी है न ।
> पक्षी से यदि पूछा—पक्षी तुम गाते क्या हो ?
> तो पक्षी उत्तर देगा—गाये बिना रह नही सकता ।

अपरूप अवनीन्द्र नाथ की भी यही एक बात । 'चित्र बनाये बिना रह नही सकता । नही तो जमीदार घराने का लडका बेटा हू, मसनद लगाये फर्शी गुडगुडाने स कौन रोकेगा ?'

मगर एक ही बीमारी है । चित्र नही बनाऊगा तो जिन्दा कसे रहूगा ?

चित्र बनाने की वेदी के चारो ओर रगो और तूलिकाओ का समारोह ! कब किसकी जरूरत पड जाय कौन कह सकता है ।

सामने एक बडे गमले मे पानी भरा हुआ है । उस पानी म न जाने

कितने रग घुले हुए ह। मन का रग और कल्पना का रग उसमे मिल जाता ह। यह भी सभव है कि किसी वक्त पूरा का पूरा चित्र उस गमले के जल म डुबो लिया जाय।

हजार तरीको से परीक्षा निरीक्षा चल रही है।

दश का भला और कौन-सा शिल्पी लोगो को अपन पास विठाकर चित्र वनाना दिखायेगा पहर दर पहर ! मगर अपरूप अवनीन्द्र नाथ के निकट कोई वाधा निपेध नही।

हाथ से चित्रकारी चल रही है—और मुह से कहानिया का जहाज छोड दिया है। वही सिन्दवाद का जहाज, जो तुम्हें ले जाकर किस राज्य मे पडाव डालेगा, इसका कोई ठिकाना नही।

मगर गगनेन्द्र नाथ छोटे भाई के ठीक उल्टे। मुह से एक शब्द नही—अपने ध्यान म तूलिका चलाये जा रहे है, और छोटे भाई की बातें सुनकर कभी-कभी मद-मद मुस्करा उठत है। मगर उनकी वह मुस्कान विजली की तरह निमेप भर मे वादला की ओट मे छिप जाती है। अगले ही मुहूत हिमालय की गम्भीरता।

वह दक्षिणी वरामदा सारे देश के शिल्पी-साहित्यकारा का तीथ-क्षेत्र है। दक्षिण की उस स्वतत्र हवा के लिए जस कोइ शुल्क नही देना पडता, वैसे ही अवनीन्द्र नाथ के दाक्षिण्य के द्वार पर किसी द्वारपाल की वाधा नही।

परिचित अपरिचित का कोई भेद-भाव नही। आये हो तो ले जाओ। रस रूप की डलिया सजाये वैठा हू, अच्छा लगे—कुछ ले जाओ—

'यदि भरिया लइब कुभ
एसो ओगो एसो मोर हृदय-नीरे "

(भावाथ यदि मेरे हृदय-नीर स अपना घडा भरना चाहो, तो आओ, अरे आओ।)

अपरूप अवनीन्द्र नाथ आत्मविभोर होकर पहले सिफ तूलिका ही चलात थ, मगर रवि काका न कहा—'ओबू तुम्हें लिखना भी पडेगा। जैसे तुम कहानिया सुनात हो ठीक उसी तरह प्राणा के रस म रगकर लिखते जाओ।" वस तभी से अवनीन्द्र नाथ ने लेखन भी पकड लिया।

अद्भुत लेखनी की नाक पर रूप-लाभ किया है— राजकाहिनी', 'शकुन्तला 'भूत पत्नीर देशे' 'क्षीरेर पुतुल', बूडो आग्ला' और न जाने किस किस न ! कहानी कहन का विराम नहीं।

इसके अतिरिक्त अतुकान्त कवितायें भी चल रही हैं साथ-साथ, उनके पास-पास हैं छोटे छोटे चित्र ! विचित्रा' म छपती हैं।

गल्प लेखकों का सयुक्त रूप से लिखा एक उपन्यास तैयार होगा— वहा भी अपरूप अवनीन्द्र नाथ की पुकार पडती है।

रवीन्द्र नाथ का नाटक मचस्थ होगा दृश्य सज्जा कौन करेगा ?

अवनीन्द्र नाथ हैं न घर के आदमी, सबसे पहले उन्ही की पुकार पडती है। व नन्दलाल और असित हालदार दोना चेला को लेकर काम मे जुट जाते हैं।

अपरूप अवनीन्द्र नाथ आनद सागर म गोते खाने लगत हैं।

'डाकघर' नाटक की दृश्य-परिकल्पना—

नन्दलाल ने कमाल की सज्जा की है। अतिम निरीक्षण करने आय हैं अवनीन्द्र नाथ स्वय। सब ठीक है—मगर मन मे कुछ बेचनी-सी है। जाते-जाते बुलाकर कहा— 'अरे नन्द बरामदे मे पक्षी का एक पिंजडा लटका दो। पिंजडे का दरवाजा खुला रखो, पक्षी कब उड गया—किसी को पता न चला—ठीक अमल की तरह।'

यही है अपरूप अवनीन्द्र नाथ की सृष्टि।

देश के शिल्पी साहित्यकारो की इस साधन-स्थली दक्षिणी बरामदे म पहला बार मैं कब गया था यही याद करने की चेष्टा कर रहा था। अत म स्मृति पटल पर यह छवि उभर आई।

एक दिन कवि बधु सुनिमल वसु के साथ तीर्थ-यात्रा की थी—भूला बिसरी पक्षी रव भरी किसी भोर मे अथवा पात-झरती शाम को । भोर की बात ही मन म विशेषरूप मे आती है।

दोनो शिल्पी भाई यथारीति अपने-अपने स्थान पर जमे हुए थे। *सुनिर्मल से जितनी भी बातें सुनी थी—हू-ब-हू वसा ही पाया।*

अवनीन्द्र नाथ ने बडे आत्मीय की तरह पास बुलाकर बिठाया। एक

मोटे ब्रश से चित्र को एकदम धो-पाछकर एकाकार किये दे रहे थे। इससे 'टोन की समता आती ह न।

अवाक् होकर मैंने शिल्पगुरु की चित्र बनान की पद्धति कुछ देर गौर की। इस बीच अवनीन्द्र नाथ ने अपन को सभाल लिया। अब वे चित्र को एक ओर से थोडा झुकाकर छोड देंगे। कुछ सूखन पर छोटी तूलिका चलायेंगे।

शिल्पी न स्वय को सिमेट लिया है। आखा का चेहरे का भाव देख कर लगा कि वे अब गल्पो की झोली बस खोलने ही वाले हैं।

सुनिमल की ओर देखकर एक बार थोडा-सा हसे। उससे पहले से ही परिचय है। अवनीन्द्र नाथ द्वारा स्थापित 'इडियन स्कूल ऑफ ओरिएण्टल आर्ट' नामक शिल्प प्रतिष्ठान मे सुनिमल ने कुछ दिन चित्र बनाने म हाथ की मशक्कत की थी। इसके अतिरिक्त, सुनिमल की कविता किस पसद नही ? ठाकुर बाडी का स्नेह-लाभ करने से भी वचित नही हुआ सुनिमल।

सुनिमल ने अवनीन्द्र नाथ के साथ मेरा परिचय कराया। नाम सुनकर उनकी हसी की मात्रा बढ गई। सिर हिलाकर बोले—'हू! तुम्हारी कहानिया तो 'मौचाक' म पढी हैं। अच्छा, अच्छा!"

अवनीन्द्र नाथ बच्चो के लिए लिखी गई रचनाए और बनाये गये चित्र सभी कुछ बारीकी से देखते है। कोई भी चीज उनकी नजरा से नही बचती।

मैंने और कुछ न कहा, चुप रहा। पहली बार आया हू। बोलने नही आया, आया हू सुनन। अवाक होकर उस भलमानुष की ओर देखता रहा। सम्भव है उन्होंने मेरे मन का भाव पढ लिया हो। वे हा-हा कर हस पडे। बोले—"अरे तुम तो बेपरोया (बेपरवाह) हो!" मैं समझ गया कि वे मेरे लिखे किशोर उपन्यास 'बेपरोया' की बात कह रहे हैं।

बहुत बडा जब बहुत छोटे को स्वीकार कर लेता है तो मन मे एक सिहरन पदा होती है—उस दिन सुबह के समय दक्षिणी बरामदे मे बैठकर यह बात मैंने मन प्राण से अनुभव की थी। उसी दिन से अपरूप अवनीन्द्र नाथ के दोस्ता के खाते मे मरा नाम जुड गया। लगा जसे यह व्यक्ति अपना बनाने का जादू-मत्र जानता है।

उस दिन बहुत देर तक बैठकर उनके चित्राकन की पद्धति

शरनचन्द्र आदि अनेक लेखक वहा इकट्ठे होते ।

हम लोग भी लुक छिपकर पीछे की ओर सिकुड कर बैठ जाते । उस रस भोज से अपने को वंचित रखने की इच्छा न होती । अवनीन्द्र नाथ उन सब पाठ सभाओं में उल्लेखनीय भाग लेते । देखता कि गगनेन्द्र नाथ बरामदे की रेलिंग से सटकर चुपचाप खडे हैं । दीनन्द्र नाथ अपना गायन-दल लिये प्रस्तुत हैं ।

रवीन्द्रनाथ शायद अपना नया लिखा नाटक पढ़ रहे हैं । नाटक म जहा जहा गीत हैं—दीनेन्द्र नाथ के नतत्व म शातिनेक्त क लडके-लडकिया आवश्यकता के अनुसार निर्देशानुसार उन्हें अकेले या मिलकर गाकर सुना देते । उस वक्त अवनीन्द्र नाथ एसराज बजाकर उन गीतो को मधुरतर बना देत । ठाकुरवाडी के इन सब अनुष्ठाना म योगदान करने की योग्यता हम लागा म नही थी, मगर जाने कैसे अलिखित अनुमति हमे मिल गई थी ।

बहुत बार हम लोग चुपचाप जाकर बैठ जाते, अवनीन्द्र नाथ किस तरह चित्र बनात हैं दखा करते । किसी किसी चित्र को वे आधा-सा बनाकर अलग रख देत । फिर एक नया चित्र शुरू कर दते । वे कब किस चित्र पर काम शुरू करेंगे, कोइ नही जानता ।

चित्र बनाते-बनाते एकाएक बदकर नाटक लिखना शुरू कर देते । इस मामले म व एकदम मनमौजी व्यक्ति थे ।

बीच-बीच म उनके शिष्य आते—अपनी बनाई छवियां दिखाने के लिए । वे और कुछ नहीं तो उन छवियो मे ही खो जाते । बडे उत्साह के साथ उन चित्रा पर तूलिका चलाने लगते ।

एक बार अवनीन्द्र नाथ अपनी जमीदारी म घूमने गये थे । वहा से नहर-झील-नदी-नाला किसाना के अहात धान के खलिहान पल्ली-अचल का नौकायन बासा के झुरमुट—इस प्रकार के सुन्दर-सुन्दर स्केच बनाकर ल आये । कलकत्ता लौटकर उन चित्रा को पूरा किया । उन दिना व पल्ली अचल क नितान्त नगण्य दृश्यो की भी भूरि भूरि प्रशसा करते । शिल्पी की नजरा म सामान्य भी असामान्य हो जाता ।

शिल्पगुरु का चित्राकन दखन के लिए हम लोग बहुत बार बातें न कर

चुपचाप बैठे रहते। उस वक्त वार्तालाप, रसिकता एकदम बद। स्रष्टा और द्रष्टा एक मधुर आनद-सागर मे डूबे है। हम लोग रह रहकर गौर करते कि अवनीन्द्र नाथ की अगुलिया बडी लबी और पतली है। ठीक शिल्पी की अगुलिया! अवनीन्द्रनाथ की अगुलिया और हाथ की ऊर्ध्व रेखाये देखने के लिए हम लोग बहुत बार झुककर बठे रहत। सम्भव है व हम लागा की गतिविधि देखकर मन ही मन हसते हो।

बीच-बीच म वे पूछताछ करते कि हम लोग क्या लिख रहे है। सुनिमल की रसीली कविताए वे खूब पसन्द करते।

जिन दिना 'बूडो आग्ला' धारावाहिक रूप से 'मौचाक' म प्रकाशित हो रहा था तब हम लोगो मे बडी सनसनी उत्तेजना रही। इसमे एक जगह उन्होन लिखा था "कौन बाडी?—ठाकुर बाडी। अवन ठाकुर—चित्र लिखत हैं।" उन्होने चित्र आकते है, ऐसा नही लिखा। लिखा, चित्र लिखते हं। एसी-ऐसी बातें उन दिनो हम लोगो के मुह पर रहती।

अवनीन्द्रनाथ को लेकर एक अनुष्ठान हुआ उसकी बात हम लोग कभी नही भूल सकते।

क्षितीश भट्टाचाय नामक हम लोगो का एक और दोस्त है। सिलहट का वामन है मगर वगाल के शिशु साहित्य के विषय मे उसका योगदान बिलकुल ही सामान्य हो, सो नही। यह क्षितीश भी अवनीन्द्र नाथ के पास प्राय ही जाता, उनका स्नेह-लाभकर धन्य हुआ था।

क्षितीश के सहयोग से हम लोगा ने लडके-लडकिया के लिए 'मास पयला' नामक एक छोटी मासिक पत्रिका प्रकाशित की थी। पत्रिका हर वगला मास की पहली तारीख को प्रकाशित हो, इसी उद्देश्य से मैंने ही नाम रखा था 'मास पयला'।

क्षितीश और मैं दोना ही सम्पादक थ। वह विज्ञापन, व्यवस्था और मुद्रण का काम दखता, और रचनाए छाटन आदि का काम मेरे सिर पर था।

अवनीन्द्र नाथ ने इस छोटी वाल पत्रिका को विशेष स्नेह की दृष्टि से देखा था। बहुत बार तो उन्होंने इसके लिए अपनी रचनाए देकर हम

उत्साहित किया।

जहा तक याद आता है बगाब्द सन १३३८ म इस 'मास पयला' के माध्यम से ही मैंने बच्चा को सबोधित करते हुए पत्र लिखने की शुरुआत की थी। बगाल के छोटे छोटे लडके लडकियो को सबोधित चिठ्ठी छपती। यह चिठ्ठी बच्चा म बडी प्रिय हुई। इस चिठ्ठी को पढकर व बहुत स पत्र लिखत।

सुनिमल इस पत्रिका म मजेदार मजेदार कविताए लिखता—हसी की कविताए। और हम लोगो का कलाकार (चित्रकार) बधु प्रतुल बद्योपाध्याय चित्र तयार करता। बडे आनन्द और उत्तेजना स भरे होते व दिन। उन दिनो की याद कर आज भी मन खुशी स भर जाता है।

उन दिनो हम लाग छोटे छोटे ग्राहक ग्राहिकाओ को उत्साहित करने के लिए उनकी रचनाए छापते और पुरस्कार की व्यवस्था करते। एक बार हमने योजना बनाई कि मास पयला' की ओर स एक शिशु उत्सव मनाया जाय।

योजना की बात दिमाग म आते ही कमर कसकर काम से जुट गये हम चार लोग—क्षितीश भट्टाचार्य सुनिमल बसु जसीमउद्दीन और मैं। प्रतुल बन्द्योपाध्याय बहुत भागदौड नही कर सकता, वह घर बैठे-बैठे ही तरह-तरह स हमारी मदद करने लगा।

हम लोगो की प्रथम और प्रधान परिकल्पना यह थी कि शिल्पगुरु अवनीन्द्र नाथ को राजा राममोहन लाइब्रेरी म ले आयें और उनकी उपस्थिति मे मास पयला' का यह उत्सव सम्पन्न किया जाय। अवनीन्द्र नाथ उपस्थित लडके लडकियो को कहानी भी सुनायें—यह अनुरोध भी उनसे किया जाय। यह अनुरोध वे मानगे कि नही हम लोग नही जानते थे।

हम चार जन एक दिन धुकधुक करते दिल स जोडासाको ठाकुरबाडी के दक्षिणी तरफ बरामदे म जा खडे हुए। शिशु-उत्सव की बात बताई गई और यह प्रस्ताव भी पेश किया कि व बच्चो को कहानी सुनाय।

आज शायद बहुत लोग नही जानते कि शिल्पगुरु अवनीन्द्र नाथ कमाल की कहानी कहते थे। जिसने हम लोगो को 'राजकाहिनी', भूत पत्नीर देश'

'क्षीरर पुतुल', बूडो आग्ला' आदि सुनाई हैं, वह वयक की तरह रस ले-लेकर कहानी सुनाये—यह स्वाभाविक ही है। ऐसी मधुर भाषा म कहानी सुनात और किसी को नही देखा।

फिर भी हम लोगो के मन मे बडा डर था कि व राजी न होगे। बहरहाल, प्रस्ताव सुनते ही उनका चेहरा निमल आनद स खिल गया। सच पहू म क्या, व बच्चा का हमेशा ही प्रम करत थे। इसीलिए यह सुनकर कि बच्चा का कहानी सुनानी पडेगी वे बच्चे की तरह खुश होकर तुरन्त राजी हो गये। स्वय अवनीन्द्र नाथ का समथन प्राप्त कर हम सब इस तरह घर लाटे जसे विश्व विजय हासिल कर ली।

अब हम लोगा ने कायक्रम को लेकर माथा पच्ची की। कौन गीत गायेगा, कौन कविता-पाठ करगा, कौन मास पयला' का उद्देश्य प्रस्तुत करगा—इसी प्रकार की तरह-तरह की बातें हमार दिमाग मे चक्कर काटन लगी। मुनिमल बोला—' मैं 'मास पयला' के बारे मे एक बडी कविता सुनाऊगा।"

यथा समय हम लोग अवनीन्द्र नाथ को गाडी म बिठाकर राजा राममोहन लायब्रेरी ले आए। बच्चा के उस उत्सव म योगदान कर वे भी बडे पुलकित हुए। इस पास बुलायें—उसकी पीठ पर चपत लगायें—किसी और को गीत गाने के लिए कहें। ठीक जसे आनन्द की वर्षा! ऐसे व्यक्ति को अपन बीच पाकर किसम उत्साह नही आता? हम लोगा न भी बालोत्सव की सफलता के लिए भाग-दौड शुरू कर दी।

सबस पहले, ग्राहक ग्राहिकाआ म से जिनकी रचनाए स्वीकृत हुई थीं, एक एक कर उन्होंने अपनी रचनाए पढी। इस मामले म श्रीमान विमल घाष (वतमान म 'मौमाछि') न भी एक पुरस्कार प्राप्त किया। स्वय अवनीन्द्र नाथ न खुश होकर बच्चा को पुरस्कार दिये।

इसके बाद बच्चा का नृत्य, गायन, कविता-पाठ आदि। बच्चा की तरह अवनीन्द्र नाथ हाथा मे तालिया बजान लगे।

उत्सव का तीसरा अध्याय था कहानी सुनाना। उस दिन अवनीन्द्र नाथ न कहानी सुनाकर बच्चा को बहुत देर तक भुलाये रखा।

उन दिना कलकत्ता मे एस शिशु उत्सव बिलकुल नही होत थे।

वयस्क अनुष्ठाना की अवश्य ही कोई कमी न थी। 'मास पयला' का यह उत्सव अवनीन्द्र नाथ को मध्यमणि के रूप म पाकर हर तरह स सफल हुआ। हम लोग एक विशेष तृप्ति का स्वाद लेकर अपने-अपने घर लौटे।

इस घटना के काफी कुछ दिना बाद एकाएक यह देखने म आया कि चिर शिशु अवनीन्द्र नाथ बच्चा का खेलघर तैयार करने के लिए 'कुटुम काटाम सग्रह करने म जुटे हुए है। यह 'कुटुम-काटाम' क्या वस्तु है थाडा खोलकर बताता हू।

मान लीजिए पड की कोई सूखी डाल है अथवा फेंकी हुई कोई जड है। प्रथम दृष्टया उसकी कोई कीमत नही। मगर शिल्पी की नजर स थोडी सी जाच करें तो लगेगा कि वह डाल एक द्रुतगामी हिरन-जसी दीखती है। और वह बगीचे म फेंकी गई जो सूखी जड है, वह ठीक एक पक्षी जसी है—बत्तख सी। लगता है जसे अपने एक पैर पर भार डाले मछली की ताक म खडी है।

शिल्पगुरु अवनीन्द्र नाथ ने इन्ही सब फेंकी हुई फालतू चीजा को बीन बानकर उठा-लाकर—फिर एकदम नया रूप दानकर—यह 'कुटुम-काटम' नाम दिया।

"अरे, वो देख, माली ने गधराज पेड की वह सूखी डाल फेंकी है न, उसे झटपट उठाकर तो ला। हु-हु, बाबा ! तुम लोग तो जानते नही लाख रुपयो की चीज है वह।"

वही बात कि पागल पारस पत्थर खोजता फिरता है ! बहरहाल इसी तरह की चीजा स अवनीन्द्र नाथ का कुटुम-काटम' ससार बनता चला गया।

बहुत बाद की घटना। एक बार शिशु साहित्य परिषद ने अवनीन्द्र नाथ के अभिनन्दन का प्रस्ताव रखा। मुझ पर भार पडा अवनीन्द्रनाथ के 'बूडो आग्ला' को जात्रा रूप देने का। बगाल के शिशु-साहित्यकार इस जात्राभिनय म भाग लेंगे। हम प्रस्ताव की बात सुनकर खुशी के मारे पागल हो गये। तरह-तरह की योजनाओ के दौर चले। मगर हुआ यह कि साहित्यकारो का एक दल इस जात्रा म अभिनय करने को राजी न हुआ

हारकर जात्रा रद्द कर दी गई। हम लोग निश्चय ही 'बूडो आग्ला' के रिदय' को लेकर बहुत दिन उत्तेजित रहे। बहरहाल, अत मे आर्य समाज हाल मे एक अभिनन्दन सभा का आयोजन हुआ जिसमे बहुत-से साहित्य कार ज्ञानी-गुणी लोग उपस्थित थे।

गुप्त निवास मे अवनीन्द्र नाथ का जन्मदिन मनाया गया। खबर पाकर हम लोग भी अपने दल के साथ वहा जा पहुचे। किसी के हाथ मे फूल है, कोई मिठाई लेकर आया है। किसी के हाथ मे हाथ से बनाई तस्वीर है। शिल्प-गुरु बच्चे की तरह आनन्दमय हो गये हैं। बोले— 'तुम सब लोग आ गये? अच्छा-अच्छा, खुशी-खुशी बैठो सब लोग।' कहते हुए हसते-हसते सबसे उपहार ले रहे हैं।

भीतर से तरह-तरह का नाश्ता आने लगा। हम लोग प्लेट ले लेकर उनके चारो ओर बैठ गये।

वृद्ध, शिशु आनन्द मे झूमने लगे। बोले— तुम लोग आये हो, मुझे कितना अच्छा लग रहा है। अब बूढा हो गया हू, अब और कोई नही आता। बडी दूर आ पडा हू।" वे शेष जीवन मे कुछ समय वराहनगर के गुप्त निवास मे रहे थे।

एक और दिन की बात याद आती है।

'सब पेयेछिर आसर" के लिए शुभकामनाए लेने गुप्त निवास गया था। साथ मे थे स्वामी प्रेमघनानन्द (अरूप)। हम देखकर वे बडे खुश हुए। बोले— 'शुभेच्छा लेने आये हो। मेरे तो अब कुछ लिख देने का उपाय नही, हाथ कापते हैं। अगुलिया वश मे नही रहती।"

फिर भी एक फालतू-सा कागज उठाकर बहुत देर चेष्टा करते रहने के बाद शुभेच्छा लिख दी। शिल्पगुरु की वह शुभेच्छा ब्लॉक बनवाकर मैंने 'पात्ताडि' और सगठनी' मे अनेक बार छापी।

मुझसे बोले—"तुम्हारे 'विष्णुशर्मा का खूब नाम सुना है। अभिनय तो अब देख नही पाऊगा। एक पुस्तक भेज देना, लेटे-लेटे पढूगा।"

दक्षिण कलकत्ता के कालिका थियेटर मे इस वक्त मेरा लिखा नाटक 'विष्णुशर्मा' अभिनीत हो रहा था। राम चौधुरी ने बहुत पैसे खर्च कर यह

नाटक—शिशुनाटक—मचस्थ किया था। साधारण रगालय मे यह पहला शिशुनाटक था।

आज याद आती है—शिल्पगुरु का वह अतिम अनुरोध उस वक्त पूरा न कर सका। उनके प्रति चिरदिन का अपराधी बना रह गया। यही कारण है कि आज उनकी बातें लिखते समय आखें रह रहकर आसुओ से भर उठती है।

रूपकथा के जादूगर दक्षिणारजन

□□

'ठाकुरमार चुलि', ठाकुरदादार चुलि'—और ठान्दिदिर थले' किसने नही पढी ?

वह एक चोली और थैली जिसन वगाल के बच्चा के हाथा म पकडाई है—उमे क्या सहज ही भुलाया जा सकता है ?

ठाकुरमार चुलि' के स्रष्टा उन्ही दक्षिणारजन के साथ वैठकर एक दिन वातें हो रही थी। वात वहुत पहले की है। मगर उनकी व बातें आज भी नही भूल पाया।

प्रश्न मैंन ही उठाया था। पूछा—'अच्छा आपने ये सब सुदर-सुदर रूपकथाए लिखी हैं—ये सब आयी कहा से ? क्या आपकी कल्पना से ही जन्मी ह ?'

मरा प्रश्न सुनकर दक्षिणारजन कुछ देर चुप रहे। तुरन्त ही उनकी स्वभावसिद्ध मधुर हसी से उनका चेहरा भर गया। मेरी ओर सिर उठाकर देखा, फिर शात स्वर म उत्तर दिया—'वह भी एक मजेदार घटना है। धीरे धीरे, एक एक कदम, मेरे जीवन को ढका है। मैंन मोहाविष्ट व्यक्ति की तरह काम किया।"

उत्साहित होकर मै आसन बदलकर वठ गया। दक्षिणारजन न अपने वासस्थान का नाम रखा था साहित्याश्रम'। दक्षिण कलकत्ता के उस साहित्याश्रम मे वठकर ही बातें हो रही थी।

मैंन आग्रह के साथ निवेदन किया 'मैं उस आश्चयजनक घटना के वारे म ही तो जानना चाहता हू। आपकी अपरूप रूपकथाओ की अपरिचित सृजन-कहानी—जिसे कोई नही जानता—तभी ता उसे जानन के लिए मेरा इतना कौतूहल है। रवीन्द्रनाथ के शब्दा म—प्रदीप जलान स पहले वत्ती वनाने की कहानी।"

मेरी बात सुनकर दक्षिणारजन तो जैसे भूले बिसरे अतीत म पहुच गये। खोजत फिरे एक पाल-लगी नाव को। उसी के गभ म छिपा है वह खोया सूत्र! लगा जस दक्षिणारजन की आखा म स्वप्ना के मध गहरा गये।

शरीर स लिपटी अपनी चादर को ठीक कर अच्छी तरह जमकर बठ गये। बोल— तो फिर तुम्ह वह कहानी बता ही दू। कब हू, कब न रहू तुम लोग यह जान लोगे तो सभव है कि अतीत पूरी तरह न खो पायेगा।"

उन्हान शुरआत की—

न जाने कितने दिन पहल की बात है। मन म बस यही बात उठती कि बगाल के कत्थकों के मुह स निकली रूपकथाए क्या या ही काल म स्रोत म बह जायेंगी? क्या कोई उन्हें पकडकर रख नही पायेगा? क्या कोई उन कहानिया और गीता क गुलदस्त बनाकर मालाए, तयार कर घर घर न पहुचा देगा?

एक बच्चा जस नया खिलौना प्राप्त करन के लिए व्याकुल हो जाता है वसे ही मेरा मन हर समय न जान क्या चीज हाथ की मुठ्ठी म बन्द करन के लिए मचलता रहता। गहन रात्रि म शया पर करवटे बदलता रहता नीद न आती। लगता जस कही सोना-माणिक बिखरे पडे है उन्हें बीन-लाकर लक्ष्मी की टोकरी पूरी करनी पडेगी।

' अत म और स्थिर न रह सका, तो मैंने अपने मन स कहा— अरे मन अपरिचित की खोज म चल पड।' "

मैं उत्सुक होकर बोला— आपकी वह योजना क्या थी बताइये ता।"

बताता हू सुनो। उन दिना हम लाग जमींदार ही थे। रुपये-पस का विशेष अभाव न था। एकाएक एक नाव किराये पर ल ली। अपन उद्देश्य के बारे में किसी को कुछ न बताया। पाल चढाकर उस नाव म निरुद्देश्य यात्रा पर चल पडा। हमराही क रूप म कुछक विश्वास-पात्र माझी मल्लाह साथ थ बस उन्हें लेकर निश्चिन्त था।

' दिन भर नौका चलती। किसी हाट-बाजार म उसे रोककर दाल चावल अथवा गुड चिउरा खरीद लेत। उन दिनों दही खूब अच्छा मिलता था एकदम चक्का दही। कभी खिचडी और कभी दही चिउडा केले का

मिला आहार। दिन कसे आनंद में हल्के बादलों की तरह तैरते निकल जाते, तुम्हें समझा नहीं सकता। गले में गुन-गुनकर गीत फूटते। मैं गायक तो हूं नहीं, फिर भी शालिक पक्षी के परों की आवाज के साथ स्वर मिलाते हुए बड़े उल्लास के साथ गाने लगता।

"शाम होते ही जो भी गांव रास्ते में पड़ता, वहीं नौका बांध देते। फिर खोज-खबर लेते कि उस गांव के मुखिया का घर कौन-सा है। और कागज-पत्र बगल में दबाये वहां हाजिर हो जाता।

"मुखिया को बुलाकर कहता — देखो मुखिया जी आज मैं तुम्हारा मेहमान हूं। खाने पीने का कोई इंतजाम नहीं करना। सब कुछ मेरी नाव में है। मुझे तुम सिर्फ यह बताओ कि इस गांव में बूढ़ा-बुढ़िया, दादा-दादी ऐसा कौन है जो 'सलोक' बोल सके, 'शास्तरा' की कथाएं सुना सके रूप-कथाएं सुना सके। उन्हें बुलवाकर अपने चबूतरे पर कहानियों की मजलिस लगाओ। मैं कहानी सुनूंगा, परीकथाएं सुनूंगा और 'सलोक' सुनूंगा।'

"मुखिया मेरी बात सुनकर अवाक् होकर मेरे मुंह की ओर देखता रहता। फिर बोलता —'मालिक भला यह आपकी क्या बात! घर के मेहमान बनेंगे मगर खाना न खायेंगे। शास्तर-कथा मैं सुनाऊंगा आपको। मगर मेरी शर्त भी माननी पड़ेगी। नाव में बैठकर आये हैं, हाथ-पैर धोकर आराम कीजिये। पान-तमाखू खाइये। घर में बहू-बेटियां हैं, माछ का झोल और भात तैयार कर देंगी। हाथ की बनी चीज न खाना चाहें, तो दूध-छाना है। फलहार कीजिये। कहानी सुनाने की व्यवस्था करता हूं। हमारे गांव के साना दद्दा है—एक रूपकथा का जाल फैला दिया, तीन रातें बीत जायेंगी।'

'मैं उत्तर देता—'तो दो-तीन रात ही रहूंगा, तुम्हारे गांव में। खिलाने पिलाने के चक्कर में तुम्हें नहीं डालूंगा, मुखियाजी! मैं तो बस जी भरकर रूपकथाएं सुनना चाहता हूं।'

'इस प्रकार किसी गांव में सोना दद्दा, किसी में पुरान मुखिया' कहीं पाचो दादी, कहीं भट्टाज (भट्टाचार्य) मशाइ। न जाने कितनी रूपकथाएं सुनाइं। डायरी भर लाया। यहां तक कि उनकी गीत-कविताएं। इसी तरह संग्रह की हैं अरुण वरुण किरणमाला, बुद्धू भूतुम की कहानी, पाषाण-

पुरी की कहानी, राक्षस-खाक्कस की गल्प और सब दुनिया भर की रूप कथाए । उन्ही म से छाट-छूटकर, बीन-चानकर तिल तिलकर खडी की है ठाकुरमार झुलि' ठाकुर दादार झुलि और 'ठानदिदिर थले'।

"आधी-वर्षा की चिन्ता नही की, रास्त के कष्टो स डरा नही, भूख का हसते हसत सहन किया। रूपकथाए सुनान वाला की भाषा को ज्या का त्या बनाये रखन की बराबर कोशिश की है।

परम विस्मय के साथ दक्षिणारजन की यह अभियान-कहानी सुन रहा था। व मेरी ओर दखकर मद मद मुस्करा रहे थे। थोडा रुककर बोल—"एक और बात तुम म से अनेक लोग नही जानत "

मैंने उत्सुक होकर कहा—' कौन सी बात, बताइये न ?'

उन्होने कौतुक के स्वर म उत्तर दिया— 'ठाकुरमार झुलि के चित्र। अच्छा बताओ, व चित्र किसन बनाये है ?"

इस बार मैं वाकई मुश्किल म पड गया। समसामयिक किसी भी शिल्पी के बनाय नही हैं यह मैं अच्छी तरह जानता था। मगर किसके बनाये हुए है यह बात अलग स कभी नही सोची। चित्र रूपकथाओ क स्वप्नमय राज्य क साथ इतने अच्छे तरीके स मिल खप गये है कि उन्हें किसी तरह भी अलग नही किया जा सकता। जस दूर के पहाड और मघ—किस कमाल के साथ सटकर खडे रहते है। कौन सा पहाड है, कौन-सा मेघ पहचानना मुश्किल हो जाता है।

मुझ दुविधा म पडा देख उन्हें बडा मजा आया। अत म सारी समस्या का समाधान कर बोले—"सारे चित्र मेरे ही बनाये हुए हैं। कविगुरु रवीन्द्रनाथ भी उन्हें दखकर बडे खुश हुए थे।

मैंन अवाक होकर उत्तर दिया— 'आप चित्र भी बना सकते हैं ? आज तक पता न चला।'

दक्षिणारजन की आखो मे कौतुक खेल रहा था। व बोले—"गौर करना कि किसी भी चित्र के साथ मैंन अपना नाम नही दिया। तुम लोगो को धोखे म रखने म भी तो एक आनद है।'

मैं बोला— यह बात सही है। समसामयिक किसी भी शिल्पी का चित्र हो मैं दखकर बता सकता हू कि वह किसका बनाया है। अवनीन्द्र

नाथ नन्दलाल, असित हालदार यामिनी राय, सतीश सिंह, पी० घोष—यहा तक कि हमारे वक्त के पी० बनर्जी, पूण चक्रवर्ती, फणी गुप्त समर दे, धीरेन बल—आप किसी का भी चित्र दिखाइये म ठीक-ठीक बता दूगा कि यह चित्र किसकी तूली से जन्मा है। मगर 'ठाकुरमार झुलि' के चित्र एकदम अलग है। अन्य चित्रा के साथ मिलाना सभव नही। वे तो जैसे स्वप्नमय रूपकथाओ के लिए ही तैयार हुए है।'

दक्षिणारजन मद-मद मुस्करा रहे थे। बोले— ठाकुरमार झुलि की एक और बात शायद तुम लोगा न लक्ष्य नही की ?"

मेरे मन म नये सिरे मे उत्सुकता जगी। बोला— 'और किस बात का उल्लेख कर रहे ह आप ?"

व बोले—"रूपकथाओ के चरित्रो के मुह पर जिस प्रकार की बाते मैंने लाकर रखी है उन्हे थोडा अच्छी तरह टटोलकर देखा है ?"

मैं बात को ठीक से न पकड सकने के कारण उनके मुह की ओर देखता रहा। उन्होंने जवाब दिया—"तो फिर सुनो। मान लो राजा कोई बुरी खबर सुनकर जल्दी से अन्त पुर से निकलकर आ रहे है। राजा हैं राज्य के प्रधान, उनके मुह से गम्भीरता भरी बात कहलानी होगी। तभी मैंने राजा के मुह पर रखा—के ? के ? (कौन ? कौन ?)। अब लो रानी की बात। रानी है नारी, राज्य म सभी की मा। उनके मुह से महीन और मधुर बात का निकलना ही स्वाभाविक है। तभी उनके मुह पर मैंने बिठाया—कि ? कि ? (क्या ? क्या ?)। पढकर देखो, अच्छी तरह समझ जाओगे।"

सुनकर मैंन कहा—"आप ठीक कहते हैं, इतनी बारीकी से ता मैंने नही पढी।"

दक्षिणारजन फिर बोले—' छोटी छोटी कविताए पढकर देखो। जिसके मुह पर जैसा ठीक बैठता है वसा ही मैंन रखा है। दुखिया मा अपने लडके को खोकर दुखी मन से आक्षेप करती कहती है—

भूतुम आमार बाप—
कि करेछि पाप ?

कौन पापे छेडे गलि—
दिये मनस्ताप।"

(भावार्थ भूतुम मेरे बच्चे, मैंने क्या पाप किया है? किस पाप की वजह स तुम मुझे इतना दुखी कर छोड गये?)

इस कविता के माध्यम से क्या मा का मनस्ताप मूतरूप धारण कर सामने नही आता?"

मैं बोला— इस विषय म और कोई सदह नही। मगर असलियत यह है कि हम लाग पढत वक्त गो-ग्रास क रूप म गल्प निगलते हैं—इतना सोच विचार कर थोडे ही पढते हैं?"

सुनकर दक्षिणारजन ने उत्तर दिया— 'इसी तरह ठाकरमार झुलि का पृष्ठ दर-पष्ठ सजान म मुझे रात दिन यथेष्ट परिश्रम करना पडा है।"

मैंने सिर हिलाकर कहा— 'अब मैं बात को ठीक से समझ रहा हू।"

मेरे लिए तसल्ली की बात यह है कि ठाकुरमार झुलि को शुरू से ही लोगों ने एकदम अपनी चीज मानकर ग्रहण किया। अच्छा बताओ, ठाकुरमार झुलि मे रवीन्द्रनाथ की भूमिका पढी है?"

मैंने उत्साहित होकर उत्तर दिया—"वसी सुदर सरस भूमिका मैंने और नही देखी। आपकी रूपकथा का मूल्य बहुत बढ गया।'

दक्षिणारजन ने सिफ इतना ही कहा—' भला यह भी कोई कहन की बात है!"

इस बार मैंने कौतुक कर कहा— 'अब मैं आपको एक गल्प सुनाऊगा। बगाल के पल्लीग्राम के एक किशोर को आपने स्कूल से भागने क लिए बाध्य किया था—उसी की मजेदार कहानी है।"

'ऐसी बात? तब तो जरूर सुनूगा।" कहकर वे ठीक से आराम से बैठ गये। बोले— अब सुनाओ अपनी कहानी "

और मैंने एक बार उनके मुह की ओर देखकर वह मजेदार कहानी शुरू की।

स्वपनबूडो के शशव की कहानी—

"उस बार मामा के यहा एक बहुत बडी नाव तयार हो रही थी। बहुत बार हम लोग उस पर चढकर खेला करत। मामा के घर के भीतरी

गल्प के बाद गल्प। छवि, छडा (कविता) और मजेदार कहानी—ये सब पाल-लगी नाव की तरह मेरे मन को भीतर गहराई की ओर खींचकर ले जाने लगे।

तपश्चात् कब तो मैं अंतिम पृष्ठ पर पहुचा और कब नाव से उतरकर घर के भीतर घुसा—यह जरा भी याद नही। सिर्फ इतना ही याद है कि बंगाल के एक छोटे से अपरिचित गाव का एक सामान्य किशोर 'बलि' की मधुरिमा पर मुग्ध होकर भूख प्यास भूल गया था, भूल गया था स्कूल जाने की बात, भूल गया था घर पर मार खाने का डर। उस दिन यह लडका अकस्मात् हर चीज के विरुद्ध 'हडताल' की घोषणा कर पक्षीराज की पीठ पर चढकर अनजाने पथ विपथ पर चपत हो गया था।

आज इस बात पर विचार करना होगा स्कूल से पलायन करने के लिए जिम्मेदार उस दिन का वह आत्मभोला किशोर था अथवा उस अनजान जगत् का पथ-प्रदर्शक—शिशुमन का अनोखा मायावी जादूगर—दक्षिणारंजन ? "

मेरी यह कहानी सुनकर दक्षिणारंजन मंद मंद मुस्कराने लगे। बोले—"तब तो घाट घाट से बीनकर लाये वे मणि-मुक्ता सार्थक हो गये, क्या ?"

मैं बोला—"इसमे और क्या सदेह है ?' फिर थोडी देर चुप रहकर मैंने धीरे धीरे कहा— मैंने यह सत्य कहानी अपनी 'स्वपनबुडोर शशव' पुस्तक म लिखी है।'

दक्षिणारंजन के मुह की वह मधु मुस्कान अभी तक लुप्त नही हुई थी।

दक्षिणारंजन का एकमात्र पुत्र रविरंजन मेरा बडा ही स्नेह-पात्र था। बडे छुटपन से ही शिशु-साहित्य के प्रति उसमे एक ममत्व-बोध पैदा हो गया था। किशोरावस्था से ही वह तरह-तरह की कविताए और गल्प लिखने लगा था। और भी बडा होने पर उसने 'रूपकथा' नाम की एक बाल मासिक पत्रिका प्रकाशित की। बंधुवर सुनिमल बसु और मैं उस पत्रिका को प्राय ही रचनाए देकर श्रीमान रविरंजन के काम म सहयोग करते। रवि भी अनुगत भाई की तरह सभा-समितियो म, यहा-वहा हम लोगो के साथ-साथ घूमता फिरता।

एक वार सब पेयेंछिर आसर की आर म दक्षिणारजन का अभिनदन किया गया। मैं स्वय उन्हे लेन गया। एकदम बच्चे की तरह बडे खुश। गाडी काफी दूर आ गई। एकाएक मेरे कान म बोले—'मुझे ले तो जा रहे हो—लडके-लडकिया की भीड भी होगी?'

मैंने धीरे से हसकर कहा—"वहा पहुचकर देख लीजिए।"

उस दिन पूरा यूनिवर्सिटी इस्टीटयूट बच्चो की भीड से एसा लग रहा था जैसे कोई खिले फूलो का वगीचा हो। दक्षिणारजन अवाक्। बोले—"इतने लडके लडकिया मेरा अभिनदन करने आये हैं?'

मैंने धीमे गले से उत्तर दिया—"ये सब आपको चाहते हैं न।"

मैंने गौर किया—रूपकथाओ के जादूगर दक्षिणारजन की आखें भर आई हैं। मेरा हाथ दबाकर अस्फुट स्वर म बोले—"इस मुहूर्त मेरी मृत्यु भी हो जाय, तो मुझे कोई क्षोभ नही।"

नाट्याचार्य शिशिर कुमार

□□

वह बहुत पहले की बात है—जब आर्ट थियेटर ने रातोरात द्विजेन्द्र लाल की 'सीता' का अभिनय स्वत्व खरीद लिया था। इस पर अक्लान्त कर्मी स्वप्न द्रष्टा शिशिर कुमार जरा भी हतोत्साह न होकर नाट्यकार योगेश चौधुरी से नयी 'सीता' लिखवाकर मनमोहन थियेटर मे अभिनय करने लगे।

मनमोहन थियेटर बीडन स्ट्रीट और सेन्ट्रल एवेन्यू के सगमस्थल पर था। अब उस थियेटर को गिराकर सेन्ट्रल एवेन्यू ने अपना रास्ता बना लिया है। मगर उस जमाने म देश के नाट्यरसिक लोग बडे बडे कलाकारो की आवाज सुनने के लिए इसी मनमोहन थियेटर मे आय दिन भीड किये रहते थे। उन दिना हम लोग कॉलेज मे पढते थे। तब तक शिशिर कुमार के साथ साक्षात् परिचय नही हुआ था। सही माने मे जान पहचान हुई नाट्याचार्य के अमेरिका से लौटकर आने के बाद।

शिशिर कुमार के नतत्व म 'रगमहल' रग मच पर योगेश चन्द्र की 'विष्णुप्रिया' का अभिनय होने वाला था। घूमने वाले मच का तैयार करने का दायित्व लिया अमेरिका से लौटे सतु सेन ने। काम मे सदा व्यस्त रहने वाले इन सतु सेन न ही शिशिर कुमार से मेरा सर्वप्रथम परिचय कराया था।

उस वक्त चित्र बनाना ही मेरा पेशा था। कुछ दिन पहले ही सरकारी शिल्प विद्यालय से कामर्शल आर्ट सीखकर आया था। थियेटर सिनमा के पोस्टर बनाता, नजरुल, अचिन्त्य, प्रबोध आदि तरुण लेखको की पुस्तको के आवरण चित्र तैयार करता, और शाम को रूपवाणी के प्रचार-दफ्तर का सचालन करता। चित्र बनाने की बात सुनकर शिशिर कुमार खुश हुए। बोले—"बीच-बीच मे आया करना।"

स्वय शिशिर कुमार स्वागत-आह्वान करें—उन दिना इससे वडा सम्मान और क्या हो सकता था ? उस वक्त सस्कृति के मूर्तिमान विग्रह थे शिशिर कुमार। प्राय प्रति सन्ध्या को उन्ह घरकर मजलिस वैठती थी। वहा हाजिर होते सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय, शिल्पी चारु राय, शिल्पी यामिनी राय प्रभात गगोपाध्याय हमेन्द्रकुमार राय मणिलाल गगोपाध्याय, नृपेन्द्रकृष्ण चट्टोपाध्याय, शिल्पी रमेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय तथा और भी वहुत से ज्ञानी गुणी लोग। इन गोष्ठियो म देशी विदेशी साहित्य नाटयकला आदि पर जो विचार विमश होता चर्चा चलती, उसका अन्त न था। राज शाम को वहा उपस्थित रहकर लगता कि अब बस ज्ञान का भण्डार पूरा हो गया।

उन दिना हम लोग थे श्रोता। वात नही करते थ। सिर्फ इतना ही था कि उस गुणी जन सभा मे एक ओर चुपचाप अपने लिए जगह कर लते। जिस दिन काम धाम के चक्कर म आना न हो पाता उस दिन रात को सोते वक्त लगता कि आज का दिन बेकार गया।

इसके कुछ दिना बाद शिशिर कुमार ने एक दिन मुझे बुलाया। उनका सादर आह्वान ! शाम को जाकर हाजिर हुआ। लगा जसे सौर-जगत की सभा हो रहा है। शिशिर कुमार को घेरकर तत्कालीन दिक्पाल चर्चा परि-चर्चा म मग्न हैं।

मुझे देखकर नाट्याचाय वडे प्रफुल्लित हुए। बोले—"आइए नियोगी महाशय, मैंने एक नया काम शुरू किया है, आपको मदद करनी होगी।" शिशिर कुमार की मदद करूगा, यह ता अपने ही गौरव की बात है।

शिशिर कुमार उस विचार-गोष्ठी से उठकर आए और मुझे एक ओर आड मे ले गये। बोले— रवीन्द्रनाथ की 'विचारक' कहानी का फिल्मा-कन कर रहा हू। दश्य-परिकल्पना का सारा दायित्व आपको लेना पडेगा।"

इससे पहले मैंने टालीगज के सिनेमा राज्य म थोडी-बहुत दृश्य और परिच्छेद परिकल्पना की थी, इसलिए जरा भी चिन्ता न कर मैंन उत्तर दिया— अवश्य आपके किसी काम आ सकता हू, तो सचमुच अपने को गौरवान्वित समझूगा।'

शिशिर कुमार का वह एक अनुरोध मेरे लिए कितनी बडी चीज थी, आज इतने दिन बाद ठीक स समझा नहीं सकता।

इस 'विचारक' गल्प के चित्ररूप और दश्यपट को ले मन
सध्याए शिशिर कुमार क सान्निध्य म बिताई है। उस 3
ज्ञान का परिचय पाकर विस्मित हुए विना नही रह सका।
ही क्यो। साथ ही साथ आनद वितरण। मैं जानता हू कि
नही। रवीन्द्रनाथ की विचारक न मूक छवि क रूप म
था। आज के दशका मे स वहुत स इस बात को नही जानते।
शिशिर कुमार न रग महल और स्टार थियटर म 3
पूरी कर कुछेक दिन प्रवोधचन्द्र गुह क साथ नाट्य निकेत
योगदान किया था। यही पर पहली वार नीहारबाला औ
उनसे अभिनय शिक्षा प्राप्त की।

शिशिर कुमार किस तरह अभिनय की शिक्षा देत थ य
प्राप्त करने का हम लोगो को सुयोग मिला था नाटयनिकेत
रोज शाम को छोटे-वडे सभी को अभिनय-कला सिखाते।
प्रहरी और द्वारपाल स लकर राजा रानी बेगम-बादशाह
बडी निष्ठा के साथ शिक्षा प्रदान करते। इस काम मे उन्
अथवा विरक्त होते नही देखा।

कोई दूत किस तरह मच पर प्रवश कर झुक कर आदा
के आगे खडा होगा—यह बात वे स्वय कितनी वार आ जाक
से देखते, इसकी गिनती नही की जा सक्ती थी। हम लोग
बैठे उनकी यह शिक्षा प्रणाली देखत कई बार तो दूत पर झु
उठते। मगर शिशिर कुमार स्वय निर्विकार। उनके चेहरे मात्र
झुझलाहट नही। जब तक शिल्पी सवदोष मुक्त न होगा
नही छोडेंगे। उनका धैय दखकर हम लोगो के विस्मय की सी
जो लोग नामी शिल्पी थे इस मामल म उनकी भी रिहाई
पर मार दूगा'—इस बात को वे जी-जान स घृणा करते।
अधिकार करो'—यह उनका मूलमत्र था।

अध्यापन के काम मे जैसे वे छात्रो से अभ्यास कराते
मच पर वे विभिन्न शिल्पियो स काम करा लते।

रानीबाला ने उन्हे गुरुरूप मे प्राप्त किया था तभी तो। रवर्ती जावन

म व अभिनय के क्षत्र म इतनी ख्याति अर्जित कर सकी था। इस तरह जान कितन शिल्पियो को ठोक पीटकर उन्होंने आदमी बनाया था, यह बात बहुत से नाटयप्रमी नही जानत। शलेन चौधुरी वानु बद्योपाध्याय, अर्धेंदु मुखोपाध्याय जीवन बसु नीतीश मुखोपाध्याय—अनक लोग उनके छात्र थ।

खाली वक्त गुजारने का उनका बिलकुल ही अलग ढग था। विश्वरूपा मच के पिछवाडे म जो क्वाटर है उसी म शिशिर कुमार रहत थ। वहा कुछ दिन वास किया है नाटय निकेतन के प्रबोध चन्द्र गुह ठाकुर ने। तत्पश्चात नीड बाधा है नाटयाचाय शिशिर कुमार न।

मैं बीच बीच म शिशिर कुमार क पास इस क्वाटर पर जाता। जाता तो देखता कि शिशिर कुमार एक लुगी पहन आराम कुर्सी पर अथवा कैनवस की कुर्सी पर लटे विदेशी नाटक पढ रहे है। मुह स लगा है मोटा चुरट। इस घरलू परिवेश म उन्हे जब-तब दखने का सुयोग मिला है, तभी उनका यही चहरा हर वक्त याद आता है। इस मौके पर वे तरह-तरह की मजदार बात करत। देशी विदेशी कविताए पाठ कर सुनात। रवीन्द्रनाथ की अनक कविताए उन्हे कण्ठस्थ थीं जब-तब इच्छानुसार आवृत्ति कर हम लोगो को मुग्ध कर देन।

काव्य के माध्यम स कल्पना का जाल बिछाकर अलस स्वप्न दखाके व सुनहले रुपहले दिन हम लोगो के जीवन मे आर लौटकर न आयेंगे।

शिशिर कुमार जिसस स्नेह करत उस अभिनय देखन के लिए पास देने क मामले म वे एकदम मुक्तहस्त थ। इस विषय म मैं स्वय एक प्रधान साक्षी हू। बधु-बान्धवो को लेकर उन्हे मैंने किस किस तरह परेशान किया है—आज जब सोचन लगता हू तो सकोच की सामा नही रहती। मगर मजे की बात यह कि उन्होंने मुझ कभी निराश नही किया। मेरी ओर स हर तरह के झपट झमेले उन्होंने हसत हसत सहे हैं।

इन्ही दिनो एक बार मैं एक प्रस्ताव लेकर उनके पास पहुचा। प्रस्ताव था—वे अपनी जीवन गाथा बचपन स सुनाय, मैं नोट कर लूगा। सुनाय कहानी के रूप म। फिर मैं गल्प के रूप म ही उसे सहज भाषा म लिखकर उन्हे खाली समय म सुनाऊगा। वे उस लिखित रूप को स्वीकार कर लें, तो फिर आगे कहानी सुनायें। इस प्रकार उनकी विचित्र जीवन-गाथा गल्प के

माध्यम से लिखने की मेरी इच्छा थी। कोई शोध नहीं, गल्प जीवनी।

शुरू में वे सहमत न हुए, पर अंत में मेरे अनुराध पर मान गये।

बाद में उनके कुछेक चेले-चाटों के जबरदस्त आपत्ति करने से यह योजना गुडगोबर हो गई। मैं यदि कमर कसकर डटा रहता, तो शायद शिशिर कुमार के जीवन की अनेक मजेदार बातें मालूम करने में सफल होता।

शिशिर कुमार को बच्चो के बीच लाकर कहानियां कहलवाने की भी मेरी एक योजना थी। इस योजना अनुरूप अवनीन्द्र नाथ से शुरू कर बंगाल के अनेक प्रवीण ज्ञानी गुणी साहित्यकारों और वैज्ञानिकों को आमंत्रित कर बच्चो के बीच मे बिठाकर मैंने गल्प की मजलिसें शुरू की थी। शिशिर कुमार को भी राजी कर लिया था मगर तथाकथित सगी-साथियो के षड्यंत्र से मेरा वह संकल्प पूरा नहीं हुआ।

शिशिर कुमार के विषय मे मेरा एक और कटु अनुभव रहा। हम लोगो के यहा एक कहावत है कि नष्टचन्द्र (भाद्रमास की काई भी चतुर्थी) देखने से बदनामी मिलती है। मगर मेरे बिना नष्टचन्द्र देखे ही एक बार मेरी निन्दा होने लगी—शिशिर कुमार की दैनन्दिन सभा मे! बात पर विचार किया जाय तो बडी हास्यास्पद है, इसमे सदेह नही। किसी एक समालोचक ने 'श्री अ' नाम से एक सामयिक पत्रिका मे बडे कडे शब्दो मे शिशिर कुमार की समालोचना की थी। शिशिर कुमार की मजलिस मे नित्य आने जाने वाले एक-दो लोगो ने इस विषय मे शिशिर कुमार के कान भर दिये। उन लोगो ने उन्हे यही समझाने की चेष्टा की कि यह 'श्री अ' मेरे अतिरिक्त और कोई नही। बाद मे अवश्य ही शिशिर कुमार अपनी भूल समझ गये थे और वह समालोचना मेरी लिखी नही थी—यह बात नि सदेह जानकर लज्जित भी हुए थे। किसी किसी उत्सव-अनुष्ठान मे मुझे शिशिर कुमार के साथ जाने का और भाषण देने का सौभाग्य भी मिला है। 'माइक' को वे कभी भी अच्छी नजर से न देखते। उसे एक ओर रखकर कहते—'मैं अमायिक (अ-माइक) व्यक्ति हू, इसलिए मुझे माइक की जरूरत नही।'

कोई अभिनदन की बात करने आता, तो उनके सकोच की सीमा न

रहती। इसीलिए वे कही जाकर अभिनदन स्वीकार करने के लिए बिलकुल अनिच्छुक थे। प्रदश काग्रेस कमटी गुणीजन-अभिनदन मे उनके सम्मान का आयाजन किया, ता पहल व किसी तरह भी राजी न हुए। बाद म अवश्य सभी न मिलकर अनुराध किया तो वे अभिनदन ग्रहण करना अस्वीकार न कर सक।

इस प्रीतिप्रद अनुष्ठान मे सभापतित्व किया था—नटसूय अहीन्द्र चौधुरी न। मच और छाया जगत् के अधिकाश शिल्पी इस समारोह म उपस्थित थ।

एक राष्ट्रीय रगालय स्थापित करन की बात वे प्राय ही करते। उनके जीवन के शप चरण म जब सरकार की आर से बहुत-सी शर्तों से जुडा प्रस्ताव आया तो उन्हान दायित्व लेन स सीधे ही मना कर दिया। मिल्टन की एक बात वे प्राय ही उद्धत करते— Better to reign in Hell than to serve in Heaven' (स्वग म नौकरी करने से बेहतर है नरक म राज्य करना)।

शिशिर कुमार के साथ अतिम भेंट हुई काशी पुर एक शादीवाल घर मे। गहस्वामी ने मुझे बुलाकर कहा—'आप शिशिर कुमार स बातें कीजिये, मैं तो भागदौड म लगा हू।" और फिर वे हम लोगा को एक निजन कमरे मे बिठाकर चले गये। अनेक विषया पर चर्चा हुई। बाता के सिलसिल म मैंने उनसे पूछा— आप राष्ट्रीय पुरस्कार लन के लिए इतने अनिच्छुक क्यो है ? उन्होन एक मुहूत मेरे मुह की तरफ देखा फिर झुझलाहट के स्वर म उत्तर दिया— 'Oh'! that is really vulgar" (अर, वाकई भद्दा!) उनका परिकल्पित राष्ट्रीय रगालय रूप-लाभ नही करेगा, इधर सरकार उन्हे एक तीसरे दर्जे का खिलौना दना चाहती है—यह व्यवस्था उन्हे असह्य लगती। असुदर योजना वे कभी सहन न कर पात। शिशिर कुमार जीवन भरण म सत्य शिव सुन्दर के पुजारी थे।

रसिक-सुजन परशुराम

□□

उन दिना हम लोगो की छात्रावस्था चल रही थी। एक दिन अकस्मात् 'भारतवष' क पृष्ठ पर एक कहानी नजर पडी। शीपक था—'श्री श्री सिद्धेश्वरी तिमिटड'। सिफ कहानी नही साथ मे सगत कर रहे थे शिल्पी यतीन सेन के बनाये मजेदार चित्र। उन दिना 'प्रवासी' और 'भारतवष' पढे बिना खाना हजम नही होता था। परशुराम की लिखी इस कहानी 'सिद्धेश्वरी लिमिटेड' ने मन मे एक चमक पैदा कर दी। इसके बाद इधर-उधर के दस पाच झमेलो म पडने से परशुराम की वात एक तरह से मन से निकल ही गई। मगर कब तक भुलाये रखता। इसी बीच एक-एक कर दो पुस्तकें हाथ लगी—'कज्जली' और 'गड्डलिका'। आवरण पृष्ठ से लेकर अत तक ये मजेदार पुस्तकें काटू नो से भरी थी—शिल्पी वही यतीन सेन। सब काम छोडकर पुस्तके चाट गया।

पहले से क्या पता था—उन पुस्तका के भीतर इतना विस्मय छिपा हुआ है। वह *'लबक्ण' जिसे किसी दिन भी न भूल पाऊगा,* चिकित्सा-सक्ट' का कौतुकभरा हादसा, 'भुशडीर माठ' की अभिनव कहानी, 'कचि ससद' का कगलापन विरिचिबाबा' का गुरवाद—और भी न जान कितना मजा ठसाठस भरा है उन दोना पुस्तको मे। पढकर लगा कि ऐसी कहानिया, ऐसा कौतुक और श्लेप अन्यत्र नजर नही पडा। समाज मे जो भी दोष हैं, कमिया हैं, आदमी के भीतर जो धूत शैतान घर किय बठा है—ये सब मुखौटा हटाकर दिखाये गये है। लेखन कितना पैना है, कहन का तरीका कितना स्वच्छ है। कही भी इतना-सा कुहासा नही जमने पाया। जादूगर सरकार की एक्स रे आखा का पता चला था बहुत बाद मे। मगर परशुराम की लखनी के लिए समाज के किसी भी दोष एब की बात अपरिचित नही। कचि ससद' मे उन्होन नखरीले प्रेम सबध को भी चाबुक मारी कॉलेज-

कॉलेज म लालिमा पाल (पु०) की खोज होने लगी थी।

यह लेखक कहा रहता है ? देखन म कसा है ? परिचय करन की इच्छा जगी। इससे पहले 'वारोयारी उपन्यास' के चित्र देखकर साहित्यकार को पहचान चुका था। उनम 'परशुराम' की खोज-खबर न मिली।

और भी कुछ दिन निकले। रवीन्द्रनाथ की एक कविता 'प्रवासी' म नजर पडी। उसम कवि न कहा है 'नीद स उठन पर यदि कोई वागी नजर पडती है तो हम कोई आश्चय नही होता, लेकिन रातोरात घर के आग कोई विशाल वट वक्ष खडा हो जाय तो आश्चय की सीमा नही रहती।' कविगुरु न सच ही तो कहा है! हमार मन की बात छीन ली। इस लखक को दखना पडेगा।

मगर मौके ही न मिले। बहुत दिन बाद सुयोग हाथ आया। रायमोहन लाइब्रेरी म 'चिकित्सा-सकट' का अभिनय होन वाला था। प्रवेश-पत्र की व्यवस्था हो गई। जा पहुचा। एक व्यक्ति न बताया कि व हैं राजशेखर वसु यानी 'परशुराम'। हत्तेरी! ये तो 'कचि ससद' के नबुड मामा की तरह ही गभीर हैं! इन्होंने लिखी हैं ये सब मजेदार कहानिया! हो ही नही सकता।

अभिनय शुरु हुआ। भाग ले रह थ—ब्रजेन बद्योपाध्याय, रगीन हालदार, अशोक चट्टोपाध्याय, हमन्त चट्टोपाध्याय इत्यादि। मैं जितना अभिनय देखता, उससे ज्यादा परशुराम की ओर देखता। मगर वह मूर्ति भी किस पत्थर की बनी थी? नाम को भी हिलना-डुलना नही। अभिनय देखकर दशक हसी के मारे पागल हुए जा रहे हैं, मगर ये एकदम निर्विकार!

परशुराम को देखकर मैं ठडा हो गया। भला एसा आदमी इतनी रसदार चीज कस लिखता है।

और भी दिन निकले। हम लोगो ने पढी, 'कज्जली', 'हनुमानर स्वप्न' 'धुस्तरी माया' इत्यादि। पूजा विशेषाक खोलकर सबसे पहले परशुराम की रचना ही खाजे।

मरी एक मामी हैं—बैंगाल कमिकल के सतीश दास गुप्त की एकमात्र लडकी तरलिका सन। उनसे परशुराम के बार मे पूछताछ की। उन्होंन भी

कहा कि आदमी बडा गम्भीर है, तोलकर बात करता है। इसी बीच शिल्पी यतीन सेन से भी परिचय हो गया था, उनसे भी राजेश्वर बाबू के बारे में मालूम करता रहता। इसी तरह अनजाने ही वक्त गुजरता रहा। हम लोग भी बडे हो गये।

उस वक्त राजेश्वर वसु की 'चलन्तिका' तैयार हो रही थी। बधुवर सुनिमल वसु आकर बोले कि मैंने प्रूफ देखने का दायित्व ले लिया है। उन्हीं से परशुराम की सारी खबरें मिल जाती। परशुराम पूरी तरह से विज्ञान के साचे म ढले हुए हैं, कहीं भी इतनी-सी भी ढील-ढाल नहीं। अपना काम स्वय करते हैं। सुई-धागा तक उनके हाथ के पास रहता है। प्रफुल्लचन्द्र के मत्रशिष्य हैं। तभी हर काम मे स्वावलम्बी हैं। वैज्ञानिक होते हुए भी रसिक-सुजन। बात के पक्के।

और भी कुछ वर्ष बीत गये। इस बीच हम लोगो ने भी अपने गाव में परशुराम का 'चिकित्सा-सकट' मचस्थ किया। फिर 'पेयेछिर आसर' के शिल्पियो न एक बार 'भुशण्डीर माठ' का अभिनय कर सभी को अचम्भे म डाल दिया।

इन्ही दिनो मेरे दिमाग म यह बात उठी कि बडो के लिए एक हास्य-मासिक 'खेया' नाम स प्रकाशित किया जाय। सोचा नही कि किया नही। मगर रवीन्द्रनाथ उन दिनो हमारे बीच न रहे। समस्या थी—पत्रिका का शुभारम्भ किसकी कविता लेकर करें। 'परशुराम' को पत्र लिखा। उन्होने अपने स्नेह से मुझे वचित न किया, एक नयी कविता लिखकर भेज दी। उसी कविता को विभिन्न चित्रो से चित्रित कर प्रकाशित किया।

तत्पश्चात् एकाधिक बार उनसे मिलने गया। एक बार गया—अपनी एक हास्य पुस्तक 'रातो भग वगदश लवू रगभरा' उन्हे समर्पित करने का प्रस्ताव लेकर। वह किसी तरह भी राजी न हुए। बोले—"मैं तो कारीगर हूं। साहित्यकार कैसे हो गया? लेखन तो मेरे खाली वक्त का मनोविनोद है।" मगर मैं भी चेंटू था। अन्त म वह पत्थर-मूर्ति हिला। उन्हे सहमति देनी पडी।

मैंने एक बार उनसे पूछा—"आप लिखते कब हैं?" वे बोले भरा लेखन मौसमी फूल खिलाना है। शीतकाल म लिखता हू। फिर सारे साल

चलता है आर्डर सप्लाई। गर्मियों में लिखने में बड़ा कष्ट होता है।"

एक दूसरे मौके पर उनके साथ बड़ी मजेदार बात हुई। बहुत पहले की घटना है। तब तक परशुराम ने थाने में प्रशंसा-पत्र देने शुरू नहीं किए थे। मैंने मजाक में कहा— मुझे एक प्रशंसा-पत्र दे देंगे? उनके होठों पर मंद मुस्कान दिखाई दी। बोले— स्वप्न बूड़ा को प्रशंसा-पत्र की जरूरत नहीं। आपके लेखन से सभी परिचित हैं।' बस एक उसी दिन उनके चेहरे पर जरा-सी हंसी की झलक देखी। एक बात यह कि वे नये लोगों की रचनाएं भी बड़े मन से पढ़ते थे।

परशुराम की लिखी कई चिट्ठियां मेरे पास थीं, उनकी लिखावट, अक्षर जैसे मोती हों। मगर मेरा दुर्भाग्य—एक के बाद एक मकान बदलने के चक्कर में जैसे रवीन्द्रनाथ के पत्र खो बैठा, उसी तरह आज उनका भी एक पत्र मेरे पास नहीं। 'सेवा' के जीवन-काल में उन्हें डाक से पत्रिका न मिलती, तो वे पत्र द्वारा सूचित करते। आज महसूस होता है कि वह कितने बड़े सौभाग्य की बात थी।

उन्हें आखिरी बार देखा था—एक वैशाख मास में—श्री सुधीर सरकार द्वारा आयोजित साहित्यकार-पुरस्कार वितरण सभा में। चेहरे पर वही आत्मविश्वास की दृढ़ता।

आज परशुराम हमारे बीच में नहीं हैं, मगर उनकी लेखनी अमर है।

उदारहृदय दुर्गादास

□□

सोनाली कण्ठस्वर के अधिकारी दुर्गादास की बात आजकल के दर्शक भूलते जा रहे हैं। दुर्गादास जात शिल्पी थे। यह 'शिल्पी' शब्द मैं दो अर्थों मे प्रयोग कर रहा हू।

उनके जीवन की शुरुआत हुई चित्राकन स। गवनमेट आट स्कूल मे (अभी तक कॉलेज नही बना था।) उन्होने चित्रकला सीखी थी। उन दिना स्त्री-माडल बिठाकर छवि बनाने की प्रथा जारी थी। आज भी वह व्यवस्था चालू है कि नही, पता नही। हम लोगा के समय तक भी स्त्री-माडल से 'लाइफ स्टडी' करने की प्रथा जारी थी।

दुर्गादास न इसी व्यवस्था से शिक्षा ग्रहण की थी। वहा पाठ पूरा कर उन्होने कुछ दिन मेडन कम्पनी मे सिनेमा के 'टाइटल' लिखे तत्पश्चात् आट थियेटर लिमिटेड बना तो स्टार रगमच पर कुछ दिन 'सीन पण्टर' के रूप म काय किया।

कलकत्ता के दक्षिण मे कालिकापुर नाम का एक गाव है। दुर्गादास वहा के जमीदार की सन्तान थे। बचपन म वही मच तैयार कर शौकिया अभिनय करत थे।

वे स्टार थियेटर म कर्णार्जुन' नाटक मे छोटे विकण की भूमिका मे पाद प्रदीप के सामन पहली बार जनता के आग आए। और साथ ही साथ उन्होने बगाल के नाट्य रसिको का दिल जीत लिया। एसी सुन्दर सुगठित देह और सोनाली कण्ठस्वर लेकर वतमान म बगाल के रगमच पर और कोई उदित हुआ है, ऐसा मेरी जानकारी मे नही।

मुझ अच्छी तरह याद है—एक बार हम लाग एक पाला नाटक (छोटा रगमचीय नाटक) रिकाड कराने मेगाफोन से दल बनाकर दमदम हिज मास्टस वॉयस के कारखाने गये। नाटक के नायक थे दुर्गादास। रिकाड

करने से पहले एक बार हर व्यक्ति की कण्ठस्वर-परीक्षा करने का नियम है। विदेशी शब्द धारक दुर्गादास की आवाज सुनकर आनन्दोच्छवास में बोले— गोल्डन वाइस !! सोनाली कण्ठस्वर का अधिकारी यह व्यक्ति कितने उदार हृदय का स्वामी था यह बात सोचकर विस्मय की सीमा नहीं रहती।

एक बार किसी एक रंगालय के कर्ताओं ने अभिनेताओं एवं नेपथ्य कर्मचारियों के बहुत से रुपए नहीं चुकाये। सबने आकर इस समस्या का समाधान करने के लिए दुर्गादास से विशेषरूप से अनुरोध किया। इस पर दुर्गादास ने कर्ताओं से कहा कि सभी को बकाया राशि नहीं देंगे तो मैं अभिनय नहीं करूंगा। उन दिनों स्थिति यह थी कि दुर्गादास स्टेज पर न आयें तो दर्शक बेचैन हो जाते थे। इस बात को सोचकर प्रबन्ध-कर्ताओं ने तुरन्त मामला सुलटा दिया।

एक अन्य अवसर पर, एक दूसरे रंगालय के कर्ता लोगों के साथ दुर्गादास का कोई मतभेद हो गया। कर्ताओं ने उन्हें ठीक करने के लिए घोषणा कर दी कि वे अस्वस्थ हैं उनके बिना ही अभिनय होगा। दुर्गादास ने चुपचाप वह चोट हजम कर ली कोई प्रतिवाद न किया। अभिनय वाले शाम के वक्त वे स्वयं रंगालय के टिकट कक्ष के आगे जाकर खड़े हो गये। उन्हें देखते ही दर्शकों की भीड़ जमा हो गई। तब वे नाटकीय हावभाव के साथ बोले— बन्धुओ ! मैं अभिनय करने के लिए प्रस्तुत हूं मगर कर्ता लोग *स्वयं ही मुझे मंच पर नहीं आने दे रहे।* यह सुनकर दर्शकों के मन में जबरदस्त क्षोभ पैदा हुआ और उनके दबाव से उस दिन की बिक्री की सारी टिकटों का पैसा प्रबन्ध-कर्ताओं को लौटाना पड़ा।

और वे बन्धुवत्सल कितने थे, इस विषय में एक दो बातें बताऊं।

मेगाफोन रिकार्ड कम्पनी के जे० एन० घोष ने एक 'रिकार्ड नाटक दल' बनाया। तय हुआ कि नाटककार मन्मथ राय नाटक लिखेंगे दुर्गादास उस नाटक का निर्देशन और नायक की भूमिका में अभिनय करेंगे भीष्मदेव चट्टोपाध्याय नाटक का स्वर संयोजन करेंगे और मैं नाटक के लिए आवश्यक गीत लिखूंगा। खना' नाटक से इस योजना की शुरुआत हुई। (स्वर्गीय) जे० एन० घोष ने मुझे बताया था कि इस 'खना' नाटक के एक लाख सेट

उन दिनो बिके थे।

इन नाटको का रिहसल रूम दुर्गादास की मजेदार बातो से रह-रहकर हास्य मुखरित और रसाल हो उठता। और जब काम चलता तब सभी निष्ठापूवक अपने-अपने दायित्वो मे व्यस्त रहते। काम खत्म होते ही चारो ओर हसी का दौर चल पडता। इस मामले मे नाट्यकार मन्मथ राय की दुर्गादास के साथ होड चलती।

किसी दिन ऐसा होता कि हमारा यह दल पीछे पड जाता—'दुर्गादा, आज हम लोगो को खिलाना पडेगा।" खिलाने-पिलाने के मामले म दरिया-दिल दुर्गादास एकदम मुक्तहस्त थे। साथ ही साथ वे बटुआ खोल देते और जो कुछ मुट्ठी म आता देकर कहते—"जाओ, जो चाहो ले आओ।"

इस प्रकार हमारे नाटक दल की बठकें बीच बीच मे खूब जमती। काम और आनन्द की एक लहर दौड जाती। आज सोचता हू हम लोग उन मजे के दिनो को पीछे ही छोड आये।

उस वक्त दुर्गादा रगमहल थियेटर से सम्बद्ध थे। थियेटर वाले दिन वे मेगाफोन रिहसल रूम से गाडी कर सीधे रगमहल चले आते। बहुत बार हम लोग भी उसी गाडी मे सवार होते। कारण यह था कि तब मन्मथ बाबू और मैं रगमहल रूपवाणी के उलटी तरफ के रास्ते अभय गुह रोड पर रहते थे।

मेगाफोन से लौटते वक्त कई बार बडी मजेदार बाते होती। कॉलिज स्ट्रीट मार्केट के पास गाडी के आते ही दुर्गादा चीख उठते—"गाडी रोको!"

हम लोग चिन्तित होते। कहते—"दुर्गादा, थियेटर का वक्त हो गया। आपको जाना है, मेकअप करना है— तभी तो पर्दा उठेगा।'

मगर दुर्गादा पर कोई असर ही नही। वे हम लोगो को ढकेलते-ढकेलते कॉलिज स्ट्रीट मार्केट म घुस जाते। और नही, तो एक पापड वाले की दूकान के आगे खडे होकर आलू के पापड ही लेने बैठ जाते। मैं कहता— दुर्गादा, कर क्या रहे हैं? एक बार घडी की ओर देखिये '

दुर्गादा मद मद मुस्कराते हुए कहते—"अरे, तुम लोगो की भाभी का हुक्म है। आलू-पापड खरीदकर ले जाने पडेगे। थियेटर खत्म होने के बाद

खरीदने आऊगा तब क्या दूकान खुली रहेगी ? इसलिए परमावश्यक की चीजें इसी वक्त खरीदकर गाडी म रखना पडेगी। थियेटर के बाद किस दुनिया म निकलूगा कोई बता सकता है ? हम लोग और क्या बोलते ? उस दिन रग-महल थियेटर म शुरू गान म शायद कुछ देरी ही हुई।

दुर्गादास की उपस्थित बुद्धि और कौतुकी मन का कुछ परिचय देता हू। एक बार नाट्य निकेतन मच पर एक नाटक चल रहा था। सामाजिक नाटक था। नायक थे स्वय दुर्गादास। बडा सुन्दर अभिनय हो रहा था। सच कहने म क्या नाटक खूब जम रहा था।

उस वक्त एक दृश्य म नायक नायिका का प्रेम निवेदन कर रहा है। नायक का स्वर मधुर और प्रगाढ़ हो गया है। नायक नायिका के गुप्त सान्निध्य की कामना कर रहा है अत अधरो की भाषा का ह्रास हो गया है मदुकण्ठ स प्रेम की अस्फुट कावली निकल रही है।

सभी स्तब्ध होकर अभिनय-उपभोग कर रहे हैं। इसी वक्त पीछे की ओर की एक सीट स भारी गले की चीख सुनाई पडी— लाउडर प्लीज" (कृपया थोडा जोर स)।

बस अब क्या था साथ ही साथ अपना अभिनय बद कर दुर्गादास पाद प्रदीप के सामने आ गये। तत्पश्चात उस भारी गले का अनुकरण कर उन्होंने प्रेम निवेदन शुरू कर दिया। और थोडी देर बाद उस ऐक्टिग को भी बद कर मुस्कराते हुए बोले— माफ कीजिए इस तरह फटे गले से प्रेम निवेदन करने स मेरी नायिका भाग जायेगी!" इतना कहना था कि नाट्य निकेतन का सारा प्रेक्षागृह हसी के मारे लोट-पोट हो गया।

एक अन्य अवसर पर किसी अभिनय म दुर्गादास ने अपनी एक सह अभिनेत्री को खूब कसकर पकड लिया। दर्शकों के बीच से न जाने कौन चीख पडा— मरी मरी। साथ ही साथ दुर्गादास खडे हो गये। अपने हाथ खोलकर दिखाते हुए बोले यह देखिये, जरा भी कसकर नहीं पकडा। आपकी आखो म भ्रम पैदा करने के लिए ही इस तरह का पेंच दिखाना पडा।' कहना ही काफी है दर्शक लोग उनका यह कौतुक जी भरकर उपभोग करते।

मैं जिस वक्त की बात कर रहा हू उस समय सिनेमा जगत् म निर्वाक्

युग चल रहा था। दुर्गादास ने तब काफी नाम कमाया था। हम लोग सरकारी शिल्प विद्यालय (गवनमेण्ट आट स्कूल) म पढते थे। दुर्गादास बीच-बाच म धूमकेतु की तरह शिल्प विद्यालय जा पहुचते। ऋपेणबाबू की क्लास म ही वे ज्यादा जाते, कारण ऋपेणबाबू उह बहुत चाहते थे। आर इस विद्रोही, बेपरवाह छात्र के प्रति उनके स्नेह का एक खिचाव था।

शिल्प विद्यालय मे दुर्गादास के आते ही छात्र उन्ह देखने के लिए और उनकी बातें सुनने के लिए भीडकर खडे हो जात। वे भी हम सबको बेपरवाह भाव स मजेदार बातें सुनाते। किसी दिन कहत—"स्टूडियो मे पेश स कूपर के साथ शूटिंग की थी। अभिनय करते-करते वह धूप मे बेहोश होकर गिर पडा, तो भाग आया।"

किसी दिन आकर कहत—"सविता देवी ने आज दोपहर को खाने का न्यौता दिया है, इसलिए सोचा, पैदल चलकर भूख को बढाकर ले जाऊ।"

वे ये सब मुखरोचक बाते कहते और छात्रा के मुह की ओर देखते। वे खूब अच्छी तरह जानते थे कि छात्र इसी प्रकार की रसीली बातें ही ज्यादा पसद करत हैं।

सबसे ज्यादा मजे की बात यह थी कि उनके प्रवेश और प्रस्थान थे अद्वितीय। सिफ रगमच पर नही रोजमर्रा की जिन्दगी मे भी वे अपने आने-जाने से सभा को अवाक् कर देते।

दुगादास को लेकर एक बार एक मजेदार घटना घटी। उसका जिक्र मैंन बधु-बाधवा के आग कई बार किया है और सभी ने उसे सुनकर बडा आनद लिया है। यहा भी उसका जिक्र करने का लोभ सवरण नहीं कर पा रहा।

उन दिना मैं 'रूपवाणी' सिनेमा का प्रचार-सचिव था। रहता था उल्टा तरफ वाल रास्त अभय गुह रोड पर।

नाटयकार मन्मथ राय तब बालुर घाट पर वकालत करते थे। बीच-बाच म थियेटर सिनेमा रिवाड के काम स कलकत्ता आते घर रवत। मजमिल जम जाती। रूपवाणी मे उन ... नाम बहुत-स लाग घूमने और गप्पें लडाने जात थे। असली अड्डा। वहा अहीन्द्र चौधुरी, दुगादास ...

शचीन सेनगुप्त म न्मथ राय आदि बहुत लोग आते। चाय और किस्से चलते।

आज जहा श्री सिनेमा है वहा पहले कार्नवालिस थियेटर था। उस समय उसमे एक विदेशी छवि चल रही थी। छवि की प्रशसा सभी ने सुनी थी मगर देख कोइ नही पाया था। उस दिन रूपवाणी के प्रचार सचिव के कमरे मे तय हुआ—दुर्गादा डी० जी० म न्मथ राय और मैं एक दिन नाइट शो मे वह छवि देखने जायेंगे।

उदारहृदय दुर्गादा बाले— पास लेने की जरूरत नही छवि मैं दिखाऊगा।" सब और भी खुश हुए।

दुर्गादा के नेतत्व म हम लोग कार्नवालिस थियेटर की ओर रवाना हुए। उन्होने और किसी को टिकटें न खरीदने दी। इसके अतिरिक्त, उन दिनो वे तो चित्र-जगत और मच राज्य के एकछत्र अधिपति थ। व स्वय हम लोगो को छवि दिखा रहे हैं—यह भी बडे गव की बात थी। यही कारण था कि हमम से किसी ने भी रुपया-पसा देने क लिए जरा भी आग्रह व्यक्त न किया। यथारीति दुर्गादा ने प्रथम श्रेणी की चार टिकटें खरीद ली। हम लोग भी सुबोध बच्चो की तरह उनके साथ जाकर सीटो पर बैठ गये। उन्होने पहले ही कह दिया था कि वे अधेरा होने पर प्रेक्षागृह म प्रवेश करेंगे अन्यथा उत्सुक दशक उन्हे बुरी तरह से घेर लेंगे।

वहरहाल, हम लोग छवि का आनद ले रहे थे कि एकाएक इण्टरवल की रोशनी हो गई। दुर्गादा ने दीघदेह म न्मथ राय की आट म मुह छिपा लिया। बोले— अरे माना, मुझे लुका छिपाकर ही रख, नही तो अभी भीड जमा हो जायेगी।'

थोडी देर बाद वे फिर बोले— इस लेमनेड वाले को बुलाओ मैं तुम लोगो को लेमनेड पिलाऊगा।"

लेमनेडवाले ने चार लाल रग की लेमनेड काच के गिलासो म डालकर हमारे हाथो म पकडा दी। हम सब महानन्द स बफ डाली लेमनेड पीने लग।

इस बीच एक और नाटक जम गया था, इसका हम लोगो को कुछ पता न चला। बात यह थी कि हमारे एक अन्य साहित्यिक बधु आगे की ओर बठे थे। हम काच के गिलासो म लाल पेय पान करते देखकर व बडे

चौके। अगले दिन दोपहर को कॉलेज स्ट्रीट पर पुस्तको की दूकानो पर उन्हाने यह मुखरोचक खबर फैला दी और टीका टिप्पणी कर सभी को यह बता दिया कि अखिल नियोगी दुर्गादास के साथ रहकर एकदम बिगड गया। खुले आम मद्यपान शुरू कर दिया है।

शाम के करीब मैं जब कॉलिज स्ट्रीट गया तो सबने मुझे लेकर हसी मजाक शुरू कर दी। बाद मे अवश्य ही इस मुखरोचक तथ्य का पर्दाफाश हो गया। मेरे वे साहित्यिक बधु यह नही जानते थे कि सिनेमा हाल के बीच बैठकर मद्यपान नहीं किया जाता। यह मधुर सदेश बाद म जब दुर्गादास को दिया, तो उनकी हसी का क्या ठिकाना।

नाटक अभिनय मे दुगादास प्रवेश और पस्थान पर विशेपरूप से नजर रखत। वे कहते कि मच पर इस तरह प्रवेश और प्रस्थान होना चाहिए कि दशक मन पर स्थायी छाप रहे। जिस भूमिका म अभिनय है, प्रवेश-प्रस्थान उसके अनुरूप हो। मच पर प्रवेश कर किस विशेप स्थान पर खडा होना है, इस विषय म वे बडे जागरूक थे। इसीलिए शुरू से ही वे दशका की नजर आकर्षित करत। विकण स शुरू होकर—दिलदार, भीम-सिंह चद्रगुप्त, मूलक चाद धुधुरिया आदि छोटा-बडा प्रत्येक चरित्र रग-मच पर जीवन्त हो उठता।

एक बार रवीद्रनाथ के एक नाटक मे उन्होने एक दुर्भिक्ष पीडित व्यक्ति की भूमिका म अभिनय किया था। इस भूमिका मे कोई सलाप नही था, सिफ भावो की अभिव्यक्ति से उन्होने उस छोटे चरित्र को जीवन्त कर दिया था।

दुर्गादास कभी-कभी रिक्शे म बैठकर जाना खूब पसद करते। थियेटर के बाद घर लौटते समय वे प्राय ही रास्ते पर आकर रिक्शा लेकर उसकी टनटन् की आवाज मे जाते। चलते-चलते रास्ते की जो मद वायु उन्हे स्पश करती, वह उन्हे बडी अच्छी लगती।

दुर्गादास शराब पीकर हर समय नशे मे धुत् हुए चलते फिरते हैं—उन दिना यह बात खूब फैली थी। मगर हम लोग जानते थे कि यह बात सही नही। बहुत बार वे लोगो से बचने के लिए शराबी का स्वाग रचते।

एक बार थियेटर से निकलने पर एक भद्रपुरुष से आमना-सामना होते ही वह झट से शराबी की तरह डगमगाते रिक्शे में जाकर धप से लेट गए। तत्पश्चात् हाथ नाटकीय ढंग से उठाकर आदेश दिया— 'सामने चलो "।

बाद में इस काण्ड के बारे में पूछने पर उन्होंने मृदुभाव से हँसकर उत्तर दिया—' मैं छूटते ही यदि शराबी न बनता, तो वे सज्जन मुझसे थियेटर का पास माँग बैठते।"

ऐसे मजेदार व्यक्ति थे दुर्गादास।

एक घटना उनकी बंधु वत्सलता की। उस वक्त वे कलकत्ता के चालू थियेटरों से अलग होकर चितपुर अंचल में 'रंगमहल' नामक एक थियेटर का संचालन कर रहे थे। उसी समय वे नाटककार शचीन सेनगुप्त के लिखे 'अबुल हसन' नाटक में टाइटल रोल में आ रहे थे। संचालन और नायक की भूमिका—दोनों बातों में असामान्य परिश्रम करना पड रहा था।

एक दिन उन्होंने मन्मथ राय और इस लेखक (स्वपन बूडो) को वह नाटक देखने के लिए आमंत्रित किया। बार-बार कहा कि ठीक वक्त पर पर्दा उठ जाएगा। हम लोग जरा भी देर न करें। हम वे 'लॉंग एण्ड शार्ट आफ द स्टारी' कहकर पुकारते। मंच जगत् के महर्षि मनोरंजन भट्टाचार्य भी हमें इसी नाम से संबोधित करते। बहरहाल, उस दिन 'रंगमहल' पहुँचने में हमें कुछ देर हो गई।

वहाँ पहुँचकर देखते हैं सदर रास्ते पर एक आदमी चहलकदमी कर रहा है। हम लोगों के पहुँचते ही वह आगे बढकर बोला—"दुर्गाबाबू ने आप लोगों के लिए मुझे खडा कर रखा है। वे किसी भी सूरत में पर्दा नहीं उठने दे रहे। बस यही पूछ रहे हैं कि आप लोग आए कि नहीं। हमने एक-दूसरे के मुँह की ओर अपराधियों की तरह देखा फिर जल्दी से उस आदमी के पीछे-पीछे चलकर आसन ग्रहण किया।

एक अंक खत्म होने पर हम लोग भीतर जाकर दुर्गादा के अभिनय की प्रशंसा करने को हुए, तो उन्होंने धमकाकर हमें रोक दिया। हुंकारते हुए बोले—"तुम लोगों को वक्त पर आने के लिए नहीं कहा था मैंने? ड्राप उठाने में अकारण देरी हुई।' मगर हमें उस धमक का बुरा न लगा। मन

ही मन समझ गए, यह उनके स्नेह का शासन है। बगाल के अद्वितीय नायक दुर्गादास ने हम लोगो के कारण देर कर नाटक शुरू किया—यही बात हमारे मन म अमिट हो गई।

दुर्गादा खिलाना बडा पसद करते, पहले ही बता चुका। और वे स्वय भात कैसे खाते थे। गम भात मे घी डालकर सारा भात उसी म मिलाकर खाना शुरू कर देते। कविता म आता है न—

खोकन सानाय के मरछे !
के वलेछे की !
ताहार पातेइ देबा ढेले
गरम भात घि !

(भावाथ मुन्ने राजा को किसने मारा है ? किसने क्या कह दिया ? उसी की पत्तल पर गम भात मे घी उडेल दूगी।)

उस वक्त की अन्यतम श्रेष्ठ अभिनेत्री श्रीमती नीहारवाला ने दुर्गादास के विषय म एक बडी सुदर बात कही है। उन्होंने एक दिन हसन-हसते टिप्पणी की— अभिनय हम बहुत लोग करते है। दशको की तालिया भी लूटते है। मगर सोने की चूडिया वाली तालिया सिर्फ दुर्गादास के भाग्य मे जुटती है।'

बात गलत नही। दुर्गादास की अभिनय निपुणता देखकर महिलाए ही अधिक तालिया बजाती।

शिशुप्रिय हेमेन्द्र कुमार

अभी उसी दिन की तो बात है। हेमेन्द्र कुमार के श्राद्ध वाले दिन चुपचाप जाकर बैठा था।

कीतनिया कीतन कर रहे थे, मगर उस ओर मेरा मन नही था। मैं सोच रहा था सिर्फ यह कि वे इतने दिनो से हम लोगो के बीच थे, इस तरह एकाएक चले गये।

तीसरे पहर 'युगान्तर' दफ्तर जाते समय बहुत बार देखता कि वे रास्ते के पश्चिम दिशा वाले फुटपाथ पर खडे हुए है, अथवा बरामदे मे बैठे बच्चो के साथ गप्पें लड़ा रहे है। किसी किसी दिन देखता हू कि वे उल्टी तरफ वाली चाय की दूकान पर बैठे चुपचाप चाय पी रहे हैं। सामने की ओर देख अवश्य रहे हैं मगर मन उधर नही है। वह उदास वैरागी दृष्टि कितनी दूर चली गई है, कौन जाने!

आज भी यदि सबकी नजरो से बचकर चुपचाप हेमेन दा के मकान की तिमंजिले वाली छत पर जायें तो शायद देखने मे आयेगा कि टब के फूल असल आदमी के अभाव मे मुरझा गये है।

मैं शायद पार्थिव आखो से देख नही पाऊगा मगर सभव है कि वह कल्पना विलासी आदमी सभी की नजरो से बचकर छत की कॉरनिस के एक किनारे पर खडा होकर पश्चिम मे गंगा की ओर निहार रहा है। शाम की ढलती धूप मे रंगीन बादलो का जो खेल शुरू हुआ है, उसी को हेमेन्द्र कुमार कवि की नजरो से देख रहा है। एक एक, दो दो कर पाल-लगी नौकाएं गंगा के वक्ष पर अलस मथर गति से तैरती जा रही हैं। सम्भव है हेमेन दा उसी ओर घटा ही देखते रहे हो। अथवा सम्भव है बडे कौतूहल के साथ वे यही देख रहे हैं कि घास की नाव वाले मेहनती लोग गंगा मे मछली किस तरह पकडते हैं। और कौन जाने अपने अधूरे उपन्यास के प्लाट की

बात साच रहे हो—उसे किस रास्ते ले जाये—तभी मानो निर्विकल्प समाधि म स्थिर गम्भीर ह।

मगर असल हेमेद्र कुमार तो किसी दिन भी गम्भीर न थे। आनन्द और हसी स उनका निजन भवन रह-रहकर मुखरित हो उठता था।

तब व अकेले ही सौ के बराबर थे।

आगतुक कोई भी हो वे बडे प्यार से उस साथ बिठात। परिचित व्यक्ति होना ता बात ही क्या! वह परिचित क्या खाना पसद करता है—पहने यही जानकारी करत।

तरह-तरीके स लोगो को खिलान पिलान की तरफ हेमन दा की बडी तेज नजर थी।

मगर जीवन के शेष भाग मे यह दरियादिल हसमुख आदमी नीरव एकाकी रहा। हम लोगो की स्नेहशीला भाभी बहुत दिन पहले हमेन दा को छाड गई। तभी से हेमेद्र कुमार के खान पीने की कोई विधिवत् व्यवस्था न रही। बहुत बार देखता कि रेस्तरा मे चौप-कटलेट मगाकर उहाने रात का भोजन किया है। उस वक्त उपस्थित रहता तो उस आहार मे अश ग्रहण करना पडता। उनके हाथ से रिहाई पाने का कोई उपाय ही न था।

बच्चा के प्रिय हेमेद्र कुमार के श्राद्ध वासर पर उपस्थित होकर मन ही मन दुनिया भर की बाते साच रहा था। आस-पास के लोगा की तरफ मेरी विशेष नजर न थी। इसी बीच हमेन दा का लडका आकर मिल गया। मेरे आन से उसे बडी खुशी हुई, यह बात उसकी बातचीतो से साफ पता चली।

हमन दा मुझे किस नजर स देखते थे उसे सब मालूम है। कितनी ही बार वह हमेन दा की रचनाए लेकर 'युगान्तर पात्ताडि दफ्तर गया है। आत जात कही मिला है, तो उसने कुशलक्षेम पूछा है। बडा विनयी है लडका। बहुत बार आत जात उसी से हेमेन दा के हाल चाल मालूम हुए है।

श्राद्ध वासर पर बैठ-बठे मन ही मन जीवन के पुरान पष्ठ उलट रहा था। हमेद्र कुमार के साथ प्रथम परिचय कब हुआ ? वह काई आज की

बात नही।

तब मैं स्काटिश स्कूल म पढता था। मरे एक फुफेरे भाई एसोशिएटड प्रेस और रायटर स सबद्ध थे और कलकत्ता के सवाददाताओ के बीच के० एम० नियोगी नाम स परिचित थ। परवर्ती काल म वे ही रॉयटर के प्रथम बगाली मैनेजर हुए। ये के० एम० नियोगी हेमेन्द्र कुमार के विशेष बधु-स्थानीय व्यक्ति थे। दोनो ही नाट्यरसिक व्यक्ति थे अत दोना का शाम का वक्त किसी-न किसी थियेटर म नाटक देखने म कटता।

उन दिना चल रहा था स्टार थियेटर म अपरेशचन्द्र का जमाना। ये दोना बहुत बार एक साथ स्टार म नाटक देखने आते। अपरेशचन्द्र भी इन दोना के खास मित्र थे।

हम लोग तब स्टार थियेटर की उल्टी तरफ वाले एक मकान मे रहते थे। मैं पढता था स्कॉटिश स्कूल मे। मिस्टर के० एम० नियोगी का घर का नाम था जीवन। जीवन दा स्टार थियेटर आते-जाते हमारे घर प्राय ही आते, इसलिए हम पता रहता कि लेखक हेमेन्द्र कुमार राय के साथ जीवन दा का विशेष बधुत्व है।

इन्ही दिनो हम बच्चा ने मिलकर अपन गाव वाले घर म एक पुस्तकालय की स्थापना की थी। हम लोगो के पास जितनी भी पुस्तकें थी, वे सब हमने इस नवगठित ग्रन्थागार को दान कर दी। तब हम लोगो ने यह नयी योजना बनाई कि कलकत्ता के साहित्यकारो से उनकी लिखी पुस्तकें इकट्ठी की जाये। बच्चा की पुस्तको की बात आते ही सबसे पहले शिशु प्रिय हेमेन्द्र कुमार की मनोहर पुस्तका का ध्यान आता है। हेमेन्द्र कुमार की ये सब ऐडवेन्चर भरी पुस्तकें ही न रही तो पुस्तकालय की रौनक कसे बढेगी?

हम लागा न बहुत कुछ विचार विमश कर तय किया कि हेमन्द्र कुमार की पुस्तको के लिए उन्हें एक पत्र लिखना चाहिए। सभी के मन म यह आशका भी थी—यदि उन्होंने पत्र का उत्तर न दिया? बच्चो की लिखी चिट्ठी, सम्भव है वे बिना पढे ही फक दें। तभी एकाएक मेरे दिमाग मे यह विचार आया कि अरे हेमेन्द्र कुमार तो हमारे जीवन दा के दोस्त हैं उनकी पुस्तका के लिए जीवन दा को ही पकडा जाये।

कलकत्ता लौटकर सबसे पहले जीवन दा को जा पकडा। हेमेन्द्र

कुमार को पत्र लिखने का कारण जानकर वे किसी तरह भी राजी न हुए मगर जब मैं चेंटू की तरह उनके पीछे पडा रहा तो मुझसे पीछा छुडाने के लिए उन्होने हेमेन्द्र कुमार के नाम एक पत्र लिख दिया।

उन दिनो हेमेन्द्र कुमार रहते थे पाथुरियाघाटा स्ट्रीट के भीतर एक गली म। वह उनका पतृक घर था। तब उनके पिता जीवित थे।

पत्र हाथ मे लिये धुकधुक करते दिल से चल पडा। चितपुर रोड से पाथुरियाघाटा स्ट्रीट चली गई है ठीक पश्चिम की ओर। उन दिना कलकत्ता के रास्ते-वास्ते ठीक से नही पहचानता था। देहाती इलाके का लडका, कलकत्ता के स्कूल मे पढने नया नया आया था। सिफ बडे-बडे रास्तो के नाम याद कर लिय थे। बहरहाल, पूछते-पाछते पाथुरियाघाटा स्ट्रीट का अता पता मालूम हुआ—नया बाजार के पास। मगर हेमेन्द्र कुमार का मकान न मिले। पत्र के ऊपर लिखे पते का नम्बर मिलाऊ और चल पडू।

गली म काफी भीतर था मकान। बाद मे उसे बेचकर बाग बाजार इलाके म गगा-किनारे एक दूसरा मकान खरीदकर हेमेन्द्र कुमार ने बाकी जीवन वही बिताया था। बहरहाल, किसी तरह मेरी वह मकान खोजने की तपस्या सफल हुई।

बाहर के बरामदे मे बठे कुछ लोग बातें कर रहे थे। वही जाकर पूछा—'यह क्या लेखक हेमेन्द्र कुमार राय का मकान है।"

इससे पहले मैंने हेमेन्द्र कुमार को आखो से नही देखा था। सिफ इतना ही जानता था कि जीवन दा के मित्र हैं। लेखक के रूप मे उनकी बहुत-सी पुस्तकें गट्-गट निगल गया था। उस वक्त हेमेन्द्र कुमार 'प्रवासी' मे भी उपन्यास लिखते थे। मेरे मामा प्रवासी के नियमित पाठक थे, अत लुक-छिपकर बडा के उपन्यास पढना भी न छूटता।

मेरे प्रश्न के उत्तर म बडे-बडे बालो और चमकीली आखो के अधिकारी एक सज्जन बोले—"उनसे तुम्हें क्या काम है मुन्ना ?"

'मुन्ना' सुनकर मैं एकदम भडक गया। मुझे तो एकबारगी मुन्ना ही समझ लिया भद्रपुरुष ने। बडा बुरा लगा। मैंने धीरे से कहा—"उनके नाम एक चिठठी है।" इस पर वे सज्जन बोले—"चिठठी दो मैं ही हू

हेमेन्द्र ''

मैं आवाक् होकर उनके मुह की ओर देखने लगा। लुगी पहने, गजी धारण किये—यही आदमी है हेमेन्द्र कुमार ?

जिसकी इतनी सारी विचित्र कहानिया पढकर लगा कि यह विशाल शक्तिशाली व्यक्ति है बडा-बडी मूछ चौडी चौडी कलाइया जिसे कहते हैं शालप्राशु (शाल वक्ष सा लम्बा) महाबाहु वह यही है !

लगा जसे मन पर किसी ने हथौडा मार दिया। इस बीच हमेन्द्र कुमार ने पत्र पढ लिया। उन्होंने भौहें सिकोडकर मेरी ओर देखा। बोले—'किस क्लास म पढत हो मुन्ना ?''

मैंने छोटा सा उत्तर दिया। बुलेट की तरह फिर प्रश्न आया—''बगला म कितन नम्बर आते ह ?'

कसा सवनाश ! पुस्तकें लने आया हू तो क्या परीक्षा देनी होगी ? मैं मन ही मन बेचैनी महसूस करने लगा।

स्कूल मे मैं बगला मे अच्छे नम्बर ही पाता था। निबन्ध लिखन म तो स्काटिश स्कूल मे तो मेरा बडा नाम था। मगर ये सब बातें लेखक हेमेन्द्र कुमार से तो नही कह सकता।

जिनकी रचनाए पढकर कितनी ही रातें बिना निद्रा के बीती है—वही हेमन्द्र कुमार मेरे सामन लुगी पहने हुए बरामदे मे बठे हुए है। मगर मेरी धारणा कुछ और ही थी। बैठक म जाकर बठना पडगा—स्लिप भेजूगा, कालिंग बेल बजेगी—पुकार पडेगी—फिर कुछ प्रकाश कुछ अध-कार वाले एक विचित्र कमरे म घुसकर देखूगा कि लेखक हमन्द्र कुमार पृष्ठ पर पष्ठ लिखे जा रह है, सारा कमरा कागजो से भरा है ! कमरे म जाने कैसा एक रहस्य छिपा है

मगर ऐसा कुछ भी नही हुआ। दिन दहाडे एक बडी ही साधारण लुगी पहने शिशुचित्त-जयी हेमेन्द्र कुमार देखन को मिले।

इधर व प्रश्न पर प्रश्न किये जा रहे हैं। बोले— हू लाइब्रेरी बनाई है तुम लोगो ने ? ठीक तरह चला ता पाओगे ?

ज्यादा बातें करन का माहस नही था। सिफ सिर हिला दिया।

' तो कितनी पुस्तकें इकट्ठी कर ली तुम लोगा न ?

मैंने उन थोडो-सी पुस्तको की बात बताइ। सुनकर भौहें सिकोडकर बोले—"बस इतनी सी ?" फिर एक प्रश्न—'तुम्हार पाठको की सख्या कितनी है ?" घवडाकर क्या उत्तर दिया था, आज याद नही।

हेमेन्द्र कुमार शायद मेर मन की हालत ताड गये थे सो हसकर बोले—"अच्छा, पुस्तकें मैं दूगा। मगर मेरी पुस्तक मेरे घर म ता रहती नही, रहती ह प्रकाशक की दूकान पर। वहा से लाकर देनी पडेगी।"

उस वक्त मेरी ऐसी हालत थी कि भागू तो बचू सो जवाब दिया—तो अब मैं जाऊ ?"

उन्होने सिर हिलाकर कहा—"अच्छा, फिर एक बार आना। नियागी से तो मेरी हमेशा ही मुलाकात होती है, वह भी याद दिला सकता है।

जल्दी से भाग आया—हेमेन्द्र कुमार के सामने से—कही फिर कोई प्रश्न बुलेट की तरह छूटकर मेरे मन को आघात पहुचाये ! उस दिन उन्हें प्रणाम करने की बात भी याद न रही !

परवर्ती काल म मैं जब स्वय लिखने लगा—एक ही पत्र मे हेमेन्द्र कुमार के साथ मरी रचनाए प्रकाशित होतीं—तब एक दिन मैंने इस पहली मुलाकात की बात सविस्तार उन्हें सुनाई थी। आत्म विभोर दरियादिल हेमेन दा हो-हो कर हसने लगे।

इस घटना के बहुत दिना बाद की बात बताता हू। तब मैं स्कूल-कॉलेज की पढाई पूरी कर सरकारी शिल्प विद्यालय से पूरी तरह शिल्पी बनकर निकला था। विभिन्न प्रकाशको के यहा चित्र बनाने का काम चल रहा था। इन्ही दिना एक दिन नाटककार मन्मथ राय मुझे पकडकर मनमोहन थियेटर ले गये।

वहा दो मजिले के एक विशाल कक्ष मे रोज शाम को मजलिस बठती थी। इस मजलिस के प्राण थे थियेटर के अन्यतम मालिक श्री प्रबोध चन्द्र गुह ठाकुर। यहा प्राय प्रति सन्ध्या को नियम स उपस्थित होत थे हेमेन्द्र कुमार, प्रभात गगोपाध्याय, चारु राय, यामिनी राय, शचीन सेन गुप्त, सुनीति चट्टोपाध्याय, नपेन चट्टोपाध्याय, नजरल इसलाम, दुर्गादास बद्योपाध्याय इत्यादि।

यहा हेमेन्द्र कुमार को फिर नये सिरे से देखा। हम लोगो की भाभी,

अर्थात् हेमेंद्र कुमार की सहधर्मिणी बडी भली महिला थी। किसी दिन उनके घर जाता, तो भोजन विलासी हेमेंद्र कुमार आवाज देते, अरे फलाना आया है, कुछ खाने-पीने की व्यवस्था करो। हेमेंद्र कुमार के घर जाकर बिना खाये पीये लौटने का उपाय न था।

उस वक्त हेमेंद्र कुमार की दोनों लडकियां किशोरावस्था की थी। देखने में भी बडी सुन्दर थी। हेमेन दा भाभी और लडकियों को लेकर प्रायः ही थियेटर आते और हमारे प्रबोध दा अपने हाथों से चौप-कटलेट लाकर उनका स्वागत-सत्कार करते। हम लोगों को भी हिस्सा मिलता।

इस प्रकार हम सभी के साथ हेमेन दा के पूरे परिवार का मधुर संबंध स्थापित हो गया।

कई बार हेमेन दा लडकियों को थियेटर में बिठाकर जाने कहा गायब हो जाते। थियेटर खत्म हो गया, पर उनके लौटने का नाम नहीं। तब प्रबोध दा चीखने चिल्लाने भाग-दौड करने लगते।—'देखो हेमेन की बात। दोनों लडकियों को बिठाकर जाने किस साहित्य अड्डे में मस्त है। अड्डा मिल जाय फिर तो श्रीमान को होश ही नहीं रहता।' इस तरह बहुत कुछ बक झककर अंत में खुद गाडी मंगाकर किसी के साथ उन लडकियों को हेमेन दा के घर भिजवा देते। लडकियां इस बीच बिलकुल रुआसी हो जाती।

बाद में प्रबोध दा इसके लिए हेमेंद्र कुमार से डाट-डपट करते तो वे हो हो कर हसते। कहते—"जानता हू, आप गार्जियन हैं तो, तभी मुझे कोई डर नहीं।"

हेमन दा पर कोई गुस्सा करे तो कैसे !

शचीन्द्र नाथ का गैरिक पताका नाटक होगा—हेमेन दा तुरन्त नीहारबाला के लिए संगीत रचना करने बैठ गये। इस विषय में काजी दा की तरह उन्हें भी नहान-खाने का होश न रहता।

बहुत बार देखने में आया कि मन मोहन थियेटर के नाटकों के गीत हेमेन दा और काजी दा हिस्सेदारी कर तैयार कर रहे हैं। हेमेन दा नृत्य-परिकल्पना भी कर सकते थे। बाहर के लोगों को पता न चलता मगर उन्होंने उस वक्त के रंगमंच के अनेक नाटकों की नृत्य-परिकल्पना की थी।

शिशिर कुमार के 'सीता' नाटक और वधु मणिलाल गगोपाध्याय के नृत्य नाट्य 'मुक्तार मुक्ति' की नृत्य-परिकल्पना उन्होन ही की थी। अवश्य ही यह बाद की कहानी है।

बीच-बीच मे मुझे यह सोचकर बडा मजा आता कि हेमेन्द्र कुमार ने एक दिन मुझे 'मुन्ना' कहकर सबोधित किया था—और उनकी जिरह के डर से मैं फिर उनकी पुस्तकें लेने नही गया था—और अब एक साथ हम दोना 'मौचाक' मे लिख रहे है—एक ही मच पर स्थान प्राप्त किया है, पास-पास आसनो पर बैठकर अभिनय की बहार देखते है। अब मैं पूरी तरह बालिग हो गया हू।

हेमेन्द्र कुमार स्वय बडे अच्छे चित्र बना सक्ते थे। यह बात आज अनेक लोग नही जानते। मैंने उनके घर म उनके बनाये अनेक चित्र देखे हैं।

लखको म रवीन्द्रनाथ ने तो बाद के जीवन म प्रचुर चित्रकारी की थी, शरत्चन्द्र भी अच्छे चित्र बना सकते थे अवनीन्द्र नाथ की तूलि और कलम समान रूप से चलती थी। दक्षिणारजन मित्र मजूमदार बडे सुन्दर चित्र बनाते थे—'ठाकुरमार झुलि' के सारे चित्र उनके स्वय के बनाये हैं, यह बात शायद बहुत-से पाठक नही जानते। मैंने यह बात उन्ही के मुह से सुनी थी।

मैं उस वक्त आर्ट स्कूल से निकलकर ही आया था। नाटयकार मन्मथ राय के 'महुआ' नाटक का तिरगा पोस्टर उन दिनो मैंने ही तैयार किया था। इससे पहले थियेटर के पोस्टर बडे-बडे लकडी के टाइप पर छपते थे। सबस पहले प्रबोध दा ने ही थियेटर-जगत् मे लियो प्रिण्ट म तिरगे पोस्टरो की शुरुआत की। उसका पहला उदाहरण है 'महुआ' का तिरगा लियो पोस्टर। हेमेन्द्र कुमार मेरे बनाये उस पोस्टर को देखकर प्रसन्न ही हुए थे। परवर्ती काल मे मैंने शचीन सेनगुप्त के ऐतिहासिक नाटक 'गैरिक पताका' का पोस्टर बनाया था। घोडे की पीठ पर शिवाजी—वही प्राचीर-पत्र की विषय वस्तु। उस वक्त मन मोहन थियेटर की साप्ध्य मजलिस म अनेक दिग्गज शिल्पी और साहित्यकार उपस्थित होत थे। उनसे अनुमोदन प्राप्त करना बहुत सहज काम न था।

हमेन्द्र कुमार ने 'नाचघर' निकालकर बडी धूम मचा दी थी। थियेटर सिनमा अथवा ललित कला विषयक कोई भी प्रथम श्रेणी का सामायिक-पत्र उन दिनो नही था। हेमन्द्र कुमार ने इस नाचघर' साप्ताहिक के माध्यम स वह अभाव दूर किया था।

प्रबोध दा जब नाट्यनिकेतन थियेटर की प्रतिष्ठा कर मन मोहन छोडकर चले आये तभी हमेन्द्र कुमार के नाचघर ने बगाल म धूम मचाइ थी। अनेक विशिष्ट नामी गुणी साहित्यकार शिल्पी और कला-समालोचक उसम प्रति सप्ताह लिखत थे। सास्कृतिक पत्रिका के नाम पर उन दिनो 'नाचघर ही थी। परवर्ती काल म जिन्होंने नामी लखको के रूप म ख्याति प्राप्त की, उनमें स बहुतो न इस पत्रिका म लिखा था। बन्धुवर पशुपति चटटोपाध्याय उन दिना हेमेन्द्र कुमार के सहयोगी क रूप मे हर तरह से उनकी सहायता करत और लेखनी चलाते।

शिशिर कुमार के नाटय मदिर की घरेलू समालोचना सभा म भी हेमेन्द्र कुमार उल्लेखनीय अश ग्रहण करत। और वे ही एक मात्र व्यक्ति थे, जो शिशिर कुमार क अतरग मित्र होकर भी आवश्यक समझकर उनकी कठोर समालोचना करते। ऐसे अवसर उनके जीवन मे बहुत बार आये, मगर कभी बधु विच्छेद नही हुआ। इस समालोचना के मामले मे नाचघर ने एक परम्परा कायम की थी।

शिशिर कुमार के इस नाट्य मदिर म ही हेमेन्द्र कुमार को अपने मनोमत स्थान की खोज मिली थी। सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय और राखाल दास बद्योपाध्याय भारत के अतीत युग के परिच्छद की परिकल्पना कर देते शिल्पी चारु राय दश्यपट परिकल्पना करते, हेमेन्द्र कुमार सगीत रचना करते। फिर हमेन्द्र कुमार और मणिलाल गगोपाध्याय दोनो दोस्त मिलकर नृत्य-परिकल्पना करत। जिस कहत है अष्ट वज्र सम्मेलन। सबसे ऊपर रहता शिशिर कुमार का प्रयोग-नपुण्य।

उन दिना एसा कोई शिक्षित बगाली न था जिसने 'सीता' अभिनय एकाधिक बार न देखा हो। हेमन्द्र कुमार के गीत— अधकारर अतरेते अश्रु-बादल झरे', 'जय सीतापति सुदर तनु', 'मजुल मजरी नव साजे' इत्यादि गीत लोगो के मुह पर रहते। अधगायक कृष्णचन्द्र जब कोयाय

सीता—कोथाय सीता' (सीता कहा हैं सीता कहा हैं) कहकर तान खीचते, तो सारा प्रेक्षागह विह्वल हो उठता। दशको म से किसी की आखे सूखी न रहती। बगाल के नाटय जगत् मे वे कैसे उत्तेजना भरे दिन थे।

शिशिर कुमार के उदात्त स्वर मे राम का अभिनय, सीतारूपिणी श्रीमती प्रभा, मनोरजन भट्टाचाय का वाल्मीकि प्रफुल्ल राय का शत्रुघ्न, रविराय और जीवन गागुली के लव-कुश, चारुशीला की तुगभद्रा—अध-गायक कृष्णचन्द्र के गले से हेमन्द्र कुमार का गीत, चारु राय की नयी परि-कल्पना का दृश्यपट, नयी साजसज्जा, सर्वोपरि राम लक्ष्मण भरत-शत्रुघ्न—चारा भाई जब मच पर आकर खडे होते—दशको की आखें एकदम तप्त हो जाती। उस अभिनय समारोह मे हेमेन्द्र कुमार को मैंन एक नये रूप मे नयी दृष्टि स देखा।

कुछेक वर्षों बाद एक पुस्तक का प्रच्छद-पट बनाने का भार मेरे ऊपर पडा। पुस्तक का नाम 'रातेर कलकाता'—लेखक मेघनाथ गुप्त। ये गुप्त और कोई नही, स्वय हेमेन्द्र कुमार राय थे। रात के एक अधेरे मे कलकत्ता के वक्ष पर जो सब गुण्डागर्दी, राहजनी अयाय, अत्याचार होते हैं, मेघनाद गुप्त ने उन्हें ही वडे प्रभावशाली ढग से उजागर किया है। हेमेन्द्र कुमार बहुत बार दलबल तैयार कर, लाग बाधकर, लाठी-सोटा लेकर नैश-अभियान पर निकलत। इस पुस्तक को पढकर हेमेन्द्र कुमार का एक और रूप आखा के आगे तैरने लगा। तब समझा कि हेमेन दा किस तरह ऐसे रोमाचकर और कौतूहल उद्दीपक बात उपन्यास लिख लेते थे।

अपने बाकी जीवन म हेमेन्द्र कुमार ने अपनी सारी कल्पना और प्रतिभा पूरी तरह से बाल किशोर साहित्य रचन मे केन्द्रित कर दी। विभिन्न प्रकाशको ने उनकी नयी नयी पुस्तकें प्रकाशित करना शुरू कर दिया। अत म देखन म आया कि प्राय प्रतिमाह हेमेन्द्र कुमार की बाल-साहित्य की पुस्तक किसी-न किसी प्रकाशक के यहा से प्रकाशित हो रही है।

बहुत दिन पहले बधवर क्षितीश भट्टाचाय की सहयोगिता मे हमने एक बाल मासिक प्रकाशित किया था। मैंने उसका नामकरण किया था। 'मास पायला'। उसके सम्पादन का दायित्व था मेरे और क्षितीश के ऊपर।

इस पत्रिका म हेमेन दा बहुत-सी रचनाएं देकर हम लोगा की सहायता करते।

हेमन दा हम लोगा स कई बार कहते—' बच्चे ही मेरी पुस्तक खरीद-कर मुझे खाने को देते हैं अत असल म मैं बच्चा का ही मित्र हू।"

हेमेन दा का एक अय पक्ष है सिनेमा जगत् को उनका योगदान। उन दिना म रूपवाणी सिनेमा का प्रचार सचिव था। हेमन दा इस प्रतिष्ठान के भी विशेष बधु थे और प्राय ही वे रूपवाणी घूमन आते। उसी समय प्रियनाथ गागुली महाशय ने 'काली फिल्म्स नामक एक सिनेमा स्टूडियो खोल डाला। कुछ दिनो के लिए हेमेंद्र कुमार इस सिनेमा स्टूडियो के साथ भी घनिष्ठ रूप से जुड गये। उनकी तरुणी' नामक एक पुस्तक यहा छाया-चित्र मे रूपान्तरित हुई और वही छवि रूपवाणी सिनेमा म सफलतापूवक बहुत दिना तक चली। उनकी यखेर धन' 'देडश खोकार काण्ड, आदि पुस्तकें भी परवर्ती काल म छायाचित्रा क रूप म सामने आइ और उनसे काफी पसा की कमाई हुई। हा हेमेन दा को कितना पसा मिला, यह हम लोगा का पता नहीं।

इसके बहुत दिनो बाद हेमेन दा को फिर नये सिरे से देखा युगान्तर' के 'छोटदेर पात्ताडि समाराह म। यहा मेरी नयी भूमिका थी। मैं सम्पादक था, वे लेखक। इस नयी भूमिका म भी मैंने उनसे हर समय सह-योग प्राप्त किया।

बहुत बार वे लडके के हाथ रचनाए भेज देते। कभी मैं स्वय पहुच जाता। कभी-कभी वे युगान्तर घूमने आ जाते।

सब पेयेछिर आसर' की ओर से मैंने एक नये उत्सव की शुरुआत की थी। प्रतिवष वार्षिक उत्सव म एक नये पुराने बाल साहित्यकार का अभिनन्दन किया जाता और उस विशिष्ट सध्या को बगाल के नामी साहित्यकार एक नाटक खेलकर बच्चा को आनन्द देते। यह उत्सव बच्चो म बडा पसद किया जाता।

अभिनन्दन के मामले म हम लोगो ने दक्षिणारजन मित्र मजूमदार से शुरुआत की कारण—वे थे बाल साहित्यकार बिभाग क दादाजी। इस प्रकार मैंने दक्षिणारजन, योगेन्द्रनाथ गुप्त, यामिनी कान्त सोम, सौरीन्द्रनाथ

मुखोपाध्याय, कालीदास राय आदि दिग्गज बालसाहित्य-स्रष्टाओ के अभिनन्दन की व्यवस्था की। और जब हेमेन्द्र कुमार की बारी आई, तो मैं सीधा उनके घर जा पहुचा।

मेरी परिकल्पना की बात सुनकर वे बोले—"तुम पागल हुए हो अखिल, उस सभा मे बैठकर दुनिया भर से अपना गुणगान सुनूगा ? मैं इन बातो म नही। अभिनन्दन के लिए तुम और किसी की तलाश करो।"

मैंने सिर हिलाकर आपत्ति करते हुए कहा—"नही-नही, हेमेन दा, यह नही हो सकता। पहली बात, आसर की कार्यकारिणी समिति मे प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया है। दूसरी बात, आपने बच्चो के लिए जीवन भर लिखा है—वे आपको देखना चाहते हैं। आखिर तक न रुकें, थोडी देर रुककर चले आइये। मोटी बात यह है कि मैं छोडने वाला नही। एक बार जाना ही पडेगा।"

उस दिन वे तक मे मुझे हरा नही सके और अन्त मे उन्ह राजी होना पडा।

इन दिनो हेमेन दा की तबीयत अच्छी नही थी। उत्सव से ठीक पहले वे अस्वस्थ हो गये। मगर मैं भी उन्हे छोडने वाला न था। और वे उस स्नेह के अनुरोध की उपेक्षा भी न कर सके। रोग शय्या पर लेटे-लेटे उन्होने अपना वक्तव्य बडे सुन्दर ढग से लिखकर तयार कर दिया।

मैंने वह वक्तव्य उस उत्सव-सन्ध्या को पढा। मगर जो व्यक्ति अभिनय इतना पसद करता था वह उसे देख नही पाया। उपस्थित साहित्यकारो के लिए भी यह कम वेदना की बात न थी। बाद मे ठीक होने पर अवश्य ही हेमन दा ने मालूम किया था कि उस दिन का उत्सव कैसा रहा। मैंने कहा—'उत्सव अच्छा ही रहा, मगर उत्सवपति ही उस दिन अनुपस्थित । हेमेन्द्र कुमार ने म्लानी हसी हसकर दाया हाथ अपने कपाल से जा लगाया।

हेमेन्द्र कुमार का बाकी जीवन बडे असहाय ढग से एकाकी कटा। हम लोगो की भाभी बहुत पहले बेवक्त चली गयी। लडकिया बडी हुईं, उनकी भी शादी हो गई। वे और लडका रहे। इतना बडा मकान खाने को दौडता।

बहुत बार वे छोटे छोटे लडके-लडकियों को लेकर गीतों की महफिल बिठाते, अथवा नाटक का दौर चलता। वे उन बच्चों के बीच बैठकर किशोर-किशोरियों का कविता पाठ, नृत्य-गीत प्राण भरकर उपभोग करते। सम्भवतः अपने बचपन की बात ही याद आती। बीते दिनों की रंगीन स्मृति उनके मन पर छाया डालती। एकाएक प्रकाश की झलक में उनका प्रवीण चित्त क्षणभर के लिए यौवन की सुषमा पा जाता।

यही सब बातें हेमेन्द्र कुमार के श्राद्ध-वासर से लौटकर सोचता रहा।

चलते-फिरते शब्दकोष हेमेन्द्र प्रसाद

□□

छियासी वष की उम्र मे हमेन्द्र प्रसाद हमारे बीच से उठ गये। इसलिए हम लोग अकाल मृत्यु का आक्षेप तो न कर पायेंगे, मगर जब कभी यह बात मन म आयेगी कि यह हसमुख परिहास रसिक वद्ध अब और कभी अपन घर स्नेह-आमन्त्रण न देगा, तभी हम हताशा से भर उठग।

जीवन के अन्तिम दिन तक उनकी स्मरण-शक्ति अक्षुण्ण थी।

जब किसी भी विषय मे मन मे दुविधा होती, मैं दौड जाता—सीधे हेमेन्द्र प्रसाद के पास। वे हाथ की हाथ जबानी सन्-तारीख-अवधि बताकर सारी समस्या का समाधान कर देते।

अवाक् होकर उनके मुह की ओर देखता और सोचता इनका मगज किस धातु का गढा है, एक बार देख पाता ।

हम लाग बचपन म कहानी सुनत कि आचाय जगदीशचन्द्र का मगज ब्रिटिश मरकार ने खरीद रखा है। उनकी मत्यु के बाद विश्लेषण कर दखा जायगा कि इस विश्व विख्यात वज्ञानिक के मगज मे क्या चीज छिपी हुई है।

मगर वह महज कहानी थी।

हमेन्द्र प्रसाद का मगज क्या कुछ कम कीमती है?

किस साल मे, किस राष्ट्रनायक ने, किस उपलक्ष मे, क्या बात कही है किस दिग्गज पडित ने एक अन्य मनीषी के विषय म क्या टिप्पणी की थी, किस विदशी राजपुरुष ने, भारतवष को नीचा दिखाने के लिए, क्या झूठी बात फलायी थी, किस वष भयानक भूकप आया था—ये सब बातें वे बिना काई डायरी, नोट बुक अथवा अखबार की कतरन देखे ही चाहे जिस अवस्था म बता सकत थे।

उनके इस विशिष्ट गुण का सम्यक् परिचय प्राप्त किया दीघा समुद्र तट पर पहुचकर। इससे पहल मैं इस ज्ञान वद्ध व्यक्ति से यत्नपूवक बचकर चलता।

उस बार हम लाग मेदिनीपुर के ऋषि राजनारायण पुस्तकालय के शतवार्षिकी उत्सव म आमत्रित थे। सावादिक जगत के पितामह हेमेन्द्र प्रसाद और साथ म मैं। शायद बच्चो ने मुझे चाहा था, तभी मेरी पुकार पडी।

मगर असल आकषण की वस्तु दूसरी थी। पश्चिम बगाल के तत्का लीन राज्यपाल डा० हरेन्द्र कुमार मुखोपाध्याय थे इस उत्सव के असली होता। वे सहधर्मिणी बगबाला देवी के साथ अलग से जा रहे थे। यही कारण था कि अनुष्ठान का गुरुत्व और भी बढ गया।

हम दोनो ट्रेन से जा रहे थे। सारा रास्ता हेमेन्द्र प्रसाद की मधुर रसीली बातो म न जाने कहा कट गया, पता ही न चला। स्वदेशी युग की सारी विचित्र कहानिया, प्रथम महायुद्ध मे सवाददाता के रूप म आमत्रित होकर फ्रास के रणागण निरीक्षण के अनुभव, रवीन्द्र नाथ की 'काबुलीवाला कहानी का मूल सूत्र कहा से मिला था—इन सब मजेदार पुरानी मजलिसी बातो म उन्होने पूर रास्त मन लगाये रखा।

मेदिनीपुर पहुचकर मैं नाडाजोल स्टेट के मनेजर श्री प्रह्लाद चटटो पाध्याय के घर रुका। वहा उनकी लडकी जयश्री एक सुन्दर आसर (गोष्ठी) का सचालन कर रही थी। इसलिए इस परिवार के साथ मेरा मधुर सम्पक स्थापित हो गया था। नाडाजोल की रानी श्रीमती अजलि खान भी हम लोगो की गोष्ठी की सरक्षिका थी। उनकी लडकी राज्यश्री हमारी पातताडि और गोष्ठी की सदस्या थी। सभी ओर म एक प्रीति फल्गुधारा बहने लगी।

वहा जाकर राज्यपाल डा० हरेन्द्र कुमार के साथ नये सिरे से भेंट और बातचीत हुई। बगबाला देवी न भी हम लागा के प्रति बडा प्रेमभाव व्यक्त किया।

ऋषि राजनारायण पुस्तकालय का उत्सव उसके सामने वाले मदान म ही सम्पन्न हुआ। उद्योग आयोजन म कही कोई कमी न थी। नाडा-

जोल के तत्कालीन राजा श्री अमरेन्द्रलाल खान और रानी श्रीमती अजलि खान स्वागत समिति मे सबसे आगे थे, अत उत्सव मे कोई कमी न रही। मेदिनीपुर के विभिन्न अचलो के अनेक विद्योत्साही व्यक्तियो, शिक्षक-शिक्षिकाओ और छात्र छात्राओ ने उपस्थित होकर अनुष्ठान को हर तरफ से सफल बनाया। 'उदघाटन सगीत' के बाद डा० हरेन्द्र कुमार मुखोपाध्याय ने उद्घाटन भाषण दिया। अनुभवी सवाददाता और साहित्य कार श्री हेमेन्द्र प्रसाद घोष ने एक ज्ञानगर्भित भाषण दिया। उससे ऋषि राजनारायण के विषय म अनेक ज्ञातव्य बाते मालूम हुईं। राज्यपाल के आह्वान पर मुझे पुस्तकालय की आवश्यक्ता के विषय म वक्तता करनी पडी।

अनुष्ठान बहुत लम्बा न होते हुए भी बडा मर्मस्पर्शी था। उपस्थित लोगो ने उत्सव मे भाग लेकर विशेष आनन्द प्राप्त किया।

नाडाजोल की रानी ने एक अनौपचारिक चाय-गोष्ठी पर हम लोगो को आमन्त्रित किया। वही पता चला कि अजलि देवी बडी सुन्दर चित्रकारी करती हैं और उनका सूचिकाशिल्प (सुई का काम) भी देखने योग्य है।

हेमेन्द्र प्रसाद इस परिवार के बहुत पुराने मित्र और शुभाकाक्षी थे इसलिए अजलि देवी ने हर समय उन्हे माननीय अतिथि का सम्मान दिया।

तत्पश्चात् एकाएक निमत्रण आया नाडाजोल स्टेट स। मेदिनीपुर आकर समुद्रतट पर स्थित दीघा भ्रमण को जायेंगे न। दीघा के समुद्रतट पर नाडाजोल पैलेस है। वही हम लोगो को ठहरना होगा।

मगर इस भ्रमण के लिए तैयार होकर तो नही आये। साथ म अतिरिक्त कपडे-लत्ते भी नही थे। राजबाडी का अतिथि बनना पडेगा, इसलिए थोडा हिचकिचा रहा था।

मेरी दुविधा देखकर हेमेन्द्र प्रसाद ने उत्साहित करते हुए कहा—'अरे डर किस बात का अखिल बाबू मैं तो हू साथ मे। बगाल का समुद्र-सैकत देखने का यह सुयोग हर समय नही मिलेगा। वहा नाडाजोल स्टेट का विराट प्रासाद-तुल्य भवन है—नाडाजोल पलेस। और जानते ही हो,

हम लाग राजबाडी के गेस्ट होकर जा रहे हैं। और फिर, असली बात आप अब भी नही जानत।'

मैं बाला— असली बात और क्या है?'

मदु मुस्कान क साथ स्वभावसिद्ध रसिकता बरत हुए वे बाल— स्वय राज्यपाल सपत्नीक समुद्र-दर्शन करने दीघा जा रहे हैं—नाडाजाल क अतिथि हाकर राज्यपाल जायेंगे ता उनक सगी-साथिया की भी ता जरूरत होगी। इसलिए हम लोगा को भी निमत्रण मिल गया।" कहकर व बच्चा की तरह हा हा कर हस पड।

मगर मैं जानता था कि हमेन्द्र प्रसाद की यह बात सही नही। मुझे इसस पहले ही पता चल गया था कि व नाडाजोल परिवार क तीन पीढिया के विशप मित्र एव शुभाकाक्षी हैं। नाडाजोल के देवन्द्रलाल खान और नरेन्द्रलाल खान बगाल क स्वाधीनता आदोलन क विशेष समथक थे। इतना ही नही वे गुप्त रूप से विप्लवियो को आर्थिक सहायता देत और वे लाग विपद म पडत तो अपन राजमहल के गुप्तकक्ष म छिपाकर रखते। इसीलिए यह परिवार एकाधिक बार ब्रिटिश सिंह के रोषानल का शिकार हुआ था। य सब बातें मैंने अनुभवी सवाददाता हम हमेन्द्र प्रसाद के मुह से ही सुनी थी।

एक तो दीघा समुद्र तीर के दशन ऊपर स हरन्द्र कुमार जस राज्यपाल का साहचय। अतएव कपड-लत्ता की पूरी व्यवस्था न हात हुए भी राजी हो गया। हमन्द्र प्रसाद की बात भी अकाटय थी। इस प्रकार क भ्रमण का सुयोग कदाचित ही मिलता है। सबसे ऊपर बगाल की कहावत आई लक्ष्मी को ठुकरात नही।

नाडाजोल स्टेट से फिर सवाद आया कि अगले दिन बडे तडके हम दोना जीप स दीघा समुद्र-तीर के लिए रवाना होंगे। हमार साथ रहग नाडाजोल स्टेट क एक अतिरिक्त मनेजर। याद म रास्ते म हम लोगा को कही कोई कष्ट या असुविधा हो इसलिए स्टेट की रानी ने यह व्यवस्था कर दी थी। व उसी दिन तीसरे पहर दीघा आने वाली था।

सुबह बडी जल्दी या ही मेरी नीद खुल जाती है अत नियमानुसार सार काम पूरे कर लिय। थाडी ही देर बाद नीचे जीप के हान की आवाज
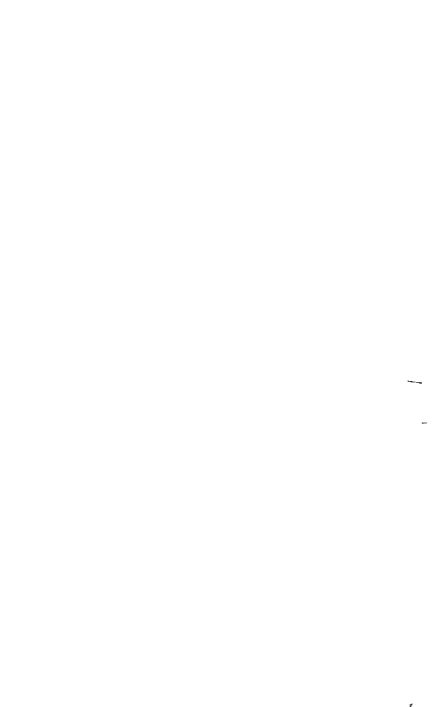
मैंने मजाक किया— 'तो हम लोग हुए एडवांस पार्टी ?"

हेमेन्द्र प्रसाद बोले— हां यह कह सकते हैं। मगर महारानी ने हम लोगों के लिए कोई कमी नहीं रखी। जाने के लिए जीप, साथ में स्वयं कमसचिव और टिफिन करियर भरकर मांस, पूड़ी, मिठाई आदि। इस लिए स्वर्ग कहीं है तो यहां यहां यहां।' उनके बात करने के तरीके से हम सब पुलकित हो गये। यहां तक कि हम लोगों का सारथी बंधु भी १५ बार पीछे देखकर मुस्कराने लगा।

इस बार मैंने थोड़ा आसन बदलकर पूछा— अच्छा, मनेजर साहब, मेदिनीपुर से दीघा समुद्रतीर कितनी दूर है ?"

मनेजर साहब के जवाब देने से पहले ही हमारे सारथी ने कहा— "जी निन्यानबे मील।

मैंने क्षोभ व्यक्त करते हुए कहा— 'चच ! सिर्फ एक मील के पीछे बात कुछ बेतुकी हो गई ! मेदिनीपुर आये—ऋषि राजनारायण पुस्तकालय के शतवार्षिकी उत्सव में—वहां से जा रहे हैं दीघा समुद्रतट पर। और सिर्फ एक मील के लिए हमारे भ्रमण-पथ की शतवार्षिकी पूरी न हो सकी ?'

हेमेन्द्र प्रसाद कौतुक के साथ बोले—' इसे निन्यानबे का धक्का भी कह सकते हो !

निन्यानबे का धक्का ही है ! आपने ठीक कहा।'

इस बीच हमारे सारथी मित्र ने जीप की स्पीड और तेज कर दी। एक तो सुबह का खुला रास्ता ऊपर से जीप की यात्रा। रास्ता भी पिच का बना हुआ। युद्ध के कारण हमारे पथ घाट आदि बड़े अच्छे हो गये हैं। इस-लिए रथ यदि द्रुत गति से दौड़े तो दोष नहीं !

खुली सड़क देखकर हेमेन्द्र प्रसाद भी खूब मूड में हैं। उनकी सफेद चादर पताका की तरह फर फरकर उड़ रही है। बहुत लोग शायद यह नहीं जानते कि यह अस्सी साल का बच्चा एक चलता फिरता शब्दकोश और एनसाइक्लोपीडिया है। वर्तमान काल में ऐसा स्मरण शक्ति-सम्पन्न व्यक्ति मैंने और दूसरा नहीं देखा।

मैं हेमेन्द्र प्रसाद के साथ अनेक सभा समितियों में गया हूं। ऐसी

हम सचमुच ही धन्य हो गये। कहानी आकर पहुँची नाडाजोल के राज परिवार की घरेलू बातों पर। देवेन्द्रलाल खान और नरेन्द्रलाल खान के दान और उदारता की बहुत सी बातें उनसे पता चलीं।

दिन चढता जा रहा है मगर उस तरफ हेमेन्द्र प्रसाद का ध्यान ही नहीं। एक बार भी रुककर यह नहीं कहा कि बोलते बोलते गला काठ हो गया बडी प्यास लगी है। इस उम्र में भी वे आचार-आचरण में पक्के सैनिक हैं। निन्यानवे मील का लंबा रास्ता, मगर कोई बेचैनी नहीं दिखाई, थोडा सरककर बैठने के लिए नहीं कहा कहीं भी गाडी रोकने को नहीं कहा—वृद्धावस्था के स्वाभाविक प्रयोजन से भी।

सिर्फ गल्प—गल्प-और गल्प। मैं मन-ही मन कहने लगा, ये चले जायेंगे तब गल्प कौन सुनायेगा? आखिर वे हम लोगों को मस्त बनाये रहे। जब जिस इलाके से गाडी गुजरती वे मनेजर साहब से एक बार उसका बस नाम पूछ लेते उसके बाद बिना रुके बोलते जाते—उस इलाके की किंवदन्ती और पूरी कहानी।

रास्ते में हमने गौर किया कि राज्यपाल के आगमन के उपलक्ष में रास्ते के अनेक भागों में नये सिरे से मिट्टी भरवाकर उस गाडी के उपयुक्त बनाया गया है। कई एक पुलों का भी सस्कार-उद्धार किया गया है। अन्यथा इतने आराम से हम लोगों का रथ अग्रसर नहीं हो पाता।

ग्यारह बजे के कुछ बाद ही हमारी जीप नाडाजोल पैलेस जा पहुँची। शायद पहले से ही वहां सूचना थी। जीप की आवाज सुनकर भृत्य और मालियों का दल सामान उतारने के लिए दौडा आया।

हेमेन्द्र बाबू का और मेरा स्वयं का सामान तो बडा ही सामान्य था। मगर साथ में थी खाने की जबरदस्त गठरी। बडे तरीके से अच्छी तरह से बंधी-कसी।

जीप से उतरकर एक मुहूर्त का विश्राम नहीं। हेमेन्द्र बाबू गम्भीर स्वर में बोले—'चलिए अखिलबाबू समुद्रस्नान कर आयें मानो कि यह कोई अनुरोध नहीं, सीधा फॉल इन का आदेश था। अस्सी साल के बच्चे का उद्यम बडा देखकर मेरा उत्साह भी बढ गया। हम तीनों ने धोती अंगोछे लेकर समुद्रतट की ओर कदम बढाये।

समुद्र नाडाजोल पैलेस के अति सन्निकट है। पहले एक झाऊ वन, फिर निजन समुद्र तीर। हा, पुरी की तरह जन-कोलाहल मे जरा भी मुखरित नही। वगदेश का स्निग्ध एकात कोना है। हमारे पहुचते ही समुद्र तीर के छोटे छोटे केंकडे गर्तों म भाग गय। इन केंकडो के चलने से बालू के ऊपर सुन्दर नक्शे तैयार हो गय—फोटो लकर अखबार म छपाने लायक।

दीघा समुद्रतीर की विशेषता है—दीघ समतल समुद्र-सैकत। यहा विमान तक उतर सकता है, ऐसा सुन्दर प्रकृतिक 'रनवे' बना हुआ है। यह समुद्र-सैकत उडीसा की सीमा तक समान रूप से सीमेण्ट की तरह जमा हुआ लगता ह। पास पास पाच छह गाडिया मजे से चल सकती ह। पृथ्वी पर बहुत कम समुद्रतट इतने चौडे और विमान अवतरण के योग्य होग।

समुद्र स्नान करते-करते ही दीघा-आविष्कार की कहानी सुनने को मिली। हमिल्टन कम्पनी के साहब का एक निजी छोटा विमान था। उस पुष्पक-रथ पर चढकर वे खाली समय मे खूब उडते घूमते थे। एक बार इस दीघा समुद्रतट पर उतरे। यह तीर और निजन परिवेश देखकर जगह बडी पसद आई। उन्होने बडे चाव स यहा एक मकान बनवाया और सपत्नीक सप्ताहान्त बिताना शुरू किया। उन्होंने दीघा की सम्भावनाओ पर एक सचित्र प्रबध स्टेट्समन मे प्रकाशित कराया। तभी स सभ्य समाज की नजर दीघा पर पडने लगी। नाडाजोल के मैनेजर ने बताया कि नाडाजाल पैलेस उसके बाद तयार हुआ था।

समुद्र के किनारे बडी सुन्दर हवा थी, अत धूप की गर्मी हम लागो को सहन न करनी पडी। यहा का समुद्र बहुत ही उथला है बहुत दूर तक पदल चला जा सकता है।

स्नान कर लौटे, तो जबरदस्त राजभोग की व्यवस्था। इसके बाद दोपहर की दिवा निद्रा क्या छोडी जाती है? हेमेन्द्र बाबू यो दोपहर का सोते नही मगर उन्होंने भी थोडी झपकी ले ली।

तीसरे पहर हाथ मुह धाने के बाद चाय का दौर। हम लोग घूमने जाय कि नही,यही बात सोच रहा था कि कोलाहल स पता चला कि नाडा-

जाल के राजा रानी आ पहुचे हैं। साथ म राजकुमारी कल्याणी या राज्यश्री है। राजकुमारी के बडे होने पर कलकत्ता म जब धूमधाम स उसकी शादी हुई, तब भी मैं नाडाजाल के निमत्रण पर विवाहोत्सव म उपस्थित था।

खान-पीन की बहार देखकर मैंने हेमेन्द्र प्रसाद के कान म कहा—देखिये, हमारे बगाल म ग्रामीण अचल म एक कहावत है

जामाइर नाम मार हास
गुष्टिसुद्ध खाय मास।'

(भावाथ शिकार होता है जमाई के नाम स मास खाता है कुनब भर के लोग)

यहा दख रह हैं कि राज्यपाल दम्पति के लिए जो खाद्यसभार लाया गया है उमे हमारी ता क्या बिसात, स्वय बक राक्षस भी आकर ठिकाने नहीं लगा सकता।'

हमेन्द्र प्रसाद चारा ओर दखकर मद-मद मुस्करान लग।

शाम को सपत्नीक राज्यपाल पधार। साथ म राजाचित 'एडकाग' द्वय, आनुषगिक गाडिया की फौज सरकारी कमचारीगण सरकारी फोटोग्राफर आदि

डा० हरेन्द्र कुमार और हेमन्द्र प्रसाद के साथ मैंने यहा जो तीन दिन बिताये और जो आनद प्राप्त किया, उसका इतिहास मैंन हरेन्द्र कुमार से सम्बद्ध निबध म पृथक रूप स दिया है।

छियासी वष की उम्र म जब हेमेन्द्र प्रसाद हमारे बीच स चले गये, तो आत्मीय वियोग-व्यथा का अनुभव किया।

आज याद आती है उस विराट आयोजन की बात। कलकत्ता लौटन पर अजलि देवी न अपन पिता के घर पर एक जबरदस्त प्रातिभाज का व्यवस्था की थी हम लागा को आमत्रित किया था। वहा हेमेन्द्र प्रसाद की मजेदार बाता न हम सबको रह रहकर आनद सागर म तैराया था। उस भोज के वक्त अजलि देवा के भाइया ने कई फोटो खीचे थ।

हेमन्द्र प्रसाद ने रसिकता करत हुए मुझसे कहा—"अजलि न हम

लोगा को पेट भरकर खिलाया यह बात अस्वीकार करने का कोई उपाय नही। ये फोटो इस बात के साक्षी रहे।"

'सब पेयछिर आसर' के एकाधिक उत्सव-अनुष्ठाना मे उन्होन स्वत आकर बच्चा को बडी मजेदार कहानिया सुनाई है यह बात कभी भुलाई नही जा सकती।

हमेन्द्र प्रसाद—पत्रकारिता जगत् के विसमाक, हेमेन्द्र प्रसाद—कुशल पत्रकार, हेमन्द्र प्रसाद—एनसाइक्लोपीडिया, हेमन्द्र प्रसाद—चलते फिरत शब्दकोश हमेन्द्र प्रसाद—भोजन विलासी। इस प्रकार की बाते बराबर सुनते आय हैं मगर उतके भीतर जो एक शिशु मन छिपा हुआ था उसका पता चला आसर' के काम मे, उनके सानिध्य मे पहुचकर। उन्होन बहुत पहले बच्चो के लिए बडी मजेदार कहानिया लिखी है और वे पुस्तके बगाल के विभिन्न प्रकाशका ने प्रकाशित की हैं—यह बात आज शायद पाठक भूल गये हैं। मैंने उनकी कुछेक पुस्तके पढी है पढकर मैं सचमुच ही मुग्ध हुआ हू। उनमे से बहुत-सी पुस्तके बाजार मे उपलब्ध नही इस आर मैन हेमेन्द्र प्रसाद के गुण मुग्ध प्रकाशको का ध्यान आकर्षित किया है।

कहानी लेखन की अपेक्षा कहानी सुनाने के काम म व और भी अद्वितीय शिल्पी ह।

'स्वपन बूडार सफर' म मैंने दीघा भ्रमण की बात लिपिबद्ध की, तो उस पुस्तक को पढकर उन्होंने उच्छवसित प्रशसा की और उस भ्रमण-कहानी के विषय मे युगान्तर' (छोटोदेर पातताडि) मे एक सुन्दर निबध लिखा।

आशीर्वादी फूल की तरह स उनकी वह प्रशसावाणी मेरी साहित्यिक जीवन यात्रा मे पाथेय बन गयी है।

अनेक सभा समितिया मे हम दोना साथ-साथ गये है। सीढिया चढते उतरते यदि उनका हाथ पकडकर सहायता करने जाता, ता मेरा हाथ अलग कर मदु हास्य के साथ कहत—'अभी इतना अशक्त नही हुआ। किसी का सहारा लिये बिना भी चढ सकता हू।'

ए० बी० स्कूल मे अनुष्ठित शिशिर कुमार की एक स्मरण-सभा म उन्होने इसी प्रकार मेरा फला हाथ अलग कर दिया था। आखिरी समय तक

उनमें कितना मनोबल था—इसी बात का परिचय इस घटना से मिलता है।

हमेन्द्र प्रसाद ने बंगाली की पोशाक—धोती चादर—को ईमानदारी से ग्रहण किया था। बिना चादर (दुपट्टा) रास्ता चलना नहीं जानते थे।

और खाने के बड़े प्रेमी थे। मगर उनके उस भोजन में एक नियम शृंखला थी जिसे देखकर मैं मुग्ध विस्मित हो गया हूँ। रोज रात को मांस के बिना उनका काम नहीं चलता। बहरहाल वह मांस खाते थे थोड़ा ही।

यदि कभी किसी विषय में शंका हुई है तो सीधा हमेन्द्र प्रसाद के पास चला गया हूँ। अपना काम छोड़कर अपने उस विराट संग्रहालय से मदद लेकर प्रकृत विषय बताने में उन्होंने जरा भी आपत्ति नहीं की। ज्ञान परिवेषण के काम में वे ऐसे ही अक्लान्त कर्मी थे।

उनकी मृत्यु से पहले—सरस्वती पूजा के कुछेक दिन पूर्व एक बात जानने के लिए सुबह के समय उनके घर पहुंचा। जानने की बात थी सुभाष चन्द्र ने क्या सचमुच ही ओटन साहब के शरीर पर आघात किया था?

उस वक्त वे अस्वस्थ थे। एक आराम कुर्सी पर लेटे हुए थे। चेहरा बड़ा म्लान था। सदा हंसते रहनेवाले आदमी को इस तरह पस्त देखकर मन ही कष्ट हुआ। इससे पहले जब भी गया, उन्होंने रसिकता के साथ बात शुरू कर दी। आज उन्हें इस हालत में परेशान करने में बड़ी शर्म आयी।

बड़े क्षीण स्वर में बोले—'देखिए अखिल बाबू बात सही है। 'ओटेनाइज' शब्द इसीलिए तत्कालीन छात्र समाज में प्रचलित हुआ था।

आज सुभाष चन्द्र महापुरुष हैं, इसीलिए शायद बहुत से लोग उनके शरीर पर काला दाग लगाना नहीं चाहते। मगर सत्य को अस्वीकार करने का उपाय नहीं।

वे थोडी देर स्तब्ध बैठे रह, फिर बोले—' अच्छा मैं थोडा ठीक हो जाऊ इस विषय म आपकी 'पातुताडि' के लिए एक छोटा निबध लिख दूगा। आप फिर एक दिन आइये।"

आज कुण्ठा-जडित स्वर से स्वीकार करता हू। फिर एक दिन उनके आगे हाजिर नही हो सका। 'आसर' के तरह-तरह के कामो की दौड धूप म व्यस्त रहा।

इस बीच ज्ञान वृद्ध हेमन्द्र प्रसाद परलोक सिधार गय।

सिफ एक बात आज मन मे उठती है—हेमन्द्र प्रसाद के उस विराट सग्रहालय का दायित्व अब कौन लेगा ?

दानवीर हरेन्द्र कुमार

□□

बहुत दिन पहले की बात है।

नये वर्ष के एक पुण्य प्रभात को देशबन्धु पार्क में बातें हो रही थीं।

पश्चिम बंगाल के राज्यपाल डा० हरेन्द्र कुमार मुखोपाध्याय पधारे हैं— सब पेयेछिर आसर' के नववर्ष उत्सव की अध्यक्षता करने।

और इसी दिन सुबह मुझे विमान द्वारा योरोप जाना पड रहा है। उद्देश्य भारत के एक प्रतिनिधि के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय शिशु-रक्षा (डिफेंस आफ चिल्ड्रन) सम्मेलन में योगदान। यह सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है आस्ट्रिया के वियेना शहर में। पृथ्वी के विभिन्न अंचलों से चौंसठ देशों के प्रतिनिधि इस सम्मेलन में योगदान कर रहे हैं, उनमें भारत अन्यतम है।

हजारों बच्चे समवेत व्यायाम प्रदर्शन के लिए मैदान में पंक्तिबद्ध खड़े हैं।

उसी अवसर पर मेरी योरोप-यात्रा के संबंध में डॉ० हरेन्द्र कुमार के साथ बातें हो रही थीं।

विदेश-यात्रा के उद्देश्य की बात सुनकर वे खुश हुए। वहां प्रवास के दौरान मुझे क्या-क्या करना चाहिए, इस विषय में उन्होंने कुछ उपदेश दिया। फिर ठेठ बंगाली अभिभावक की तरह बोले—'तो रवाना होने से पहले भात और माछझोल खाना चाहिए न?'

मैंने भी सिर हिलाकर उत्तर दिया— 'जी हां झाल भात और दही-शक्कर।

उन्होंने मृदु हास्य के साथ सहमति व्यक्त की। यही हैं विशुद्ध बंगाली हरेन्द्र कुमार।

बाहर के लोगों की ऐसी धारणा है कि डाक्टर हरेन्द्र कुमार अंग्रेजी

भाषा के प्रोफेसर है, वे ईसाई है, वे पश्चिम बगाल के राज्यपाल हैं अतएव व निश्चय ही टिपटाप साहब ह। लेकिन वे अपने घर पर ठेठ बगाली की तरह मुड्ढे पर बठकर नगे-बदन हुक्का पीत थे, यह बात बाहर के कितने लोग जानत है ? मरा सौभाग्य था कि मैंने हरेंद्र कुमार के उस ठेठ बगाली रूप को देखा।

बहुत स्थानो पर वे रसिकता के साथ कहत 'अरे असल म मैं भिखारी बामन हू—यह बात मैं कम भूल सकता हू ? तभी तो, जहा भी जाता हू स्थान-काल-पात्र भूलकर तपेदिक के मरीजा क लिए मदद माग बैठता हू। इसमे मुझे कोई शम नही। आइ एम ए प्रॉफेशनल ब्रह्मिन बेगर ! (मैं पशेवर ब्राह्मण भिखारी हू)।" कहकर वे स्वभावसिद्ध सरलता की हसी हसने लगते। जिन लोगा ने वह हसी देखी है, वे जानते है कि यह आदमी कितना सच्चा है।

एक बार इसी प्रकार के एक सहायता कोष के लिए उन्हाने बम्बई अचल से सिनेमा-तारिकाआ को बुलाकर एक जलसे का आयोजन किया था। इस बात पर बहुत से पत्रा न उनकी यह कहकर निन्दा की थी कि राज्यपाल होकर व सिनेमा-तारिकाआ के साथ बहुत अधिक मिल-जुल रहे है।

हरेंद्र कुमार हसकर बोले—'क्या, इसम ऐसी क्या बुरी बात ? तारिकाए क्या इस देश की रहने वाली नही ? उनकी सहायता क्या नही लूगा ?

फिर मजाक करते हुए बाले—'मैं ब्राह्मण हू, मैं जानता हू—ब्राह्मण को थोडा खाना या उसकी जगह कुछ धन दे दने से सारे पाप कट जाते हैं। शास्त्र कहत हैं।'

बहुत बार मेरे मन म यह बात आई है कि बगाल के बाघ सर आशुतोष और डा० हरेंद्र कुमार ठीक एक जाति के व्यक्ति हैं। एक ही धातु के गडे। पाश्चात्य शिक्षा उनके बगालीपने को जरा भी नष्ट नही कर सकी।

उन्ह और भी अच्छी तरह पहचानने का सुयोग मिला—दीघा समुद्र-तीर पर नाडाजोल पैलेस म कुछेक दिन सुबह से रात तक साथ-साथ बिताकर।

यह व्यक्ति एकदम जैसे कि गंगाजल में घुला हुआ विल्वपत्र हो।

हमेन्द्र प्रसाद के प्रसंग में उस दीघा भ्रमण के बारे में पहले ही कुछ-कुछ बता चुका हूं। यहां इस व्यक्ति हरेन्द्र कुमार को मैंने कैसा देखा और समझा, इस विषय में अपना निजी अनुभव लिपिबद्ध करूंगा।

वही दीघा का नाडाजोल पैलेस।

हमेन्द्र प्रसाद के साथ मैं सुबह पहुंचा था। राज्यपाल सपत्नीक पहुंचे शाम को। उनके साथ गजाचित ए०डी०सी० द्वय गाड़ियों की पूरी कतार, सरकारी कर्मचारी और फोटोग्राफर

इसी बीच नाडाजोल की रानी अंजलि खान ने नौकर चाकरों को लेकर दौड़ भागकर विभिन्न कमरों में सभी के रहने की व्यवस्था कर दी है।

एक बड़ा डाइनिंग हॉल है। वहां हम कुछ लोग एक साथ बैठकर चार वक्त खायेंगे-पीयेंगे। और एक कोने में एक बैठक है—बड़ी सुंदर, सुसज्जित।

भीतरी भाग में घुसते ही जो लंबा बरामदा है वहीं शाम के वक्त हम लोगों की गोष्ठी जमती।

राज्यपाल आये। कहां छत्रवाहिनी, कहां करकवाहिनी, कहां मदिरावाहिनी? कहां है ताम्बूलवाहिनी और किधर है उनकी व्यजनकारिणी?

शिक्षाविद् डा० हरेन्द्र कुमार ने आकर सबसे पहले दो चीजों की तलाश की। एक मुड्ढा और एक हुक्का! सुनकर तरुण राजा रानी हकबका गये। यह क्या राज्यपाल के स्वागत योग्य चीज है?

मगर राज्यपाल होने से क्या होगा? हरेन्द्र कुमार तो एक बारगी पक्के बंगाली हैं। अतएव, उन्हें मुड्ढा और हुक्का अवश्य ही चाहिए।

मुझे याद आई वही पुरानी बात। हरेन्द्र कुमार ने जब राज्यपाल के रूप में कार्यभार ग्रहण किया था, तब उनके एक सहपाठी मित्र ने एक मजेदार कविता लिखी थी। इस स्वपनबुडो ने ही तब हुक्का हाथ में लिये मुड्ढे पर नंगे बदन बैठे हरेन्द्र कुमार का एक फोटो 'युगान्तर' पत्रताड़ि में प्रकाशित किया था।

इस बात को लेकर उस वक्त खूब हाहा हूहू मची थी। एक बार सर

वहरहाल दीघा का सस्मरण सुना रहा था।

सन्ध्या के समय हम लोग राज्यपाल दम्पति को लेकर समुद्रतट पर घूमने गये। लगता था जैसे सीमेण्ट किया हुआ चौडा राजमार्ग हो। बडी सुन्दर सन्ध्या-कालीन हवा थी। क्रमश वह हवा तूफानी हवा मे बदल गई। रवीन्द्रनाथ का वह गीत याद आया—

क्षोडा हाओया—
जाय ना सओया
की जानि कमन मन करे।।'

(भावार्थ तूफानी हवा सहन नही होती न जाने मन कैसा हो रहा है।)

सत्य ही समुद्र तीर पर घूमने जाओ तो मन मानो असीम शून्य मे भाग जाना चाहता है।

नाडाजाल के राजा रानी और राजकुमारी भी हम लोगो के साथ हैं। इस वक्त हम गल्प सुनाती जा रही हैं सिर्फ श्रीमती अजलि खान। दीघा की कहानी नाडाजाल पैलेस की निर्माण कहानी, उनके ससुर बहूरानी को कितना चाहते थे—यही सब बातें। यह पैलेस उनके श्वसुर उन्हे दान कर गये हैं।

अगले दिन से एक नयी बात देखने मे आई। बडे तडके ही राजा रानी बावर्चीखाने मे जा घुसे है। उद्देश्य अपने हाथो से तरह-तरह की स्वादिष्ट चीजें तैयार कर अतिथियो को तृप्त करना। इस विषय मे स्वामी-स्त्री दोनो का ही बडा नाम है। यदि गृहिणी रधनकार्य मे द्रौपदी है, तो स्वामी है रसोइया भीमसेन।

स्वामी का चेहरा अवश्य ही भीमसेन से मेल नही खाता। हसमुख अल्पभाषी आदमी हैं। मगर उनका खाना बनाना ग्रेट ईस्टर्न होटल के बावर्चियो को भी पीछे हटना पडेगा।

उस दिन रात्रिभोज के दौर मे अजलि खान राज्यपाल की ओर देखकर मजाक करते हुए बोली—"सरकार तो जमीदारी प्रथा खत्म किये दे रही है। इसलिए इन्होने तय किया है कि दीघा समुद्र तीर पर इस नाडाजाल पैलेस मे एक आधुनिक होटल खोलेगे। पति पत्नी मिलकर बावर्ची का व्रत ग्रहण करेगे।"

डिनर टेबल से एक हसी का फव्वारा फूटा। राज्यपाल सुनकर मद-मद मुस्करा रहे हैं और खाते जा रहे है।

इस प्रकार सुवह दोपहर शामरसीली बाता से भोजन कक्ष क्षण क्षण पर मुखरित हो उठता। वक्ता कभी कोई, कभी कोई। हेमन्द्र प्रसाद हरेन्द्र कुमार, वगवाला देवी अजलि देवी, फिर कभी मैं।

सबसे कम बातें करते नाडाजोल के तरुण राजा अमरेन्द्रलाल खान। व सभी की वातें वडे ध्यान से सुनते और मद-मद मुस्करात। लडकी राज्यश्री भी खूब कम बोलती है। वह उन दिना क्लासिक्ल सगीत सीख रही थी।

एक दिन मैंने राजकन्या राज्यश्री से कहा—"तुम्हारे माता पिता के परिश्रम का तो अत नही। रात दिन नये नये पदाथ हाथ स तयार कर खिला रहे हैं। मगर तुम वडी मौज मार रही हो। एक दिन कम से-कम गाना तो सुनाओ "

वह बोली—'कैसे सुनाऊ? यहा हारमोनियम नही, और तानपूरा भी नही लायी। यहा इन सब चीजा की तो व्यवस्था ही नही।

मैंन कहा— तब तो तुमन हम लोगा को सब तरफ से धोखा दिया "

(कुछेक वर्षो बाद उसका गायन मदिनीपुर म सुना और उसके विवाह मे कलकत्ता के नाडाजोल हाउस मे खूब दावत खाई।)

हेमेन्द्र प्रसाद बोले—विशेष अतिथि के आन के बाद हम लागा का समुद्र स्नान ब द होने को आ गया।'

सुनकर सभी ह ह कर उठे। बोले—"ऐसा काम हरगिज न कीजिय। यहा के समुद्र म पानी बहुत कम है इसलिए हागर आती जाती है।

हागर! यानी शाक मछली!

सुनकर हम लाग ता डर गये। हम तो पहले ही दिन आने क बाद नहा कर आये है। तब तो कुछ नही हुआ!

स्थानीय जानकार लोग बोले—"मगर किसी भी मुहूत हो सकता है। पुरी के समुद्र की तरह यहा ब्रेक्स नही है इसलिए छोटी छोटी शाक किनारे तक आ जाती है! हाथ पैर काटने मे उन्हे कितनी देर लगती है।"

सुनकर हम लोगों के हाथ पैर पेट के भीतर सिकुड़ गये।

अमरेन्द्र बाबू ने बताया— स्नान की वैकल्पिक व्यवस्था भी है। हम लोगों के पलस में एक स्विमिंग पूल है। आज ही उसका पानी निकालकर ताजा जल भरने के लिए कह देता हूं। वहीं मजे से "

स्विमिंग पूल की बात से हम सभी बड़े पुलकित हुए। इस मामले में राज्यपाल का उत्साह भी बिलकुल कम न था। उन्होंने कहा कि वे भी हम लोगों के साथ तालाब में स्नान करेंगे। इसके बाद हम लोग जितने भी दिन दीघा में राज-अतिथि रहे राज्यपाल हरेन्द्र प्रसाद अमरेन्द्र बाबू और मैं एक साथ उस स्विमिंग पूल में आनंदपूर्वक नहाते धोते।

स्नान के वक्त हरेन्द्र कुमार का हंसी मजाक हम लोगों का प्रतिक्षण उच्छवसित करता रहता। उन मधुर क्षणों की सुखद स्मृति आज भी मन में जगती है। उन आत्मविभोर हंसते हंसाते हरेन्द्र कुमार को अब आर अपने बीच नहीं देख पायेंगे।

रोज स्नान से पहले वे मुड्ढे पर बैठकर सारे शरीर में तेल मालिश करते। यह आदत मुझे भी हमेशा रही है। अतएव उस लंबे बरामदे में हमारी सरसों के तेल की मालिश प्रतियोगिता होती, जिसमें हम लोग किसी भी दिन हरेन्द्र कुमार को हरा नहीं सके।

तेल मालिश के साथ साथ देश विदेश की नाना प्रकार की चर्चाएं, इतिहास की बातें और साहित्य-समालोचना होती। वह सब जितना शिक्षाप्रद उतनी ही मनोरंजक।

हम लोगों को बार बार उस मेज पर जो बढ़िया-बढ़िया चीजें परोसी जाती इतने दिन बाद उनकी तालिका पेश करना मुश्किल है। एक छोटा-सा उदाहरण देकर समझाता हूं।

एक दिन सुबह चाय का दौर पूरा होने पर नाडाजोल के राजा रानी बोले—'आज आप लोगों को एक नयी चीज खिलायेंगे। मगर वह किस तरह से तैयार की गई है यह आप लोगों को बताना होगा।

कहकर वह तरुण राजदम्पति नाटकीय भाव से वहां से उठकर चला गया। हम लोग सोच सोचकर हार गये कोई बात दिमाग में न आई।

राजकन्या को पकडा। वह भी कुछ न बताये। मा बाप की तैयार की हुई पहेली का उत्तर वह पहल से क्या बताने लगी ? हमन्द्र प्रसाद दाढी खुजलाते हुए बोले— 'आज तो वाकई समस्या मे पड गये।"

डा० हरेन्द्र कुमार मुह से बिना कुछ कहे हुक्के से घन घन आनद-कश खीचने लगे।

दोपहर का अन्याय राजभोगो के साथ आई एक प्रकार की रबडी। उसे रबडी भी कह सकते है, खीर भी मान सकते हैं। सभी स्वाद ले लेकर खाने लगे।

अजलि देवी अपनी पहेली की बात भूली न थीं, बोलीं— अब बताइये किस चीज से बनी है यह ?"

मैंने उत्तर दिया— यह कौन सा मुश्किल प्रश्न है ? खालिस दूध से '

तरुण राजदम्पति हसने लगा।

मगर युधिष्ठिर का शाप है—महिलाओ के पेट मे कोई बात छिपी नहीं रहती। अन्त मे नाडाजोल की रानी ने ही बात खोल दी— यह सिर्फ प्याज की खीर है "

हम सब तो जैसे आसमान से गिर पडे।

हरेन्द्र कुमार ने पूछा—"मगर प्याज की गध कैसे खत्म हो गई ?"

वह राज भी मालूम हुआ। अजलि देवी ने गम्भीर होकर कहा— प्याज को सिद्ध कर एक विशेष प्रक्रिया द्वारा सौ बार धोया गया है। तभी वह एकदम दुर्गन्धमुक्त हो गई है। अब इसे रबडी के अलावा कुछ नहीं कह सकते।

पाक प्रणाली सुनकर हम सभी आश्चर्य मे डूब गये। हा इसी को कहते है राजकीय पहेली।

मैंने चुटकी ली— आप लोगो का वह प्रस्तावित दीघा होटल चालू हो जाय, तब हम सबको एक एक फ्री एडमिशन कार्ड मिलना चाहिए।"

राज्यपाल बोले—"हा, तब मैं भी तो राज्यपाल न रहूगा एकदम बेकार हो जाऊगा। एक कार्ड की मुझे भी जरूरत होगी।'

बेगवाला देवी उनकी बात सुनकर मद मद हसने लगी।

मोटर पुलिस जीप आदि बहुत-सी गाड़ियों में मिदनीपुर के एस०पी० और अन्य पुलिस के अफसर राज्यपाल से मुलाकात करने आते। उन्हीं गाड़ियों को लेकर हम लोग दीघा समुद्रतट पर सान्ध्य भ्रमण के लिए निकलते। गाड़ियों का जुलूस बन जाता।

कभी-कभी हम लोग द्रुत वेग से पैदल ही उड़ीसा की सीमा तक चले जाते। राज्यपाल के एक रसिक ए० डी० सी० थे। वे कहते—यदि डिनर टेबल पर अच्छा काम कर दिखाना चाहते हैं तो जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाइये। शरीर से टप-टप पसीना गिरेगा, तभी चार वक्त का यह राजभोग हजम हो पायेगा।

हेमेन्द्र प्रसाद जैसा वृद्ध व्यक्ति भी हम लोगों के साथ बराबर की होड़ कर पैदल चलता। बस एक बंगबाला देवी ही ज्यादा दूर पैदल नहीं चल पाती थीं। उन दिनों वह वात रोग से बड़ी पीड़ित थीं। थोड़ी ही दूर बाद उन्हें एक गाड़ी में बिठा दिया जाता। राज्यपाल बराबर ही हम लोगों के भ्रमण के साथी थे।

हम लोगों की प्रात्यहिक सान्ध्य मजलिस में राज्यपाल अपने मन की बात खोलकर कहते। चित्तरंजन के दार्जिलिंग के मकान 'स्टेप असाइड' का क्या करेंगे, शिक्षा के मामले में उनकी क्या योजना है, टी० बी० आफ्टर-केयर कालोनी के विषय में किस तरह अर्थ संग्रह करना चाहते हैं—इन सब बातों पर खुलकर चर्चा करते।

पहले ही कह चुका हूँ सिनेमा तारिकाओं का रूप दिखाकर, क्रिकेट खिलाकर, गायन सुनवाकर उन्होंने बहुत सा पैसा इकट्ठा किया था, इस बात को लेकर बहुत से समाचार पत्रों ने उनकी आलोचना की थी। उसी बात का उल्लेख कर वे कहते—'आफ्टर आल आइ एम ए ब्राह्मिन एण्ड सो आइ एम ए प्रोफेशनल बेगर' (कुछ भी कहो 'मैं ब्राह्मण हूँ इसलिए एक पेशेवर भिखारी हूँ)।

उनकी ऐसी बात सुनकर हम लोग खूब हँसते।

नाडाजोल की रानी एक दिन हम सभी को लेकर दीघा दिखाने निकली। हैमिल्टन साहब का मकान, फॉरेस्ट आफिसर का बंगला, स्थानीय डाक बंगला आदि देखकर लौट आये।

जिस समय हम लोग गये थे, उस समय दीघा के आविष्कारक हेमिल्टन साहब उस इलाके में नहीं थे। अतएव उनसे भेंट नहीं हो पायी।

तब तक दीघा में दुकान-बाजार कुछ नहीं बना था। यही कारण था कि नाडाजोल की रानी राज्यपाल के स्वागत सत्कार के लिए सभी कुछ अपने साथ लेकर गई थी। खाने पीने की कुछेक चीजें कलकत्ता से भी आई थीं।

बातचीतों में अजनि देवी ने कहा— डाक्टर विधान चन्द्र राय ने यहां थोड़ी सी जमीन खरीद रखी है। नाडाजोल पैलेस के पास ही है।" लौटने पर उन्होंने वह जमीन हम लोगों को दिखाई।

एक दिन राज्यपाल कह बैठे—'आज मैं बाल कटवाऊंगा।'

सुनकर सहकर्मी एकदम हक्का-बक्का गई। यहां कहां है आधुनिक साज-सज्जापूर्ण सैलून? कहां है राजभवन का दम हज्जाम? कहां एंटिसेप्टिक लोशन? न तो बाल छांटने वाली क्लिप, न तरह-तरह की आधुनिक कंघियां।

राज्यपाल अभयदान कर बोले— 'कोई जरूरत नहीं। तुम एक नाई की तलाश कराओ। और यह रहा मुड्ढा। सलून से कम है क्या?

मगर इस अभयवाणी से नाडाजोल की रानी का भय दूर नहीं हुआ। स्थानीय नाई यदि राज्यपाल के सिर का कौवे का घोंसला बना डाले तो? सची चलाने में रक्तपात कर बैठे? एक तो राज्यपाल ऊपर से ब्रह्म-रक्त।

डर की बात तो है ही। इसकी अपेक्षा कलकत्ता जाकर बाल कटवाना ही अच्छा।

सारी बात यह कि नाडाजोल की रानी इस गुरुत्वपूर्ण कार्य का दायित्व लेने में हिचकिचा रही हैं। मगर उधर राज्यपाल की आप्त प्रतिज्ञा। बाल वे कटवायेंगे ही—यहीं और अभी।

बहरहाल एक देशी सिलबिल्ला-सा नाई आया। राज्यपाल मुड्ढे पर जाकर विराजमान हुए। हम सबने राज्यपाल के चारों ओर बैठकर कहानी किस्से शुरू कर दिये। उन चर्चा चुटकियों के बीच बड़े आनन्द में राज्यपाल का हजामत-पर्व सम्पन्न हुआ।

अब रानी की जान म जान आई। राहत की सास लकर वह बोला—'आज मरा एक दुर्योग कटा। जरा भी कुछ हो जाता, तो हथकडी ही पडती।'

वगवाला देवी उनके हावभाव दखकर मद मद हसन लगी।

कोइ यह न साच बैठे कि राज्यपाल क साथ सरकारी प्रचार विभाग स जो फाटाग्राफर आये है वे राजभाग खाकर निश्चेष्ट वठे है। वे वरावर हम लागा के साथ घूम घूमकर एक के बाद एक फाटा खीचत जा रहे हैं। राज्यपाल क भ्रमण के साथी बनकर हम लोग भी बहुत वडे हा गय ह हम लोग भी पदस्थ हो वठे हैं।

दीधा समुद्रतट पर घूमत समय फाटो खिच रहे है, फाटा खिच रहे हैं *स्विमिंग पूल म स्नान करते वक्त घर के भीतर सभी के खडे खडे—पलेस* क सामने। नाना प्रकार के रग ढग।

अन्त मे कलकत्ता रवाना हाने का दिन आ गया। सब एक साथ रवाना हागे।

राजा-रानी और राजकुमारी जायेंगे मदिनीपुर। बाकी हम सब कलकत्ता के यात्री।

एक बार रवीन्द्र नाथ ने वर्षा मगल गीत रचा था—

बादल धारा हालो सारा बाजे विदाय सुर,
गानर पाला शेष करे दे, जावि अनेक दूर'

(भावार्थ वर्षा खत्म हुई, विदाई का वक्त आ गया। अरे, गाना बद करो बहुत दूर जाना है।)

शान्तिनिकेतन क लडके लडकिया न जोडासाको आकर इस गीत की पैरोडी बनाई थी—

खावार पाला हालो सारा, बाजे विदाय सुर,
गानर पाला शेष कर द जावि र बालपुर'

(भावार्थ खान का दौर पूरा हुआ, विदा वला आ गई। अरे गाना बद करो, बालपुर जाना है।)

इस वक्त हम लागा की भी यही अवस्था है। कई दिन राजा रानी के

आतिथ्य मे खूब राजभोग खाया। अब इट-काठ चूना-बजरी का शहर कलकत्ता हम लागो को आवाज दे रहा है—

हरद्र कुमार बोले— 'सबका एक साथ लौटना ही तो ठीक है, क्या हमेद्र बाबू ?"

हमेद्र बाबू मेरी ओर देखकर सिर हिलाते है अतएव—

चलो मुसाफिर
बाधो गठरिया
कलकत्ता जाना होगा "

रानी बोली — मेरी बडी इच्छा थी, आप लागो को नाडाजाल की एक एक शीतल पट्टी उपहार मे दू। वहा की शीतल पटटी की बुनाइ बडे कमाल की है। गर्मी के दिनो मे लेटने मे बडा आराम मिलता है।'

मगर हम लोगो का दुर्भाग्य ! वे शीतल पट्टिया आखिर तक नाडा-जाल से आकर न पहुची।

राज्यपाल के दल ने चलने की तैयारी की। चीज वस्त्र रख-बाधकर दीघा समुद्रतट से विदा लेकर दुर्गा-नाम लेकर हम लोग फिर गाडियो का जुलूस बनाकर रवाना हुए।

रास्ते मे दल के दल लोग खडे है। वे लोग राज्यपाल को देखेंगे।

मगर उस असली आदमी को पहचानेगे कैसे ? राज्यपाल तो सीधे-सादे व्यक्ति है। उनके शरीर पर तगमा तो लगा नही। सम्भव है उनके ए० डी० सी० को देखकर ही राज्यपाल समझने की गलती कर बैठे।

इस अचल मे राज्यपाल के पदार्पण से जनसाधारण का एक उपकार यह हुआ कि रास्ते घाटो का उद्धार हो गया। इसी उपलक्ष मे अनेक नये लकडी के पुल बन गये अन्यथा राज्यपाल की गाडी नाला पार नही कर पाती।

हमारी शकट शोभा-यात्रा कांथि की ओर जा रही है। वहा के स्टेशन पर राज्यपाल का सलून प्रतीक्षा कर रहा है।

रास्ते के किनारे कई विद्यालयो के छात्र-छात्राओ के दल फूल-मालाए लिये प्रतीक्षा कर रहे हैं।

मेदिनीपुर के वीरेन्द्र शासमल के नाम से तैयार हुआ प्रतिष्ठान भी हम

लागा न रास्त क किनार देखा।

रास्त पर पानी छिड़कने के बाद भी काफी धूल उड रही है। इस शोभा-यात्रा म गाडियो की सख्या भी तो कम नही।

रात को राज्यपाल ने अपन सलून की डिनर टेबल पर हरेन्द्र प्रसाद और स्वप्नबूडो का आमत्रित किया। उन्होने स्वय उस रात कुछ न खाया। पास उठकर हम लोगो क खान-पीन की व्यवस्था देखते रहे। बगाला दवी मेरा जोर देखकर बोली— शर्माओ नही भाई! तुम तो मेर लडक की तरह हो। इस तरह व भी बडे प्यार से बैठकर यह खाओ वह खाओ करन लगी।

लाट साहब के सलून म खान के बारे म पहले का कोई अनुभव न था। हरेन्द्र कुमार की कृपा स चक्षु-कर्ण जिह्वा का विवाद-भजन हुआ।

कभी तो मैं बैठा-बैठा सोचता हू कि मदिनीपुर क छोटे स गाव म किसान के घर म हो चाहे राज्यपाल क सलून में हो—इस आदमी क अतर म जो उत्साह और उदारता होती है वही स्वप्नबूडा की जीवन-यात्रा म अक्षय सम्पदा बनी हुई है।

अनेक राज्यपाल नजरो म आय हैं मगर ऐसा मिट्टी का आदमी लाटसाहब कही नही देखा। य तो एकदम मानो ग्राम्य अचल क स्नेह-फल्गुधारा स सिक्त सदा-आनन्दमय दादाजी है।

हरेन्द्र कुमार ग्राम्य बगाल के ऐसे भोले भडारी व्यक्ति थ तभी तो व जीवन के शेष भाग म अपना सब कुछ दान कर एकदम फकीर हो गय थे। यही कारण है कि विश्व कवि की बात ही मन म गूज उठती है—

> नि:शेषे प्राण जे करिबे दान
>
> क्षय नाई तार क्षय नाइ।'

(भावार्थ जो पूर्णरूपण अपने प्राण दे देत हैं उनका कभी क्षय नही।)

साहित्य-साधक सजनीकांत

□□

अभी उसी दिन की तो बात है। शान्तिनिकेतन साहित्य-सम्मान' म सजनी दा मे भेंट हुई। साथ मे भाभी भी थी। इतनी हमी ठटठा किस्से-कहानी मिलना जुलना। एक आनद-सागर ही था। दो दिन बाद ही सब खत्म हो गया ? चिराग गुल हो गया ?

अब क्या कभी भी घरेलू साहित्य मजलिस सजनीकात क कौतुक कटाक्ष मे घन घन आदोलित नही हो पायगी ?

उस दिन रात को चुपचाप लेटे लेटे सोच रहा था, सजनीकात स पहली मुलाकात कब हुई थी ?

अधकार की यवनिका हटाकर पीछे बहुत दूर जाना पडा।

उस वक्त हम लोग सरकारी शिल्प विद्यालय के छात्रावास म रहत थे। हमारा दल यो कोई छोटा न था। मणि दासगुप्त, पूर्ण चक्रवर्ती फणी गुप्त, प्रतुल वद्योपाध्याय चारु सनगुप्त उपन घोष दफ्तिदार समर द यतीन साहा—अनक जना स वह कार्पोरेशन स्ट्रीट का नरक गुलजार हुआ है।

उन दिनो हम लोग 'चित्रा नामक एक सचित्र हस्तलिखित पत्रिका प्रकाशित करते थे। उसके लिए चित्र बनाते थे अवनीन्द्र नाथ भवानी लाहा, यामिनी राय अतुल बसु सतीश सिंह चा राय आदि ख्यातिप्राप्त शिल्पी। प्रति वर्ष सरस्वती पूजा क ममय हम लोग एक विद्वत्सम्मलन का आयोजन करत।

सवशुक्ला सरस्वती की परिकल्पना इस छात्रावास म ही सब प्रथम तयार हुई। सभी नामी शिल्पी थे सब उस काम के लिए आग आ गय। कवि हमचन्द्र बद्योपाध्याय के नाती किशोरी बद्योपाध्याय का उत्साह ही सबमे ज्यादा था। मूर्ति तैयार हुई।

मगर पुरोहित जी आकर बोले— 'इस प्रतिमा की पूजा नहीं हो सकती। इसकी आखो की पुतलियां नहीं हैं चक्षु दान कैसे होगा ?

इस उत्सव मे हम लोग बगाल के नामी साहित्यकारो और शिल्पियों को आमत्रित करते थे। प्रवीण साहित्यकार जलधर सेन महाशय बोले— 'पुरोहित ने पूजा न भी की शिल्पी लोग स्वय ही वाणी वदना करेंगे।' उसी वर्ष से कलकत्ता मे सवशुक्ला सरस्वती का चलन हो गया। समाचार पत्रों मे प्रतिमा के फोटो प्रकाशित हुए।

इसी तरह के एक विद्वत्सम्मेलन में हम लोग सजनीकान्त को लिवाकर लाये। हम लोगो के अग्रज शिल्पी फणी गुप्त के वे सहपाठी थे। उसी हिसाब से वे हम लोगो के सजनी दा हो गये। वे उन दिनो इटाली अचल मे रहते थे और प्रवासी में काम करते थे।

सोचने मे अजीब लगता है। लगता है अभी उसी दिन की बात है। नाना प्रकार की चीजे लिखकर सजनी दा के पास पहुच जाता। वे अग्रज के आग्रह के साथ बड़े यत्न से उनमे सशोधन कर देते। उस समय मैंने शिशु साथी खोकाखुकु मौचाक आदि मे लिखना शुरू किया था।

तत्पश्चात सजनी दा ने आत्मप्रकाश किया 'शनिवारेर चिठि' के दुर्धर्ष सम्पादक के रूप मे। धूमकेतु की पूछ के झपट्टे से सभी के पीछे पड़ने लगे। हम लोग—उनके तरुण मित्र—उस हास्य व्यग्य को बड़े कौतूहल के साथ देखते और हाथ मे पत्र आता तो जल्दी से चट कर जाते।

शनिवारेर चिठि' के कार्यालय में जबरदस्त गोष्ठी चलती। मोहित लाल मजूमदार से शुरू कर बड़े बड़े साहित्यकार यहा इकट्ठे होते। मुझ तो जैसे नशा हो गया था। चुपचाप जाकर एक कोने मे बैठ जाता। एक दिन किसी ने प्रस्ताव रखा कि उपस्थित लोगो मे से हर किसी को एक अश्लील कहानी सुनानी होगी। मेरी बारी आयी तो मै सोचने लगा भागू की नहीं। उस वक्त सजनी दा ने ही मेरी रक्षा की। बोले— अखिल को छोड़ दो तुम लोग यह एकदम निरामिष है।

शनिवारेर चिठि' का दफ्तर बदलता तो हम लोगो का गन्तव्य-स्थल भी बदल जाता। फड़िया पुकुर तक मैं नियमित अड्डेबाज रहा। उसके बाद सजनी दा टाला मे मकान बनाकर रहने लगे तो उतना आना-जाना

न रहा।

शनिवारेर चिठि' के दफ्तर म ही मैंने कलकत्ता के तेलभाजा खाना सीखा था। इसस पहले इस चीज को यत्नपूवक दूर ही रखता था। सजीन दा स्वय किस मात्रा म तलभाजा खात, सोचकर आश्चय की सीमा नही रहती। सुनीति कुमार से शुरू कीजिए—और फिर यहा अड्डा जमान कौन नही आता था ? फादर फालो के साथ भी पहली मुलाकात यही हुई थी।

धीरे धीरे 'कल्लोल' और शनिवारर चिठि' ये दो विरोधी दल तैयार हुए। वधुवर सुनिमल वसु आर मैं दाना जगह समानभाव से यातायात करते। 'निरामिष बाल साहित्यकार होने के कारण हम लागा के लिए दोना ही अस्थाना के दरवाजे खुले थे।

तत्पश्चात विचित्र-भवन म उस विख्यात विचार सभा की बात याद आती है। एक आर सजनीकान्त के नेतृत्व म शनिवारेर चिठि' का दल, दूसरी ओर नृपेन्द्र कृष्ण अचिन्त्य कुमार, दिनेश रजन आदि के सचालन मे 'कल्लोल' का दल। निर्णायक स्वय रवीन्द्रनाथ।

कलकत्ता शहर के साहित्यिक जगत् म उस दिन कसी उत्तेजना फैली थी। उस विचार सभा म मुझे उपस्थित रहने का सौभाग्य प्राप्त था।

उस युग मे सभी साहित्यकार सजनीकान्त म डरकर चलत थे। बहरहाल मेरे भयभीत होने का कोई कारण नही वना। हमेशा उनका स्नह ही प्राप्त किया। टाला मे उनका नय घर म प्रवश और लडकी की शादी दोना काम एक साथ सम्पन्न हुए। सजनी दा भाभी क साथ आकर स्वय निमत्रण दे गय।

याद आती है काग्रेस साहित्य सघ के स्थापन काल की बात। सजीन दा न अपन विश्वास पात्र साहित्यकारो को बुलाकर एक नाटक-दल तैयार किया था। आह्वान म मुझे भी तयार होना पडा। धीरे धीर 'अभ्युदय' नाटक लिखा गया। इस मामले म वधुवर सुवोध घाप का यागदान कोई कम न था।

रिहसल के दौरान चाय नाश्ता आय, इस आर सजनी दा तज नजर रखते थे, ध्यान रखते थे।

नाटक जब करीब करीब पूरा हो गया, तो एक दिन उन्होने मुझे

बुलवाया। बोले— "हिम्मत तो एक तरह से हो गया। अब एक स्टेज की व्यवस्था करनी है। हम लोग किराया एक पैसा नहीं दे सकते। इस काम की जिम्मेदारी तुम्हें लेनी होगी।

उनकी बात सुनकर मैं तो अथाह जल में जा गिरा। बिना किराये स्टेज कौन देगा? उस वक्त मैं रंगमहल थियेटर से सम्बद्ध था। नाटकों के गीत लिखना और प्रचार-कार्य देखना। उस समय थियेटर के मालिक थे शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय।

एक दिन शाम के वक्त जाकर उनके खूब पीछे पड़ा। बोला— साहित्यकारों का मामला है। एक दिन बिना किराया हाउस देना होगा। साथी सगियों ने कड़ी आपत्ति की। वे भी आपत्ति करने लगे। मगर मैं था चट्टू। एक-दूसरे दिन शाम को उन्हें अकेला देखकर जा पकड़ा। बोला— 'इससे लेखकों के बीच आपका बड़ा नाम होगा।'

न जाने क्या सोचकर शरत बाबू राजी हो गये। सारी बात सुनकर सजनी दा बड़े खुश। कार्य क्रम में छपा दिया—व्यवस्थापन में सहायता की है श्री अखिल नियोगी ने।

वह 'अभ्युत्थ' नाटक बहुत से सुधीजनों की प्रशंसा प्राप्त कर धन्य हुआ।

गत युद्ध के समय एकाएक मेरे दिमाग में यह बात आयी कि सिर्फ हास्य का एक मासिक पत्र 'रवपा' नाम से प्रकाशित करना चाहिए। तब तक मैं युगान्तर से नहीं जुड़ा था। बंधुवर जासिनुर रहमान 'पपर' के द्वार्त विभाग में काम करते थे। उन्होंने चुपचाप मुझसे कहा— सजनी दा से तो आपका अच्छा परिचय है उन्हें पकड़ लीजिये। हम लोगों के बड़े साहब उनकी बड़ी इज्जत करते हैं। वे कह दें, तो वे ना नहीं कर सकते।'

सजनी दा शनिवारेर चिठि' के दफ्तर में बैठे काम कर रहे थे। मैं तूफान की तरह पहुँचकर बोला— 'आपको मेरे साथ इसी वक्त एक जगह जाना पड़ेगा।'

सजनी दा अवाक्। बोले— 'अरे काम बहुत इकट्ठा हो गया है।'

एक तरह से उन्हें खींचकर ही ले आया। अपनी परिकल्पना की बात बताई। उन्होंने विशेष आपत्ति न की। टैक्सी बहू बाजार स्ट्रीट जाकर

पहुची । पास्ट आफिस के ऊपर पपर कन्ट्रोल आफिस था । यह देखकर कि सजनी दा स्वय आय ह साहब बडे खुश हुए । साथ ही साथ अर्जी लिखी गयी । सजनी दा के अनुरोध पर साहब ने खडे खडे ही स्वीकृति हस्ताक्षर कर दिये।

यह ह 'रवेया' की जन्मकथा । प्रवेशाक के लिए कविताए प्राप्त की— परशुराम, कविशेखर कालिदास राय और सजनीकान्त स ।

तभी आज अश्रुभाराक्रान्त हृदय लेकर बठा-बैठा सोचता हू—शनिग्रह हमशा मर अनुकूल ही था ।

शिल्प-साधक छवि विश्वास

□□

उस दिन दोपहर 'युगान्तर' कार्यालय म पहुचते ही एक दुखद सवाद सुनने को मिला। हम सभी के प्रिय सुदशन शिल्पी छवि विश्वास मोटर दुघटना म चल बसे।

आदमी अस्वस्थ होकर कष्ट भोगता प्राण त्यागता है—सभी उसकी बीमारी की खबर पा लेते ह मत्यु का पदक्षप सभी अनुभव कर सकते हैं। वही स्वाभाविक मत्यु है। मगर सुन्दरता के पुजारी छवि विश्वास की इस आकस्मिक मत्यु के लिए किसी का भी मन प्रस्तुत न था। यह भी पता चला कि वे सपरिवार अपने इलाके वाले घर जा रहे थे—स्वय ही गाडी चला रहे थ। रास्ते मे एक मोटर वैन न मृत्युदूत की तरह सरासर उनकी गाडी को टक्कर मार दी। चालक शायद नहीं जानता कि उसने सारे भारत की कितनी क्षति की है।

मैं स्तब्ध होकर मन ही मन सोच रहा था—शिल्प साधक छवि विश्वास स प्रथम भेट कहा हुई थी? एक के बाद एक कितनी ही छविया मानस पटल पर उभर आइ।

नाटयजगत के विस्मय प्रबोध गुह का राज्य चल रहा था। नाटयकार मन्मथ राय का एतिहासिक नाटक मीर कासम अभिनीत होगा। मगर प्रबोध बाबू को मीर कासम नहीं मिल रहा। इस मच के 'हीरो' निमलेन्दु लाहिडी तब तक इस प्रतिष्ठान स जुड न थ। तभी प्रबोध बाबू को चिन्ता थी। उनके गलीचे पर हम लोगो की राज गोष्ठी जमती थी। वही एक दिन शाम को मालूम पडा कि उदीयमान अभिनेता छवि विश्वास मीर कासम के रूप म मच पर प्रकट होंगे। सुनकर उपस्थित लोगो म स बहुतो को बडा अटपटा लगा। किसी किसी न तो स्पष्टरूप स मत व्यक्त किया—निमलेन्दु

लाहिडी हात ता बडे जमत। मैने गौर किया कि स्वय नाट्यकार भी कुछ असतुष्ट ह।

मगर सभी की आशकाआ का मिथ्या सिद्ध कर छवि विश्वास न मीर कासम के चरित्र का पाद प्रदीप के आगे किस तरह जीवत कर डाला— यह बात तत्कालीन नाट्य-रसिकजन निश्चय ही नही भूल सकत। दरअसल, व आये—उहाने देखा—उहाने विजय हासिल की। Vini—Vidi—Vici !!!

इसमे पहने जात्रादल म नदेर निमाइ अभिनय कर उहाने असामाय लोकप्रियता अर्जित की थी। मगर वह थी अन्य रस की वस्तु।

आज यह बात विना सकाच के कही जा सकती है कि कृष्णगत प्राण निमाई हो चाह अति आधुनिक उग्र साहब हा—छवि विश्वास हर किस्म के चरित्र को जीवत कर छाडत थे। इस विषय मे व तमाम भारत मे अनय प्रतिभा के अधिकारी थे।

बहुत पहले की बात कह रहा हू। उन दिना मच पर सम्मिलित अभिनय होता था। उसी वक्त एक ही नाटक म शिशिर कुमार दुगादास अहीद्र चौधुरी और छवि विश्वास को अभिनय मे टक्कर लेते देखकर दशक बडे उल्लास के साथ वाहवा वाहवा' कर सभी का अभिनदन करत।

आज छवि विश्वास की मत्यु के साथ साथ नाटयालय की वह मधुर स्मति हमेशा के लिए लुप्त हो गई। व्यक्तिगत जीवन म छवि विश्वास बडे मजलिसी व्यक्ति थे। अपनी प्रतिभा के बल पर उहोन मच पर तथा चित्र जगत म असाधारण लोकप्रियता अर्जित की थी। मगर मित्र मण्डली म व बडे मिलनसार और कौतुकप्रिय थे। रगालय की गाष्ठिया म और चित्रजगत् के स्टुडिया म वे हर वक्त हास्य व्यग्य उत्साहपूण वार्तालाप से सभी का मत्रमुग्ध किये रखत। एक बार जा उनके सम्पक म आ गया वह जीवन भर छवि बाबू को नही भूल सकता।

तब तक डा० नीहाररजन गुप्त न मच जगत म प्रवश नही किया था। सिफ अपन लखन म ही मस्त थ। एकाएक मुझस बाले— नाटक लिखा है। छवि विश्वास स मरा परिचय करा दीजिये न!" छवि विश्वास तब

मिनवा थियटर म युक्त थ। एक दिन शाम को वधुवर नीहार बाबू के साथ मिनवा थियटर जा पहुचा। छवि बाबू न बड़े मनोयोग के साथ नीहार बाबू के नाटक की बात सुनी। नयी कोई भी परिकल्पना हो, छवि बाबू बडी रुचि रत।

बच्चो क लिए तैयार किय नाटको के अभिनय के मामले म भी छवि बाबू की उत्सुकता और ईमानदारी का अभाव न था।

एक बार सत्र पर्येछिर आसर क बच्चा क अभिनय स सम्बद्ध एक अनुष्ठान म आमन्त्रित करन मैं छवि बाबू के वास द्वाणी वाल मकान पर गया। दरवाजे पर एक जबरदस्त कुत्ता बधा था। मैंन मनाक करत हुए छवि बाबू न कहा— कुत्ते को बुला लीजिय भीख नही मागता ! व हसत हसत आग आय। बोल— आप मरे कुत्त की बुराई न कीजिय। वाकई वह किसी स कुछ नही कहता।

दोनो जाकर उनक बगीचे म बठे। बहुत बात हुई। बच्चा का अभिनय देखकर पुरस्कार देंगे—यह मधुर दायित्व निभान के लिए व अपन मधुर स्वभाव क कारण सहज ही राजी हो गये। मगर बाद म एक शूटिंग म अटक जान के कारण वे नही आ पाये। इसक लिए उनके अफसास की सीमा न थी। मुझस मिलन ही हार्दिक दुख प्रकट करत। कहत— 'मौका मिलत ही एक दिन बच्चा का अभिनय देखन आऊगा।'

पश्चिम बग कांग्रेस की ओर से विद्वज्जन अभिनदन के सिलसिल म एक बार जब छवि विश्वास का सम्मानित करने की व्यवस्था हुई, तो मैं निमत्रण पाकर यथा समय उत्सव प्रागण म जा पहुचा। छवि विश्वास का अभिनदन-समारोह अभी शुरू नही हुआ था। व भी मडप म उपस्थित थ। मुझ देखकर हसत चेहरे स आग आय। बोल—"आप भी आय हैं अच्छा ?' मैं बोला— वाह एसा आनद का दिन, आऊगा नही ? मैं भी आपका एक कद्रदान मित्र हू, यह क्या भूलत हैं ? सुनकर व मद मद मुस्कराने लगे।

और याद आती है उस दिन की बात। उत्तर कलकत्ता के श्रीहार चट्टोपाध्याय—हम सभी के हारू दा—के छोटे लडके क उपनयन क उपलक्ष म प्रीतिभोज का आयोजन किया गया है। मैं तब हारू दा का निकटतम

पडोसी था। छवि बाबू भी आये ह। पास पास भोजन करन बठ गया। हसी ठटठा और मधुर वातालाप स छवि बाबू न बराबर मोहित किये रखा। सम्भव ह इसी कारण भाजन भारी रहा। जात वक्त भी छवि बाबू हसत-हसत कह गये— 'आपके बच्चा के अभिनय की बात मैं भूला नही।'"

इसके बाद बहुत समय तक छवि बाबू स भेंट नही हुई।

जब काबुलीवाला' का विमाचन हुआ ता एक दिन सुबह क समय प्राडयूसर, असित चौधुरी आकर हाजिर हुए। काबुलीवाला छवि कसी लगी, इस विषय म स्वपनवूडो का अभिमत चाहते थ। मैंन हसकर उत्तर दिया— 'काबुलीवाला छवि विश्वास ह सबस बडा सर्टिफिकेट तो यही है। और नये प्रमाण पत्र की क्या आवश्यकता?' बहरहाल मैंन अपनी सम्मति असित बाबू का लिख दी और वह विज्ञापन के रूप मे विभिन्न पत्रा म प्रकाशित हुई। यहा यह बता दू कि 'काबुलीवाला' को राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ बहुत बाद म।

छवि बाबू से मेरी अतिम मुलाकात हुई विश्व रूपा मच पर नाटयाचाय शिशिर कुमार की एक शोकसभा मे। उन्हाने भाषण दिया और शिशिर कुमार के विषय म घरेलू बाते बताया, मैंन कविता म श्रद्धाजलि अर्पित की।

तब किसे पता था, इतन छाट मे अतराल के बाद छवि विश्वास की शोकसभा भी आयोजित की जायेगी।

मानुष छवि विश्वास आज हम लागा के बीच नही, मगर शिल्प-साधक छवि विश्वास मत्युञ्जय ह।

पाठकों की सहायता के लिए

□□

(मूल लेखक स्वपनबूडो महाशय ने जिन महापुरुषों के संस्मरण इस कृति में लिपिबद्ध किये हैं उन सभी के 'सरनेम' नहीं दिये। बंगला पाठकों के लिए शायद उनके नाम ही पर्याप्त हैं। दूसरी बात इन महापुरुषों के आविर्भाव तिरोभाव के वर्षों का उल्लेख भी पुस्तक में नहीं हुआ। इन दोनों बिन्दुओं की पूर्ति मैं नीचे कर रहा हूँ। पाठक गौर करेंगे कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के आविर्भाव (सन् १८६१) से हेमेन्द्र कुमार राय के तिरोभाव (सन १९६३) तक—अथवा कहिये 'गदर' से 'स्वाधीनता' तक—करीब एक शताब्दी का चित्र यह कृति हमारे आगे रखती है। कुछ आवश्यक टिप्पणियां भी पाठकों के लाभार्थ यहां मैंने दी हैं—अनुवादक)

१ रवीन्द्र नाथ ठाकुर (१८६१ १९४१)

- शरत चन्द्र चट्टोपाध्याय (१८७६ १९३८)
- अवनीन्द्र नाथ ठाकुर (१८७१ १९५१)
- दक्षिणारंजन मित्र मजूमदार (१८७७ १९५७)
- शिशिर कुमार भादुड़ी (१८८९-१९५९)
- राजशेखर (परशुराम) बसु (१८८० १९६०)
- दुर्गादास बंद्योपाध्याय (१८९३-१९४३)
- हेमेन्द्र कुमार राय (१८८८ १९६३)
- हेमेन्द्र प्रसाद घोष (१८७६-१९६२)
- हरेन्द्र कुमार मुखोपाध्याय (१८७७ १९५६)
- सजनीकांत दास (१९००-१९६२)
- छवि विश्वास (१९०० १९६२)

२ टैगोर चटर्जी बनर्जी मुखर्जी क्रमश ठाकुर चट्टोपाध्याय बंद्योपाध्याय मुखोपाध्याय के अंग्रेजीकरण हैं।

३ • **पातृताडि** कागज के आविष्कार से पहले लिखने के लिए पत्ते काम में लिये जाते थे। इस प्रकार के पत्तों के बंडल को बंगला में कहते हैं 'पातृताडि'। स्वपनबूडो एक समय बंगला की 'युगान्तर पत्रिका' में बच्चों के अनुभाग का सम्पादन करते थे। उस अनुभाग का नाम था— छोटादेर पाततांडि'।

• **सब पेयेछिर आसर** युगान्तर पत्रिका के माध्यम से स्वपनबूडो ने बच्चों का एक संगठन भी शुरू किया था। संगठन का नाम था 'सब पेयेछिर आसर'। इस संगठन के तत्वावधान में होने वाले वार्षिक उत्सव में किसी पुराने वाल साहित्यकार का अभिनन्दन किया जाता था। उस विशिष्ट सन्ध्या को बंगाल के जाने माने साहित्यकार कोई नाटक खेलकर बच्चों को आनन्द देते थे।

• **भारतीदल** कवि नरेन्द्र देव, प्रेमांकुर आतर्थी कवि सत्येन दत्त मणिलाल गंगोपाध्याय (अवनीन्द्र नाथ के जमाइ) हेमेन्द्र कुमार राय सौरीन्द्र मोहन मुखोपाध्याय चारु बंद्योपाध्याय आदि मित्रजन भारतीदल के नाम से जाने जाते थे।

• **रसचक्र** कवि शेखर कालीदास राय द्वारा प्रतिष्ठित संगठन प्रति-सप्ताह साहित्यकार-संगम होता। बीच बीच में उद्यान सम्मेलन भी होते।

• **रवि वासर** एक संगठन। जानेमाने साहित्यकार सदस्य थे। एक-एक कर सदस्यों के घरों पर अधिवेशन बुलाये जाते।

• **बंगवाणी** उमा प्रसाद मुखोपाध्याय द्वारा शुरू की गई मासिक पत्रिका।

• **व्यंगमा व्यंगमी** (पृ० ?) बंगला की रूपकथाओं में नर मादा पक्षी, जो आदमी की तरह बात करते हैं।

• **कुटुम काटम** इधर-उधर पडी हुई फेंकी गई फालतू ऊलजलूल चीजों को अवनीन्द्र नाथ अपनी नजरों से देखते, उठा लाते और एक नया रूप देकर बच्चों का खेलघर तैयार करते। उसे कहते 'कुटुमकाटम।

• **नाचघर** हेमेन्द्र कुमार राय द्वारा शुरू की गई सांस्कृतिक पत्रिका।

साप्ताहिक थियेटर सिनेमा की ललित-कलाओं पर सामग्री रहती। विश्वरूपा स्टार नाट्यनिकेतन रंगमहल आर्ट, मनमोहन, रूपवाणी आदि थियेटर मंचों के नाम है।

● बूड़ोआंग्ला अवनीन्द्र नाथ की लिखी एक बारह वर्षीय बच्चे रिन्य की कहानी।

परिशिष्ट

[स्वनामधन्य जनो के सान्निध्य मे]

अग्रज साहित्यकार ताराशंकर

□□

ताराशंकर हम लोगों के अग्रज साहित्यकार हैं। उनसे पहली भेंट कहां, कब हुई थी इसकी स्मृति पुराने दिनों के कुहासे में एकबारगी विलीन हो गई है। ठीक उसी तरह जैसे पहाड़ और मेघ मिलकर एक ही जाते हैं।

बहरहाल, घनिष्ठता हुई है 'शनिवारेर चिठि' के कार्यालय में। वहां प्रत्येक रविवार को सुबह सम्पादक सजनीकान्त दास को केन्द्र बनाकर एक जबरदस्त साहित्यिक बैठक होती। इस बैठक में आते रहते विभूति भूषण बंद्योपाध्याय, ताराशंकर बंद्योपाध्याय फादर-फलो, वनफूल वीरेन्द्र कृष्ण भद्र, जगदीश भट्टाचार्य, प्रमथविशी, अमल होम, देवीदास बंद्योपाध्याय, नारायण गंगोपाध्याय बीच-बीच में मन्मथ राय तथा और भी बहुत-से अनुभवी साहित्यकार। ताराशंकर के एक भाई 'शनिवारेर चिठि' से जुड़े थे। इनके अतिरिक्त जनरल मनेजर सुबल बंद्योपाध्याय तो थे ही।

सजनीकान्त की इस रविवासरीय बैठक में मुरमुरे और तल में तली चीजें खूब आतीं, मगर पेट के मरीज ताराशंकर उस तरफ विशेष न फटकते। उधर विभूति भूषण तली चीजों से खासतौर पर प्रेम करते। और घण्टे घण्टे भर बाद खूब चाय आती, और कहां किस अदृश्य पथ से चपत हो जाती, यह बात सोचते तो विस्मय की सीमा न रहती। उस बैठक में विभूति भूषण के किस्से-कहानियां बड़े उपभोग्य होते। ताराशंकर कम ही बोलते थे, मगर वे जब साहित्य चर्चा करते, तो सभी मनोयोग से सुनते।

ताराशंकर उन दिनों बागबाजार में आनन्द चटर्जी लेन में रहते थे। उनके पास ही था शिल्पी यामिनी राय का निवास। हम लोग यह देखने के लिए कि वे नया क्या बना रहे हैं, बहुत बार यामिनी दा के घर जा पहुंचते।

मैं तब रहता था हमन्त कुमारी स्ट्रीट म। युगान्तर जाते वक्त गलिया पार करना शार्टकट करता। बहुत बार गौर करता कि ताराशकर किसा रास्ते के किनारे खड़े-खड़े जनता को तीक्ष्ण दृष्टि स देख रहे हैं और एक के बाद एक सिगरेट पीते जा रहे हैं। उन दिनो वे चेनस्मोकर थे। एक खत्म होती दूसरी जला लेते। नजर रहती बस जनता पर। उस वक्त वे पास के आदमी को जरा भी न देखते। नजर होती उदास और सुदूर प्रसारित। लगता जैसे वे किसी उपन्यास के चरित्र को उस जन समुद्र म खोजते फिर रहे हैं। और जब घरेलू गोष्ठी म बैठकर वे अपने साहित्यिक जीवन की बात करते तो उसमें एक अतरंगता का स्पर्श रहता। शुरू शुरू म कितनी जगह रचनाएं भेजते और वे लौट-लौट आती—यह बात वह छिपाये बगैर सभी को बताते।

एक बार सजनीकान्त ने तय किया कि कलकत्ता रेडियो स्टेशन पर साहित्यकारो म रवीन्द्र नाथ का नाटक अभिनीत कराया जाय। साथ ही साथ भूमिकाओं का चयन हो गया। उस दल म थे ताराशकर प्रमथनाथ विशी देवीदास बंद्योपाध्याय अमल होम, सजनीकान्त विमल घोष (मामाजि) अखिल नियोगी (स्वपनबूडो) सुबल बंद्योपाध्याय। स्त्री भूमिकाओं म थी नीलिमा सान्याल (वर्तमान म दिल्ली रेडियो स्टेशन पर) श्रीमती वाणी राय मिस लायला ग्रान आदि।

जहां तक याद आता है रवीन्द्र नाथ का शेष रक्षा अभिनीत किया गया था। पहले तो इस रेडियो अभिनय के मामले म ताराशंकर ने अपने स्वास्थ्य की दुहाई देकर ना कर दिया था पर सजनीकान्त ने रसिकता कर ताराशकर की आपत्ति को उड़ा दिया था। बोले— तुम्हारा यह आपत्ति कौन सुनेगा? लाभपुर म तुम मूछें साफ कर स्त्री भूमिका म भी अवतीर्ण हो चुके हो। मुझसे कुछ छिपा नहीं।

इसके बाद ताराशंकर ने अवश्य ही और आपत्ति नहीं की। शनिवारेर चिठि के कार्यालय म ही हम लोगो का पूर्वाभ्यास चलता और उसके दौरान सजनीकान्त प्रमथ विशी और ताराशकर की मजेदार बात निश्चय ही बड़ी उपभोग्य थी। जहां तक याद आता है हम लोगो का नाटक एक तरह से अच्छा ही रहा था। बीरेन्द्र कृष्ण भद्र ने इस मामले म हम लोगो की

तरह तरह से मदद की थी।

एक और अनुष्ठान म मुझे ताराशकर का अभिनय दखन का सुयाग प्राप्त हुआ था।

उस वार वगदश के साहित्यकारा न रवीन्द्र जयन्ती के उपलक्ष न तीन मचा पर अलग-अलग दिना पर रवीन्द्रनाथ के तीन नाटक प्रस्तुत किय थ। उनम स जो नाटक रगमहल म मचस्थ किया गया उसम तारा-शकर न नगे वदन कधे पर एक अगोछा लटकाय एक भत्य की भूमिका का जीवन्त कर दिखाया था। साधारण अल्पभाषी ताराशकर एसा गजब का अभिनय कर सकत है उस दिन के दशका का यही एक वडा विस्मय था। उनक प्रवश प्रस्थान गदन घुमाकर बात करन का तरीका आखा की अभिव्यक्ति—इन सब वाता न एक प्रथम श्रेणी के अभिनता को भी हार मनवा दी।

और भी पुराने दिना की एक घटना याद आती ह। तब मैं गगा राजकिशन स्ट्रीट म रहता था। उन्ही दिना नाटय निकतन वद हो जान के वाद नाटयाचाय शिशिर कुमार उसी मच पर 'श्रीरगम' चला रह थ।

एक दिन मैं घर से निकलकर श्रीरगम का वायी आर छोडकर कानवालिस स्ट्रीट की ओर जा रहा था। ठीक माड पर ताराशकर स मुलाकात हुई। हाथ म कुछेक कागज पत्र थ। मुझे दखकर उनकी आखा म चमक आ गयी। मुझे आवाज देकर पूछा—'अच्छा अखिल वाबू आपक साथ शिशिर वाबू का परिचय है?

मैंने उत्तर दिया—"कमाल है! हम लाग हर समय उन्ह विरक्त कर कितना थियटर देखत हैं। और फिर रोज शाम का वहा अच्छा खासा अडडा जमता है। वहा हमेन्द्र कुमार राय प्रभात गागुली, नयन चटटा-पाध्याय शचीन सनगुप्त यामिनी राय, चारु राय, दव वाबू आदि बहुत-स लाग आत हैं'

ताराशकर वाले—मरा थाडा परिचय करा दाजिए शिशिर कुमार के साथ।

मैंन उत्साहित होकर उतर दिया—निश्चय। व आप स मिलकर बडे खुश होंगे। वाकई साहित्य रसिक व्यक्ति ह व।

शिशिर कुमार जी तब श्रीरगम (नाटयनिकेतन) के पीछे की ओर रहते थे। मेरा उनके यहाँ बेरोक-टोक आना जाना था। मैं सीधा उनके कमरे म जाकर खडा हुआ। वे तब एक लुगी पहने एव मोटा चुरट मुह म लगाये कोई अग्रेजी पुस्तक पढ रहे थे। ताराशकर के साथ परिचय होते ही उठकर उन्ह खीचकर अपने पास बिठाया। शुरू हुई नाटक की बात। अच्छे नाटक नही मिल रहे नाटयाचार्य के स्वर म यह क्षोभ भी था। ताराशकर बोले— मैं एक नाटक लेकर आया हू आप पढकर देखिये।"

बडी आत्मीयता और आग्रह के साथ शिशिर कुमार ने ताराशकर का वह नाटक रख लिया। बोले— अवश्य ही पढूगा। सच्चे सही नाटक के लिए तो पागल हुआ बैठा हू। उस दिन नाटक को लेकर काफी चर्चा समीक्षा हुई। आज सब याद नही।

बाद म ताराशकर का वह नाटक शिशिर कुमार ने मचस्थ किया था कि नही मुझे पता नही, किया होता तो निश्चय ही याद रहता।

मैं सब पयछिर आसर' के सिलसिले म अनेक बार ताराशकर के पास गया हू। हम लोगो ने उन्ह सभापति बनाकर शोभा बाजार राजबाटी म नव वर्ष उत्सव' की शुभ सूचना दी थी। बाद म वहा स्थानाभाव होने से हम लोग देशबन्धु पार्क म हर प्रथम वैशाख को नव वर्ष उत्सव सम्पन्न करने लगे।

एक बार उन्ह जा पकडा। बच्चो की प्रदर्शनी देखनी होगी। वे तब कुछ अस्वस्थ थे। बोले— मगर मुझे लेकर यह खीचतान क्यो? और किसी को पकडकर ले जाइये। मगर मैंने उन्ह नही छोडा। बोला— 'अच्छा बहुत देर नही रोकेंगे। प्रदर्शनी देखते ही चले आइये।' लेकिन प्रदर्शनी प्रागण म पहुचकर वे बच्चो के साथ एकबारगी खो गये। बच्चो के चित्र हाथ के काम मूर्ति अल्पना सब कुछ सूक्ष्म निरीक्षण किया। जाते समय एक रजिस्टर म लिख गये— मेरे बाल्यकाल म इस प्रकार का शिशु प्रतिष्ठान बिलकुल न था। यदि होता तो आज म जो लिख सकता हू, उससे कही अच्छी चीज दे पाता।

एक और घटना याद आती है। ताराशकर के जन्म दिन पर यथा रीति एक दिन पहले उनके टाला वाले मकान पर होकर आया था। अगले

दिन व एकाएक युगान्तर दफ्तर आये। मेरे हाथ म एक पुस्तक 'विचारक उपहार' के रूप म देकर बोले— यह मेरे जन्मदिन पर ही प्रकाशित हुई ह। जिन्ह स्नेह करता हू, प्यार करता हू उन्ह एक एक प्रति अपने हाथ स देने के लिए निकला हू।' पुस्तक खोलकर देखी—अपने हाथ म मेरा नाम लिखकर स्नेह उपहार दिया है। अनुज साहित्यकार के प्रति। उनका वह आतरिक स्नेह देखकर उस दिन वाकई मुग्ध हो गया था।

बहुत दिन पहले की बात है। तरुण साहित्यकार परेश भट्टाचार्य के आह्वान पर एक बार ताराशकर बाबू और मैं एक साहित्य सभा म बसीर हाट गये थे। साथ म थी हम लोगो की बौदि (भाभी)। ताराशकर बाबू रसिकता करते हुए बोले— 'आप लोगो की बौदि तो कभी सभा समितियो म जाती नही। आज ले आया।' उस दिन आने-जाते रास्ते म ताराशकर और बौदि के साथ बडी मजेदार बातें हुइ। पूरे दिन ऐसे घरेलू परिवेश म उन्हें कम ही देखा है। उस दिन कलकत्ता लौटते लौटते बहुत रात हो गयी थी।

एक बार आसनसोल रेलवे इन्स्टीट्यूट न अपने 'साहित्य सम्मेलन म हम तीन जनो को बुलाया। यथा समय शैलजानद, ताराशकर और मैं साथ साथ रवाना हुए। रेल का मामला। उन्ही लोगो न प्रथम श्रेणी यात्रा की व्यवस्था की थी। साथ म उनका आदमी भी था। उस रेल-यात्रा मे बहुत साहित्य चर्चा हुइ थी। ताराशकर की एक बात याद ह। बहुत से प्रकाशक उन्हें पुस्तकों का हिसाब ठीक से नही दे रहे यह क्षोभ उन्होंने व्यक्त किया था। शैलजानद ने उत्तर दिया था— और मत कहो यह बात जीवन-पथ पर प्रत्येक कदम पर ही तो वचित हो रहे ह हम लोग।" आसनसोल पहुच-कर नाना प्रकार की बातचीतो म रात बिता दी।

अगले दिन सुबह एक मजेदार घटना घटी। ताराशकर स्नान कर एक कमरे म आह्निक (नित्य पूजा पाठ) पर बैठ गये। वे निकले नहीं और हम लोग भी चाय न पी पाये। शैलजानद बडबड करने लगे।

अत म बहुत देर बाद जब वे निकलकर आये, तो हम लोगो की असुविधा की बात जानकर रसिकता करते हुए बोले—'कैसा आश्चर्य' तुम लोग चाय पीओ न। मैं क्या तुम्हारे हाथ पकडे बैठा था।'

आसनसोल वाले साहित्य सम्मेलन में योगदान कर ताराशंकर को अपने और भी निकट पाया। वे बाहर से कुछ कठोर हैं किन्तु भीतर हर डाब की तरह स्निग्ध कोमल हैं यह बात मेरे अनुभव में आ सकी थी। किसी तरह उनके मन के भीतर कोई पहुँच सके, पता चलेगा कि वे एकदम मन पसन्द व्यक्ति हैं। उनकी पुस्तक कवि में आया है न—'जीवन एतो छोटो केन ?' साहित्यकार और व्यक्ति ताराशंकर एक वक्त तो अति सहज ही एकाकार हो जाते। और तब वे अपने मन की बात खोलकर कहते। उनके जीवन का प्रकृत उद्देश्य क्या है यह बात घरेलू बातचीतों में ठीक-ठीक पता चलती।

उस बार हम बहुत से लोग दल बनाकर कलकत्ता से नागपुर गये अखिल भारत साहित्य सम्मेलन में भाग लेने। ताराशंकर साहित्य शाखा के सभापति थे और शिशु साहित्य शाखा का दायित्व रखा गया था मुझ पर।

साहित्य शाखा का भाषण पहले दिन ही पूरा हो गया। दूसरे दिन शिशु-साहित्य विभाग के सभापति का भाषण देना होगा। मैंने ताराशंकर को जा पकड़ा। इस विभाग का उद्घाटन करना पड़ेगा आपको। वे गोया बड़े संकट में पड़ गये।

मेरी ओर देखकर असहाय की तरह उत्तर दिया— सो कैसे होगा ? मैं तो आज दायित्वमुक्त हूँ। एक गाड़ी का भी प्रबंध हो गया है। सो मैंने सोचा है कि आस पास की जगह घूमकर देखूँगा।'

मैंने जिद पकड़ी— मगर आपको उद्घाटन करना ही होगा। उससे पहले आपकी छुट्टी नहीं।

उस दिन अनुज साहित्यकार की जिद उन्होंने पूरी की और पूर्व निर्धारित कार्यक्रम एकदम रद्द कर दिया गया। सिर्फ इतना ही नहीं अनुष्ठान में अंत तक उपस्थित रहे।

मुझे अपना एक पुस्तक ताराशंकर के नाम उत्सर्ग करने का सौभाग्य मिला था। पुस्तक है 'पाला पार्वण आ छड़ा छंद'। यह पुस्तक अनेक चित्रों से सजाई गई थी। पुस्तक जब उनके हाथ में दी तो उनका चेहरा हँसी खुशी से उज्ज्वल हो गया। लगा कि वे बहुत खुश हुए। बोले—

मुझे एक प्रति और देनी पडेगी। एक रहेगी मेरी अपनी अलमारी म और दूसरी दूगा नानी नातिनिया को पढन। कहकर व बडे मनायोग के साथ शुरू म ही आखिर तक चित्रो का देखन लग। नाराशकर स्वय चित्र बनात है यह बात मैं तब नही जानता था।

नाराशकर ने जब युगान्तर म प्रति शनिवार ग्रामेर चिठि शुरू की उसस पहले एक दिन शाम को युगान्तर-सम्पादक सुकमलकान्ति घाप के साथ आय। हम सबक साथ चहल पहल की। बोले— अब मैं युगान्तर का पत्रकार हो गया। मगर यह काम ता कभी किया नही। कर पाऊगा? मुकमल बाबू हसत हुए बोले— जीवन भर गाव स प्यार किया है कर क्या नही पायग? बड बाबू के लिए असाध्य क्या?'

बहुत स लाग उन्हे बडेबाबू कहत।

उस दिन शाम का सुकमल बाबू न सभी का मुह मीठा कराया।

शरत् समिति का अनुष्ठान प्राय ही दक्षिण कलकत्ता म होता। ताराशकर और मैं अधिकाश अधिवशना म सम्पादक शैलेन गुह राय की गाडी मे साथ साथ जात। रास्त म नाना प्रकार की साहित्य वाता होती। वह भी कम उपभाग्य नही थी।

नरन देव थ शरत समिति के सभापति। व जब हम लागा का छोड-कर परलोक के रास्त पर चल गए ता प्रश्न उठा इस बार शरत् समिति का सभापति कान हागा? शलन बाबू और मैंन कायवाहक समिति म कहा— ताराशकर का छाडकर इस पद पर और कौन बठगा?' प्रस्ताव सवसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। बगसाहित्य सम्मेलन म भी हम लागा न उन्हे घनिष्ठ भाव स पाया।

उसी दिन की तो बात है।

रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय की उपाचाय डा० रमा चाधुरी के आमत्रण पर हम लाग अवनीन्द्र कुमार शतवार्षिकी उत्सव म भाग लेने गय थ। ताराशकर न अवनीन्द्र नाथ के साहित्य पर लिखित भाषण दिया। सौम्येन्द्र नाथ ने उनकी शिल्पकला पर भाषण दिया। मैंने अवनीन्द्र नाथ के शिशु साहित्य पर प्रकाश डाला। यह अन्तिम साहित्य सभा थी जिसम ताराशकर और मैं पास पास बठे थ।

हा, घरेलू तार पर श्रीमती आशापूर्णा देवी के घर रविवासर क एक अनुष्ठान म ताराशकर ने हमे लोगा को दा गल्प पढकर सुनाई था। इसक कुछेक दिना बाद ही अनुजा ताराशकर हठात् अस्वस्थ हा गय ह। हम लोगा का और सौभाग्य प्राप्त नही हुआ कि आमने-सामने स्वस्थ शरीर स उनस बात कर सकें।

एक और बात मन म आती है। इस बार पूजा पर ताराशकर हमारी पत्रिका सबूज पाता म अपना अन्तिम गीत वाणी क चरणा म अघ्य क रूप म द गय ह। वही शायद उनकी अन्तिम रचना है। ताराशकर का आखिरी साहित्यिक अघ्य।

लखक ताराशकर की जीवन भर की साहित्य साधना अमर रहेगा, मगर मानव ताराशकर क सान्निध्य स हम लोग हमशा क लिए वचित हो गय। यह क्षति पूरी होने की नहा।

साहित्यकार शैलजानंद

□□

बंधुवर शैलजानंद हम लोगों को छोड़कर चले गये हैं। अपने जीवन के अन्तिम कुछेक वर्षों में वे एक प्रकार से शय्याशायी ही रहे। उनका सबसे बड़ा दुख यह था कि वे तब लिख नहीं पाते थे। उनका लेखन ही जीवन था, मगर वह लेखनी चलाने का काम उन्हें बड़ी वेदना के साथ बंद करना पड़ा।

इस लेखन वाले मामले को लेकर ही उन्हें तरुणावस्था में बड़े आदमी नाना के घर से चले आना पड़ा था। तब वे एकदम निराश्रय थे। उन्हें कौन जाने?

साहित्य जगत में उन्हें स्वीकृति मिली बहुत बाद में। उनके मित्र नजरुल जब युद्ध से लौटे, तब उन्होंने नजरुल को अपने मैस में जगह दी थी। मगर मैस के बोर्डर थे कट्टर हिन्दू। अपनी जात बचाने के लिए कटिबद्ध। इसीलिए एक दिन शैलजानंद को अपने हाथों से अपने मित्र के बर्तन माँजने पड़े थे। अवश्य ही बाद में नजरुल ने कालेज स्ट्रीट में अपने लिए अलग जगह ले ली थी।

स्थान बदल गया, मगर बंधुत्व में कभी गांठ नहीं पड़ी। आजीवन उनकी सख्यता अटूट रही।

मेरे साथ शैलजानंद का परिचय हुआ 'कल्लोल'-कार्यालय में। वहाँ आकर नजरुल अपना गायन जमाते। और आते थे पवित्र गांगुली अचिंत्य कुमार सेनगुप्त प्रेमेन्द्र मित्र, प्रबोध सान्याल, नृपेन्द्र कृष्ण चट्टोपाध्याय युवनाश्व (मनीष घटक) भूपति चौधुरी बुद्धदेव बसु (उस वक्त छात्र थे बीच बीच में आते थे) आदि। शरतचन्द्र के बाद धरती के आदमी की कहानियां लिखकर शैलजानंद ने थोड़े ही दिनों में अड्डा जमा दिया।

मैंने शैलजानंद को जीवन में नाना तरह से नाना वेशों में देखा है।

कभी कहानी लिख रहे हैं उपन्यास लिए बैठे हैं। कभी देखता हूँ कि वे किसी पत्रिका का सम्पादन कर रहे हैं कभी सिनेमा जगत् में जाकर परिचालक की शागिर्दी कर रहे हैं। कभी स्वयं ही छवि के बाद छवि का निर्देशन कर रहे हैं।

कभी फकीर कभी राजा। बहरहाल उनका प्रीति मुग्ध मन था एक दम गंगाजल में धुला। वहां किसी भी समय किसी भी प्रकार की मलिनता नहीं जम सकी।

एक समय वे श्यामपुकुर स्ट्रीट में एक पुस्तकालय के पास वाली गली में बहुत ही साधारण ढंग से रहते थे। चटाई बिछाये लेट-लेटे दोपहर के वक्त गल्पें लिखे जा रहे हैं। बाहर की रौद्रदग्ध दुनिया की ओर भ्रूक्षेप तक नहीं करते।

जब उन्होंने 'कल्लोल' छोड़कर 'कालिकलम' पकड़ी, तब भी उनके साथ यथेष्ट हृद्यता थी। मैंने एक वक्त 'कालिकलम' के लिए बहुत-सी 'टाप डिजायन और टेल डिजायन तैयार की थी। शैलजानंद प्रेमेन्द्र मित्र और मुरली धर वसु—ये तीनों जने उस समय 'कालिकलम' चलाते थे। कर्माध्यक्ष थे शिशिर कुमार नियोगी।

वहां भी जबरदस्त साहित्यिक अड्डा चलता। काजी नजरुल आकर गायन जमाते। अनेक तरुण साहित्यकार और कवि आकर महफिल को गर्म कर देते।

शैलजानंद जिन दिनों 'बायस्कोप' और 'साहाना' का सम्पादन करते थे तब भी उनके साथ मेरा सम्पर्क था।

शैलजानंद के सिनेमा जगत वाले योगदान की बात भी मुझे मालूम है। एक नामी साहित्यकार कहानी लेखक और परिचालक के रूप में सिनेमा जगत में योगदान कर रहा है इस खबर ने कलकत्ता में सनसनी मचा दी थी।

मैं उन दिनों रूपवाणी सिनेमा का प्रचार सचिव था। शैलजानंद की पहली छवि शहर थेके दूर मेरे हाथों ही रूपवाणी में रिलीज हुई थी।

तब मैं अवाक् होकर देखता यह छवि किस तरह दिन पर दिन, मास

पर मास भरे हाल म चल रही है। शैलजानद शायद दशको के मन की बात जान गय थे। तभी तो उनकी छविया न इस कदर दशको को आनन्दित किया था। कितनी उत्तेजना और कैसी मनसनी का युग था वह।

फिर यह भी देखा कि शलजानद की सिनेमा जगत वाली लोकप्रियता धुधली होती जा रही है। अब दशक शलजानद की गल्पे और नही चाहता, उसका मन अन्य किस्म की कहानी पान के लिए उत्सुक है। तब शैलजानद छायाजगत् छोडकर साहित्य जगत म लौट आये।

तब शायद थोडी देर हो गई थी। बगदश की गल्प म एक मोड आ गया था।

फिर भी शलजानद ने कहानियो की दुनिया मे कुछ नया सुनाना चाहा। फिर स नये सिर मे कलम लकर उठ खडे हुए।

शलजानद के साथ अनक सभा-समितियो म योगदान करने का सौभाग्य मुझ प्राप्त हुआ है। एक बार आसनसोल के तरुण मित्रो न स्थानीय रलवे इन्स्टीटयूशन म बग साहित्य सम्मेलन का आयोजन किया। उस अधिवेशन म ताराशकर शलजानद और मैं एक साथ भाग लन गय थ। उनकी मधुर स्मति आज भी ताजा है।

शैलजानद बडी सहज भाषा म बात को सुदर बोधगम्य बनाकर भाषण द सकत थे। उनका स्वर था बडा उन्मुक्त। मैं उन्ह बहुत बार 'सब पेयछिर आसर के अधिवेशन म शोभाबाजार राजबाटी लकर आया हू।

व छोटे बच्चो को कहानिया सुनात और अति सहज ही महफिल जमा दते। 'आसर' सम्मेलन को दखकर उन्होने जो प्रशसापत्र दिय, वे आज भी आसर' क दफ्तर म रखे है।

अति सहज ही व छोटे-बडे सभी को अपना बना लेते थे। एक बार जो उनके सान्निध्य म आता, वह किसी तरह भी उनके चरित्र का माधुय नही भूल पाता।

शलजानद की अभिनय-क्षमता असाधारण थी। वे साहित्यकारो सबसे अच्छा अभिनय कर सकते थे। मैं सब पयछिर आसर म प्री मीतवाल म महाजाति सदन म साहित्यकारो के एक अभिनय का

निकट के व्यक्ति नारायण गांगुली

□□

वहुत वक्त गुजर गया। वगाब्द १३३८ हागा। हम चार मित्रा न मिलकर बच्चो क लिए एक पत्रिका निकाली थी— मासपयला'। मित्र हुए क्षितीश भट्टाचाय सुनिमल वसु प्रतुल वद्योपाध्याय और यह नाचीज।

हम चारा न काय विभाजन कर लिया था। मैं मूल रूप स सम्पादन करता, कवि सुनिमल वसु कविताओ का चयन कर दत आर स्वय मजेदार कविताए प्रस्तुत करत। सबस ज्यादा काम क आदमी थे क्षितीश भट्टाचाय। उन्होंने मुद्रण व्यवस्था और प्रकाशन का सारा दायित्व ले लिया था। एक गौरवकर्मी थे शिल्पी प्रतुल वद्योपाध्याय। व सारे चित्र तैयार कर माम पयला का गौरव बढात। कहना पडेगा कि हम लागा का भाग्य अच्छा था कारण— हिमानी स्नो' के स्वत्वाधिकारी जितन वद्योपाध्याय हम लोगा का वडा स्नेह करत थे। व नाम मात्र का चाज (पसा) लेकर अपन प्रेस म मासपयला' छाप दत। उस जमाने म कागज की कीमत बहुत कम थी। हम घय किया था स्वय रवीन्द्रनाथ, अवनीन्द्रनाथ और वगाल के अयान्य जान माने साहित्यकारा न। वे सभी अपनी रचनाए देकर हम अनुगृहीत करत। हेमेन्द्र कुमार तो हम लागा क एकदम दोस्त ही बन गय थ। यह पत्रिका महीन के पहले दिन प्रकाशित हा इसलिए मैंन ही नाम रखा था 'मासपयला। यह पत्रिका बहुत थाडे ही दिना म बच्चा के बीच प्रिय हा उठी।

कहत है न खुशी क मारे पागल! हम लोगो की तब ऐसी ही अवस्था थी। न० ३० वलिंग्टन म हमारा डेरा था। निवास और पत्रिका-सचालन बस साथ साथ।

उन सानाली हसी-खुशी वाले दिना म हम लोग वगाल के

अचला म अनेक पत्र प्राप्त करत। विशेषकर पहलिया के उत्तर लिख लिख कर लडके-लडकिया ढर की ढेर चिट्ठिया भेजत।

एक दिन एक पत्र आया उत्तरी बगाल से। हाथ के लिखे अक्षर ठीक मोतिया की तरह। बच्चा के लिए एक सुदर कविता थी। तुक और छद म माना मैत्री हा। लखक का नाम दखा—नारायण गगापाध्याय।

परवर्ती काल म जब नारायण बाबू स्थायी रूप से कलकत्ता चल आय तब बातचीत क सिलसिले मे उन्ही न एक दिन मुझस कहा—'अखिल बाबू आपने ही मरी रचना सबस पहल प्रकाशित की थी मास पयला म।'

यह ब्रह्मास्त्र उन्होन मरे हाथ म रखा था। इस बात का लेकर मरे गर्व और मरी हसी का अत न था। बहुत सी सभा-समितिया म हम लाग साथ साथ जात, व सभापति हा और मैं प्रधान अतिथि अथवा मैं सभापति, और व प्रधान अतिथि। इन अवसरो पर मैं अपन भाषण म बडे मजे का परिवेश प्रस्तुत करता।

मैं गम्भीरता क साथ वक्तता शुरू करता— आज आप लोग जिस सबजनप्रिय ख्यातिमान साहित्यकार को सभापति के रूप म वरण करके लाय हैं एक वक्त था जब उसकी पहली कविता मैंने मास पयला म प्रकाशित की थी। इसलिए आप लोग मुझ निहायत नगण्य आदमी न समझ लीजिए। पास बठे नारायण बाबू मद मद मुसकरात और रूमाल स अपना मुह ढकत। वह निश्छल हसी जस आज भी आखा म देख पाता हू।

एक दिन हिसाब करक देखन म आया कि नारायण बाबू मुझस एक युग स भी ज्यादा छाटे हैं मगर हम दाना क बधुत्व मे कोई बाधा नहीं आई। नारायण बाबू क नाम का लकर भी मरी रसिकता का अत न था। मैं कहता स्वय नारदनाथ हाकर भी यह पद आपका पसद न आया ? क्यों स मुस्तान छाड लकर सीधे वकुण्ठ म नारायण हो गये ?'

उत्तर म व कुछ न कहत चहर पर बस फली मद मुस्कान हाता।

मैं नारायण बाबू क पटलडागा वाल मकान पर भी गया हू। एक दिन शाम क वक्त मर पहुचत ही व हमककर उठ खडे हुए। अभिवादन करत हुए बाल— 'अखिल स्वरनबूढा आपकी वजह स मरी एक नयी पाशको

और हो गई। श्रीमान बबलू को हजार बार अब यह 'स्वपन बूडो' रिकाड सुनाओ।"

नारायण बाबू का लडका बबलू तब बहुत ही छोटा था। उसे लेकर मा-बाप की परेशानियों का अंत नहीं। बहुत से खेल खिलौने है, तरह-तरह की चित्रों वाली पुस्तक ला दी है मगर बबलू की जिद है—सवपन डा का रिकाड सुनूगा। उस दिन बाप-बेटे का वह मधुर कलह जी खोलकर उपभोग किया था।

नारायण बाबू चित्रकारों द्वारा हाथ से बनाये चित्र (छपे हुए नहीं) कमरे में टांग रखना बडा पसंद करते। उस दिन भी कुछेक चित्र मुझे दिखाये। देशी विदेशी बहुत से शिल्पियों के चित्रों को लेकर तरह तरह की चर्चा हुई। मैं स्वयं भी तो सरकारी शिल्प विद्यालय का छात्र रहा हू। मगर उस दिन उस चर्चा से समझ में आया कि नारायण बाबू शिल्प-जगत के बारे में इतना अधिक जानते है कि हम लोग शिल्पी होकर भी उनके पास नहीं पहुच सकते। बहुत दिनों के सम्पर्क से मैं यह बात भी समझ पाया हू कि नारायण बाबू की स्मरण शक्ति जबरदस्त थी। बिना कोई पुस्तकादि देखे व शिल्पसाहित्य राजनीति किसी भी विषय पर समानभाव से चर्चा-समीक्षा कर सकते थे।

मेरा 'बेपरोया' नामक एक किशोर उपन्यास है। बंगाल के दो नामी साहित्यकार उसके विषय में मत व्यक्त कर मुझे धन्य कर गये है। एक हैं मानिक बद्योपाध्याय, और दूसरे नारायण गंगोपाध्याय। मानिक बद्योपाध्याय ने मुझसे कहा था कि जब 'बेपरोया' धारावाहिक रूप में 'शिशु साथी' में प्रकाशित होता था, तब वे टांगाइल में एक विद्यालय के छात्र थे हर महीने इस बेपरोया के लिए वे बडी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करते।

नारायण बाबू भी तब विद्यालय के छात्र थे। बाद में उन्होंने मुझे बताया था— हर महीने 'बेपरोया' पढने और उसके चित्र देखने के लिए मन में कैसी चंचलता अनुभव करता था, यह समझा नहीं सकता।"

बेपरोया की बात का उल्लेख किया, इसका एक और भी कारण है। वही खोलकर बताता हू—

इस समय 'शिशु साहित्य परिषद्' का रजतजयन्ती वर्ष चल रहा है। परिषद् के कार्यकर्ताओं ने प्रति माह एक विचार-गोष्ठी का आयोजन रखा है। पूजा से पहले ही उस माह की गोष्ठी के लिए विषय रखा गया था 'शिशु साहित्य में गल्प और उपन्यास'। अधिवेशन था कवि नरेन्द्र देव के घर पर। वक्ता थे नारायण गंगोपाध्याय। एक विशेष कार्य में फंसा होने के कारण मैं उस अधिवेशन में उपस्थित नहीं हो सका। मगर नारायण बाबू के विचार सुनने के लिए मेरी उत्सुकता की सीमा न थी। बाद में हम लोगों के अनुजप्रतिम दोस्त रविरंजन चट्टोपाध्याय के मुंह से सुना कि नारायण बाबू ने अपने बचपन में पढ़े 'कपरोया' की बात से ही अपना वक्तव्य शुरू की थी। बाल्यकाल की बात उन्होंने अपने मन के भीतर सजाये रखी थी, यह बात इतने दिनों बाद जानकर मेरे विस्मय की सीमा न रही।

यह वह समय था जब नारायण बाबू उत्तर और मध्य कलकत्ता छोड़कर गोलपार्क के पास मकान खरीदकर रह रहे थे। अब उनसे बहुत मुलाकात नहीं होती थी।

नारायण बाबू जब पटलडांगावाला घर छोड़कर मेछो-बाजार में अर्थात् वैठकखाने में मकान खरीदकर चले आये तब भी हम लोगों के हंसी मजाक की सीमा न थी।

यह क्या बात हुई? स्वयं नारायण आकर अधिष्ठित हुए मेछो (मछुआ) बाजार में? पटलडांगा के टेनिदा प्याला हाबुल सेन आदि ने क्या विदा ले ली?'

नारायण बाबू के चेहरे पर वही मंद हास्य।

जीवन तो है ही नदी स्रोत की तरह। बंधे जलाशय में आबद्ध रहने वाले व्यक्ति नहीं नारायण बाबू। इसके अतिरिक्त, नारायण साहित्य तो असल में बहते नदी स्रोत की तरह है। वह कभी एक स्थान पर रुका नहीं रहता।

इन दिनों कल्याणीया आशा 'पातताड़ि' में खूब कविताएं लिखती। नारायण बाबू कहते— 'आशा जो कविताएं स्वप्नबूटों को छपने के लिए दो उन्हें अच्छी तरह देखकर देना।'

आशाजी बोलीं— 'आइये दादा आपको नया घर दिखाऊं। बस

पुराना मकान है, मगर हम लोगों ने तय किया है कि इसे ताड-फाड़कर अपने हिसाब से तैयार करेंगे।"

इस बीच बाबुर काफी बड़ा हो गया है। तरह-तरह की पुस्तकें पढ़ना पसंद करता है। स्वप्नबुड़ो की नाना तरह की पुस्तकें उसे उपहार में दी है।

एक बात शायद बहुत से नहीं जानते, नारायण बाबू कमाल का अभिनय कर सकते थे। साधारण रंगालय के अभिनेताओं से अच्छा ही कहा बुरा नहीं। हम लोगों ने अनेक बार साथ साथ अभिनय भी किया है। अब वही बात बताता हू।

सब पेथछिर आसर की ओर से यह योजना बनाई गई कि हर साल दिसम्बर के महीने मे आसर के वार्षिक उत्सव में सात दिन तक महाजाति सदन में जो अनुष्ठान होगा, उसमें उन कुछेक दिनों के लिए साहित्यकारों का अभिनय निर्धारित होगा। एक एक साल एक एक साहित्यकार नाटक लिखता और बगाल के नामी साहित्यकार मच पर वह नाटक खेलते। शुरुआत रवीन्द्रनाथ से ही हुई, तत्पश्चात मन्मथ राय, शैलजानंद आदि ने नाटक लिखे। उस वर्ष नाटक लिखने का भार पड़ा नारायण बाबू पर।

बार-बार फोन कर रहा हू आदमी भेज रहा हू मगर नारायण बाबू का ठिकाना नहीं। उन दिनों नारायण बाबू बड़े व्यस्त। कॉलेज की कापियाँ रखना सिनेमा परिचालकों को चित्र-नाट्य सप्लाई करना, प्रकाशकों के अनुरोध रखना प्रूफ देखना, छात्रों की मांगें मानना इत्यादि। अंत में एक दिन शाम के वक्त खुद ही गया। स्वामी स्त्री दोनों को ही जा पकड़ा। नारायण बाबू ना नू करने लगे। अंत में मैंने गम्भीर मूर्ति धारण कर कहा—"देखो आशा, तुम 'पाततांड़ि' की लेखिका हो। मैं तुम्हें अपना प्रतिनिधि नियुक्त किये जाता हू। जीवित या मृत नारायण गांगुली से एक रात के भीतर एक हंसी का नाटक लिखवाना है। जरूरी हो तो तुम स्टोव जलाकर चाय या काफी बना देना। मोटी बात यह कि मुझे नाटक चाहिए।'

यह आदेश देकर मैं तो मच के अभिनेता की तरह खट-खटकर चल पड़ा। बाद की घटना और भी नाटकीय।

यानी नारायण बाबू ने असाध्य साधन किया। सारी रात जगकर उन्होंने वह विख्यात हास्य नाटक 'भाडाटे चाइ' लिख डाला था। साथ ही साथ पूर्वाभ्यास शुरू हो गया और प्रगनेश के यशस्वी साहित्यकारों ने उसका अभिनय कर सारे प्रेक्षागृह को मतवाला बना डाला था। नारायण बाबू ने स्वयं भी हम लोगों के साथ उस अभिनय में भाग लिया था। वम आनन्द के दिन थे वे। उल्टारथ की ओर से फोटोग्राफर आकर साहित्यकारों के फोटो खींच लाते थे। परवर्ती अंक में नारायण बाबू के नाटक के साथ वे मजेदार फोटो उल्टारथ में छपे थे। बच्चे बूढ़े सभी वर्गों में एक जबरदस्त सनसनी फैल गयी थी। सभी कहते पुस्तक चाहिए यह नाटक हम लोग भी खेलेंगे। बंगदेश में ऐसा नाट्य प्रतिष्ठान न था, जिसने नारायण गांगुली के इस नाटक 'भाडाटे चाइ' को मंचस्थ न किया हो। यह पुस्तक उन्होंने स्वपनबूडो को समर्पित की थी।

यह बात सभी जानते हैं कि नाटक की पुस्तक थोड़ी देर से बिकती है मगर यह भाडाटे चाइ हाथों हाथ बिक गयी। जब उसका तीसरा संस्करण निकला, तब एक दिन कल्याणीया आशा ने नारायण बाबू के सामने ही मुझसे कहा— 'भाडाटे चाइ का सारा कृतित्व मगर आपका है। आप यदि जोर धाक से नाटक न लिखवाते तो इसका जन्म होता कि नहीं, सन्देह है। नारायण बाबू पास बैठे चुपचाप मंद मंद मुस्कराते रहे। इसी तरह एक और नाटक मैंने नारायण बाबू से लिखवाया था। वह है 'वारो भूत'। कहना ही काफी यह नाटक भी बंगाल के साहित्यकारों ने महाजाति सदन में मंचस्थ किया था।

उसके बाद एक दिन श्रीमती आशा ने मुझे फोन किया— 'स्वपनबूडो, तुरन्त आइए आपकी मुझे खास जरूरत है। शाम को गया। सुसंवाद श्रीमती ने स्वयं ही दिया— बांग्ला शिशु साहित्येर क्रम विकास लिखकर श्रीमती ने डी० फिल० डिग्री प्राप्त की है। मैं आनन्द-संदेश से प्रफुल्लित होकर बोला—तब तो मिठाई पक्की हो गयी। आशा जी साथ ही-साथ बोलीं—'हमारे घर के पास इस समय गर्म रसगुल्ले तैयार होते हैं। ठहरिये, आज वही खिलाती हूँ। और सचमुच ही एक थाली गर्म रसगुल्ले आ गये। नारायण बाबू पास ही बैठे थे, बोले— आशा तुमने स्वपनबूडो

की अपनी पुस्तक दी नहीं ?' वे बोली—'वह देने के लिए ही तो न्यौता दिया है।' और अपने हाथ से लिखकर उन्होंने पुस्तक मेरे हाथ में दे दी। नारायण बाबू बोले—'हम दोनों को आप बहुत पहले से ही उत्साहित करते आये हैं।" अब मेरे हँसने की बारी थी।

एक बार नारायण बाबू आशा के साथ मेरे यहाँ घूमने आये थे। अन्यान्य पदार्थों के साथ घर में तैयार हुआ आलूदम खाकर उच्छ्वसित होकर बोले—"बौदि के हाथ का यह आलूदम खाने के लिए ही मुझे फिर यहाँ आना पड़ेगा।" जब भी मिलते, आलूदम की बात याद दिला देते। मैं मजाक करता—'आओगे नहीं तो आलूदम क्या आसमान में मिलेगा ?'

और एक दिन सुबह नारायण बाबू अचानक मेरे यहाँ आ निकले। बोले—'बलाइदा (बनफूल) का फ्लैट नहीं जानता आप मुझे ले चलेंगे ?' मैं बोला—'ले तो चलूँगा मगर बलाइदा बड़े ऊर्ध्व लोक में रहते हैं—मतलब चौथी मंजिल पर।'

हम दोनों वहाँ पहुँचे। साहित्य पर बहुत कुछ चर्चा हुई। बौदि की मिठाई भी मिली। उन दिनों नारायण बाबू बहुत लिख रहे थे इसलिए बलाइदा की कुछ मृदु भर्त्सना भी प्राप्त हुई। महानन्द में हम दोनों फिर नीचे उतर आये।

नारायण बाबू के विरुद्ध मेरा एक अभियोग है वे अपनी अंतिम प्रतिश्रुतियाँ पूरी करके नहीं गये। पहली मेरे घर आकर गर्म गर्म आलूदम खायेंगे। दूसरी, वे मेरे लिखे 'स्वर्गीय साहित्य समावेश' में रवीन्द्र नाथ की भूमिका में उतरेंगे। दोनों में से किसी की भी रक्षा नहीं की। और दक्षिण कलकत्ता चले गये थे, सो मुलाकात भी कम होती थी।

मैंने तय किया है, उन्हें आसानी से नहीं छोड़ूँगा। अंतिम वायदा पूरा न करने की कैफियत उन्हें देनी पड़ेगी।

एक उपाय भी खोज निकाला है। सम्भव है आप लोगों में से बहुत-से विश्वास करना न चाहें।

इस कलकत्ता शहर में 'सालर क्लब' नामक एक प्रतिष्ठान है। वहाँ बहुत-से साहित्यकार और शिल्पी इकट्ठे होकर अनेक अशरीरी आत्माओं

का आह्वान करते हैं। इस बीच बहुत सी आत्माओं ने शुभागमन किया है। रवीन्द्र नाथ अवनीन्द्र नाथ जार्ज बर्नार्ड शॉ आइन्स्टाइन, सुनिमल बसु, विभूति भूषण बंद्योपाध्याय—बहुतों ने वहां आकर अपने मत विचार व्यक्त किये हैं। तय किया है उस 'सोलर क्लब' में ही नारायण गांगुली को बुलाऊंगा।

और इसमें अविश्वास की बात ही क्या? ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने जब नित्य लीला में प्रवेश किया तो श्री श्रीमां अपने हाथों के अलंकार खोलने को हुई थीं। ठाकुर ने उन्हें रोककर कहा—"मैं क्या मर गया हूं? यह तो 'यह कमरा और वह कमरा'।"

संस्कृति-प्रतीक सौम्येन्द्र नाथ

□□

सौम्येन्द्र नाथ हम लोगों को छोड़कर चले गये।

उन्होंने असमय परलोक गमन किया यह बात नहीं कहूँगा।

बहरहाल वे यदि और भी कुछेक वर्ष हमारे बीच रहकर भारत के सांस्कृतिक जगत को उज्ज्वल किये रखते तो अच्छा। वे संस्कृति प्रतीक थे। जोड़ासाको ठाकुरबाड़ी की अंतिम प्रतिभादीप्त उज्ज्वल शिखा के रूप में होते।

महर्षि देवेन्द्र नाथ के ज्येष्ठ पुत्र थे दार्शनिक द्विजेन्द्र नाथ ठाकुर। उनके पुत्र थे सुधीन्द्र नाथ ठाकुर। सौम्येन्द्र सुधीन्द्र नाथ के लड़के थे। और विश्वकवि रवीन्द्रनाथ के बड़े दादा के पोते होने के नाते उनके भी प्यार के पात्र हुए। सौम्येन्द्र नाथ हम लोगों से कहते कि उन्होंने सदा ही देश विदेश में रवीन्द्रनाथ की स्नेह छाया प्राप्त की थी।

सौम्येन्द्र नाथ मेरे समवयस थे।

उन्हें अपने बचपन की बातें मित्रों को बताना बड़ा अच्छा लगता। वे जब बहुत छोटे थे एकबारगी शिशु ही कहिये, तब महर्षि देवेन्द्र नाथ के साथ छत पर गेंद खेलते। एक बार महर्षि बाल उनकी ओर ढलकाते दूसरी बार सौम्येन्द्र नाथ उसे महर्षि की तरफ वापस कर देते। यह था महर्षि और उनके प्यारे पोते का खेल। सौम्येन्द्र नाथ का नामकरण महर्षि देवेन्द्र नाथ ने ही किया था। इसके लिए सौम्येन्द्र नाथ हमेशा गर्व अनुभव करते।

सौम्येन्द्र नाथ ने मुझे बताया था कि वे किशोरावस्था में बाँसुरी बहुत अच्छी बजाते थे और उनकी वंशी सुनकर स्वयं रवीन्द्रनाथ बड़े खुश होते।

जोड़ासाको ठाकुरबाड़ी में जब रवीन्द्रनाथ का 'डाकघर' पहली बार अभिनीत हुआ था, तब सौम्येन्द्र नाथ किशोर थे। उन्होंने रवीन्द्रनाथ के आगे-आगे वंशी बजाते हुए मंच पर प्रवेश किया था। वह पुरानी छवि

उन्होंने गर्ग यार मुझे प्यारी थी। आह, यह न्नि मच जगत की दुनिया म उनका माना पटटी-पूजन था। सौम्येन्द्र नाथ का कोई डायलाग नहीं था मगर सिर्फ वामुरी बजाकर ही उन्होंने सबको बड़ा आनन्द पहुचाया। डाकघर म रवीन्द्र नाथ थे ठाकुदा।

सौम्येन्द्र नाथ क साथ परिचय कितन दिन पहल हुआ था, यह बात एक प्रकार म भूल ही गया हू।

सौम्येन्द्र नाथ सुवक्ता सुगायक और राजनीतिक नता थ, यह बात सभी जानन हैं। मगर व बच्चा का परीकथाओ की भाषा म गजब की कहानिया सुना सकत थ यह बात कितन लाग जानत हैं? मैं बहुत बार उन्ह पकड़कर लाया—सब पयछिर आसर' म—छोटे छोटे बच्चा का कहानिया सुनवान क लिए। व सहज भाव म अपनी अनुकरणीय भाषा म गल्पा की एक इन्द्रपुरी रच दत। उस इन्द्रपुरी म प्रवशाधिकार पाकर बच्च एकदम सम्मोहित हो जात।

सौम्येन्द्र नाथ अपन एक दुख और वन्ना की बात प्राय हम लोगा का बतात। वह थी महर्षि भवन की बात। बचपन म उन्होंने दखा था सार भारत क और विदश के कितन ही विख्यात लाग इस भवन म आत थे और महर्षि देवेन्द्र नाथ क साथ कितन ही विषया पर बातें करत थे। मगर उसी भवन की वतमान अवस्था देखकर वे एक लबी सास छोडत। और कोई देश होता, तो सक्सपियर भवन अथवा गार्की का घर' की तरह उसका यत्न सरक्षण किया जाता। मगर हमारे इस अभाग दश म कुछ भी होन का उपाय नहीं! महर्षि की व्यवहार की गयी चीजें उन्ह लिखी गयी। देश-विदश के मनीषिया की चिटठी पत्रिया तथा और भी बहुत-सा एतिहासिक वस्तुए इस महर्षि भवन म यत्नपूवक सरक्षित हो सकती थी।

सौम्येन्द्र नाथ ने सन् १९०१ क अक्तूबर मास म जोडासाको क 'महर्षि भवन म जन्म ग्रहण किया था। और शरीर छोडा २२ सितम्बर १९६८ को रविवार दोपहर बारह बजकर पाच मिनट पर अपने घर (चार नम्बर एलगिन रोड) म। व नि सन्तान थ। श्रीमती ठाकुर भी एक सुसस्कृत महिला है। नृत्य और शिल्प क क्षेत्र म एक वक्त उनकी असामान्य प्रतिभा परिलक्षित हुई थी। सौम्येन्द्र नाथ की मा थी चारु बाला देवी। पिता सुधीन्द्र नाथ

उस जमाने मे एक विख्यात साहित्यकार थ। और साधना' पत्रिका के सम्पादक थे। रवीन्द्रनाथ ने एक समय उनकी बहुत-सी रचनाए उस पत्रिका मे प्रकाशित कर सुधीन्द्र नाथ को उत्साहित किया था। किसी समय रवीन्द्रनाथ न इस पत्रिका का सम्पादन भी किया था। सौम्येन्द्र नाथ न रवीन्द्रनाथ और अपने पिता की साहित्यिक प्रतिभा उत्तराधिकार के रूप म प्राप्त की थी। ऊपर से स्वय की प्रतिभा और अनुशीलन के बल पर विशेष वाग्मी हो गये। सगीत शास्त्र मे उनकी खोज चिरस्मरणीय रहेगी।

सौम्येन्द्र नाथ बचपन मे ठाकुरबाडी के माघोत्सव' म बडा के साथ सगीत प्रस्तुत करते। इस विषय म उनके अग्रज दिनेन्द्रनाथ ठाकुर का योगदान असाधारण था। रवीन्द्रनाथ भी इस नाती को विशेष स्नेह कर उनके साथ बहुत बार गला मिलाते।

सौम्येन्द्र नाथ शशव म घर पर ही गृह-शिक्षक स शिक्षा ग्रहण करत। दस वष की अवस्था म वे पहले क्लावल इन्स्टिटयूट म भर्ती हुए। वहा स व मित्र इन्स्टिटयूशन चले आय। इस विद्यालय स व १९१७ म ससम्मान मट्रिक म उत्तीण हुए। तत्पश्चात वे प्रेसिडेन्सी कालज म भर्ती हुए वहा अथशास्त्र म आनस लेकर उन्होंने बी० ए० की डिग्री हासिल की।

बचपन म ही वे ठाकुरबाडी की प्रेरणा से स्वदेश को प्यार करने लग थ। वे कभी अपने आदश स च्युत नही हुए। जिस रास्त को वे सत्य मानते थ उसी को मन प्राण स स्वीकार किया।

कलकत्ता काग्रस म भी उन्होंन बडे भाई दिनेन्द्र नाथ के साथ स्वदेशी गीत प्रस्तुत किया।

उनके यौवन काल मे काजी नजरुल इसलाम ने लागल' पत्रिका प्रकाशित की थी और नय सिरे स नय छद म कृषका का आह्वान किया था—ओठरे चापी जगतवासी, धरा कोस लागल। सौम्येन्द्र नाथ इस पत्रिका के साथ घनिष्ठ रूप स जुड गये थ।

उस वक्त बगीय कृषक श्रमिक दल म मुजफ्फर अहमद डा० नरश चन्द्र सेनगुप्त, अतुल गुप्त हेमन्त सरकार आदि लोग थे। सौम्येन्द्र नाथ न इस लागल पत्रिका म बहुत स प्रबध लिखे।

एक बार सौम्येन्द्र नाथ योरोप होकर मास्को गय। वहा व कम्युनिस्ट

विचारधारा के साथ पूरी तरह परिचित हुए। सन् १९२८ में उन्होंने छठा अन्तराष्ट्रीय कम्युनिस्ट कांग्रेस में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में मास्को अधिवेशन में भाग लिया था।

वे एक समय जर्मनी गये। वहां जर्मन भाषा में एक काव्य ग्रन्थ प्रकाशित किया। इसके लिए तत्कालीन हिटलर सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। इस लेकर विरोध आन्दोलन ने जन्म लिया। तब विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ने अपने व्यक्तिगत प्रभाव से उन्हें जर्मन कारागार से मुक्त कराया।

सौम्येन्द्र नाथ का पाण्डित्य सर्वविदित था। रवीन्द्रनाथ की सत्तरवीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में उन्होंने बहुत से लेखकों से रवीन्द्रनाथ के विभिन्न पक्षों पर लेख लिखवाकर एक सुन्दर संकलन प्रकाशित किया था। मुझसे अनुरोध किया था शिशु साहित्य में रवीन्द्रनाथ विषय पर लिखने के लिए। मैंने उनके निर्देश का आनन्दपूर्वक पालन किया था।

वे जर्मन फ्रेंच रशियन और अंग्रेजी भाषाओं में बहुत सी पुस्तकें लिख गये हैं। उल्लेखनीय हैं—विप्लवी रुश, चीनी यात्री, रवीन्द्रनाथेर गान आदि। अंग्रेजी कम्युनिज्म एण्ड फासिज्म, टैक्टिक्स एण्ड स्ट्रेटिजी आफ रिवाल्यूशन। फ्रेंच गांधी। (यह पुस्तक पेरिस से प्रकाशित हुई थी)। जर्मन रुस्लैन्ड उण्ड रेवुलुत्सियन (जर्मनी से प्रकाशित)। इनके अतिरिक्त जीवन भर जो प्रबंध निबंध लिखे उनकी संख्या नहीं। बहुत से गीत भी रचे। कलकत्ता रेडियो स्टेशन से बीच-बीच में उनका संगीत प्रसारित हुआ है। वक्तता में भी वे सिद्धहस्त थे। पृथ्वी के बहुत से देशों में नाना विषयों पर रचित उनकी वक्तृतावलि भी प्रसारित हुई है। उन्होंने विदेशी भाषाओं में भी प्रचुर वक्तता दी है।

मुझे सौभाग्य मिला था उनके साथ बहुत सी सभा समितियों में भाग लेने का। अवश्य ही वे सब साहित्यिक और सांस्कृतिक उत्सव-अनुष्ठान थे। कलकत्ता से बाहर भी हम लोगों ने साथ साथ साहित्य सभाएं की हैं और लौटते वक्त ट्रेन में तरह-तरह की चर्चा-समीक्षा की है। ऐसा कोई विषय न था, जिस पर वे चर्चा न कर सकते। उनकी भाषा और अभिव्यक्ति मधुर और मर्मस्पर्शी थी। सौम्येन्द्र नाथ के साथ बहुत देर तक बातचीत कर मन आनन्द से भर उठता।

मैं बहुत बार रसिकता कर उनसे कहता—'आप राजनीति की उस गवई भाषणबाजी को छोड़िए। सीधे और सम्पूर्ण रूप से साहित्य संगीत एवं सांस्कृतिक कामों में आत्मनियोग कीजिए। राजनीति आपके लिए नहीं। साहित्य के पथ पर आकर आप देश को बहुत कुछ दे सकेंगे।'

वे प्रतिवाद न करते सिर्फ मंद-मंद मुस्कराते।

एक बार बहाना अचल में एक साहित्यिक-सांस्कृतिक सम्मेलन हुआ। हम बहुत से लोग उपस्थित थे। विवेकानंद मुखोपाध्याय प्रबोध सान्याल भवानी मुखोपाध्याय अनिल कुमार भट्टाचार्य आदि भी थे। प्रबोध कुमार ने अपने लोगों के बीच एक प्रस्ताव रखा—इस बार से साहित्यकारों को सभापति के रूप में आह्वान किये जाने पर सम्मान दक्षिणा दी जाय कलकत्ता में पचास रुपये, कलकत्ता से बाहर सौ रुपये। सौम्येन्द्र नाथ हंसते-हंसते बोले—'प्रस्ताव अच्छा है संदेह नहीं। मगर गायक गायिकाओं को सुनने के लिए लोग जो पैसा खर्च करेंगे, उसे हम लोगों की नीरस वक्तृता पर खर्च करने के लिए राजी होंगे?"

मगर यह बात सही नहीं। आंशिक सत्य ही है।

दूसरे की बात नहीं जानता। सौम्येन्द्र नाथ यदि अपनी वक्तृता के लिए सम्मान दक्षिणा का दावा करते तो आयोजक बड़ी खुशी से देते। मगर उन्होंने तो किसी दिन भी नहीं चाहा। वे एक बात प्राय कहते परिवेश अच्छा न हो, तो वक्तृता में सुख नहीं। बहुत बार ऐसा हुआ अनुकूल परिवेश न होना अथवा श्रोता गोलमाल करते, तो वे संक्षेप में अपनी वक्तृता खत्म कर देते।

वे सर्वदा अन्याय और असत्य प्रचार के विरुद्ध थे। एक बार उनको एक अभिनंदन सभा में एक साहित्यकार बातचीत के सिलसिले में कह बैठे—सौम्येन्द्र नाथ ने रूस में कम्युनिज्म के विषय में लेनिन के साथ काफी कुछ विचार विमर्श किया था। साथ ही साथ सौम्येन्द्र नाथ ने प्रतिवाद किया। रसिकता कर बोले कि उनके बारे में जगह जगह तरह तरह की अफवाह फैली है वे स्पष्ट करना चाहते हैं कि लेनिन के साथ उनकी कभी मुलाकात नहीं हुई, कारण—वे रूस गये थे लेनिन की मृत्यु के बाद।

उन्हीं के आग्रह पर एक बार रवीन्द्रनाथ जर्मनी से रूस गये थे।

माम्यम्द्र नाथ न म्वय मुस्न बनाया था कि जमनी स म्न वे रास्त उन्होनि मारी रात बामुरी बजाइ थी । अगल दिन मुबह रवीन्द्रनाथ न मनाव करा हुए कहा— सौम्य कल सारी रात तून मुझ सान नही दिया, इस मीठ म्वर म बामुरी बजाय तो कोई मा मकता है ?'

उम बार मावियत रूमा म अधिकाशन मौम्यन्द्र नाथ न ही रवीन्द्रनाथ क दुभाषिय का काम किया था ।

मौम्यन्द्र नाथ न शिमुरानि म कुछ जमीन लकर एक कम-केन्द्र स्थापित किया था । वहा जान क लिए मुझ बहुत बार अनुराध किया मगर मरा जाना नही हुआ ।

पहल ही कह चुका हम दाना न बहुत स स्थाना म साहित्यिक और सास्कृतिक अनुष्ठाना म भाग लिया । उमी उपलक्ष्य म तरह-तरह की चर्चा सभी म म मैं यह जान सका कि व रम म किम प्रकार सरावार थ । बहुत बार ता व रवीन्द्रनाथ की-सी रसिकता करत । तब लगता कि व हास्य क मामल म ठाकुरा क उपयुक्त पोत ह ।

एक बार की बात याद आती है । रवीन्द्र विश्वविद्यालय की उपाचार्या डा० रमा चौधुरी ने अपने शिक्षा केन्द्र म अवनीन्द्र नाथ के सबध म एक समीक्षा सभा का आयाजन किया था । वहा सौम्यन्द्र नाथ न अवनीन्द्र नाथ क तमाम जीवन की चित्रावली पर सम्यक रूप स अपना समीक्षा प्रस्तुत की जिसम वह गोष्ठी एकबारगी जीवन्त हो उठी । उस समीक्षा न उपस्थित श्रोताओ का अन्तस् स्पश कर लिया था ।

सौम्यन्द्र नाथ आत्मा म विश्वास करत थे । शिल्पी मित्र प्रतुल वद्योपाध्याय के घर हम लागा न 'सालर क्लब' की स्थापना की थी । बीच-बीच म आत्माओ का बुलात । सौम्यन्द्र नाथ उन बठका म भाग लेत । एक बार रवीन्द्रनाथ क साथ उन्हान बातें की ।

एक उल्लेखनीय घटना घटी पच्चीमव वशाख (कवि क जन्म दिन पर) दोपहर के वक्त । हम लागा ने तीसरी मजिल पर कमर क सब दरवाजे खिडकिया बदकर रवीन्द्रनाथ की आत्मा का आह्वान किया । उन्हान आकर हम लोगो से बहुत दर तक बात की । मरे अनुरोध पर चार पक्तिया की एक कविता लिख दी । फिर एकाएक हम लोगा का विस्मित कर

चान— मेरे जिस फोटो पर तुम लोगो ने माला चढाई है उसे अमल होम ने एक बार 'म्युनिसिपल गजट' मे प्रकाशित किया था।' बाद मे खोज की गयी बात सच थी।

इसके बाद एक वक्त रवीन्द्रनाथ कुछ व्यस्त-से होकर बोले— अब मैं चलता हूं। सौम्येन्द्र नाथ मुझे बुला रहे हैं।

मैं बोला— 'सौम्येन्द्र नाथ का तो आज महर्षि भवन मे आपके सगीत पर भाषण है।

उत्तर मे रवीन्द्रनाथ की आत्मा बोली— बता दिया, तुम लोग सौम्येन्द्र नाथ को सुनने जाना। आज उनका भाषण खूब अच्छा होगा।"

यह घटना मैंने उसी दिन महर्षि भवन मे भाषण से पहले सौम्येन्द्र नाथ को बताई तो वे मेरी ओर देखकर मद मद मुस्कराये।

उनकी अतिम बार की अस्वस्थता का सवाद मिलने पर मैं एक दोस्त की गाडी लेकर उन्हे देखने गया। श्रीमती ठाकुर बोली— उनसे मिलने के लिए डाक्टर ने मना किया है। समझ सकते है पुराने दोस्त को देखने ही वे बात करने के लिए व्यग्र हो उठते है। कुछ बोल नही सकते। आखो मे बस आसू निकल पडते है। आशा करती हू, न मिल सकने के लिए कुछ ख्याल नही करेगे।'

मैं बोला— नही-नही आपको गलत नही समझूगा। डाक्टर का निर्देश मानना ही पडेगा।' उस दिन भारग्रात मन लेकर चार न० एल्गिन रोड से लौट आया।

नाट्यकार मन्मथ राय

□□

एकाएक एक आमंत्रण-पत्र मे पता चला। २५ दिसम्बर, १९७३ को रूपमंच के सम्पादक श्री कालीश मुखोपाध्याय और स्टार थियेटर के कर्णधार श्री रणजितमल कांकरिया बंग रंगमंच के एकांकी नाटकों के जनक नाट्यकार मन्मथ राय का अभिनंदन कर रहे हैं। 'मुक्तिर डाक' के पचास वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में स्टार मंच पर यह अभिनव आयोजन होगा। और भी खुशी की बात है 'मुक्तिर डाक' खेला जायगा। स्टार थियेटर में ही ठीक पचास वर्ष पहले उन्नीस सौ तईस के बड़े दिन पर सबसे पहले 'मुक्तिर डाक' अभिनीत हुआ था।

पत्र पाते ही अनेक दिनों की अनेक पुरानी बातें छायाचित्रों की तरह आंखों के आगे तैरने लगीं। सुदूर भूत की मधुर स्मृति।

एक समय मन्मथ राय द्वारा चयनित एकांकी नाटक 'एकांकिका' शीर्षक से नियोगी बिक्स्टन से प्रकाशित कर बहुत से नाटक प्रेमियों की प्रशंसा प्राप्त कर मैंने अपने को धन्य समझा था।

स आजिके होलो कतकाल,
तबू येन मने हय से दिन सकाल !'

(भावार्थ कितने दिन हो गये, पर लगता है आज की बात हो)

मनमोहन थियेटर में नाटककार के 'महुआ' की मधुर माया का आश्रय लेकर बंग रंगमंच के तोरण द्वार का अतिक्रमण कर एक बार मंच की माया के प्रति आकर्षित हुआ। तब मनमोहन के कर्णधार थे प्रबोधचन्द्र गुह एवं अनादि वसु। महुआ के मोहमय गीत तैयार किये काजी नजरुल इसलाम ने।

'मउल गाछे फूटे छे फूल,
नेशार झोंके झिमाय पवन !'

रोज शाम को जबरदस्त बैठक होती। वहा आते हेमेन्द्र कुमार राय, प्रभात गागुली, शिल्पी यामिनी राय, चारु राय, शचीन सेनगुप्त, नृपेन्द्र कृष्ण चट्टोपाध्याय, नजरुल इसलाम तथा और भी बहुत से विद्वान लोग। उस सभा का कनिष्ठतम सदस्य होते हुए भी मुझे प्रबोध गुह का सस्नेह आह्वान प्राप्त हुआ— महुआ के तिरगे पोस्टर तैयार करने का। थियटर के उन प्रथम लिथो प्राचीर पत्रा ने कलकत्ता के रास्ते ढक दिये।

दुर्गादास, प्रभात सिंह, सरयू बाला, निर्मलेन्दु लाहिडी जैसे प्रमुख शिल्पियो के सुन्दर अभिनय से 'महुआ' जम गया। ऊपर से काजी नजरल के कमाल के गीत। मस्ती भरे उन दिना की मधुस्मृति आज भी मन म जगती है।

एक ऐसा वक्त गुजरा है, जब मैं नाटककार मन्मथ राय का नित्य-सहचर था। उनके साथ सम्पक भी वडा मजेदार था। एक ओर वे मेरे मित्र थे, दूसरी ओर उन्होंने मेरी एक भाजी मे शादी की। यानी हम श्वसुर-जमाई। मगर तब नाटककार बालुरघाट मे वकील थे, सो मैं कलकत्ता शहर म उनके नाटका का भण्डारी और साल एजेन्ट था। सिटी आफिस भी कहा जा सकता है।

'कारागार' के मस्ती भरे दिना की बात याद आती है। नजरुल को मनमोहन के एक कमरे म बन्दी बनाया गया है। चाय, पान जर्दा, गम नाश्ता—दौर पर दौर चल रहा है। नजरुल मतवाले होकर गीत लिखे जा रहे है—**'बन्दीर मंदिरे जागो देवता', 'कारापाषाण भेदि जागो नारायण,' 'तिमिर विदारि अलक विहारी कृष्णमुरारि आगत ऐ', जागो जागो शख चक्र गदापदमधारी'** वे गीत लिख रह हैं और स्वर दे रहे हैं साथ ही साथ तथा निहार बाला को सिखा रहे हैं। हम लोग मुग्ध होकर सविस्मय सुने जा रह है।

यह 'कारागर' सारे बगाल को मस्त कर देता। साहित्यकार, पत्रकार, नाना राजनीतिक दल प्रशसा-मुखर हो उठे। टेगाड साहब का ध्यान भग हुआ। रोज प्रेक्षागृह भरा चल रहा है। सरकारी आदेश से नाटक गया। मगर 'कारागार' नाट्यमच पर एक नये इतिहास गया।

सन-तारीख को छोडकर नाटककार मन्मथ राय के नाट्य प्रवाह की मधुर स्मृति मानस पटल पर तरती है। नाटयकार बालुरघाट म वकील हैं मगर वकालत के कागज पत्रा की ओर ध्यान नही। इधर नाट्य जगत स उन्ह सादर आह्वान किया जाता है, उसकी अपेक्षा कतई नही की जा सकती। तब मैं पाच न० अभय गुह रोड पर रहता था। नाटककार हरदम कलकत्ता आ रह है—नाट्यकला लक्ष्मी की पुकार पर। इसीलिए हैड आफिस है अभयगुह रोड। यहा केजरटेकर है परश, सा नाटककार की हाक डाट चलती हा रहती है—"परेश चाय बना। परश पान ले आ, सिगरट ले आ, जर्दा ले आ।' और परेश भी सदा तत्पर। नाटककार के आत्मीय स्वजन नाराज। उनके यहा न रहकर इस बेकार के डेरे म क्या? मगर यह जा नाट्के पाडा (नाटककारा की बस्ती) है। कभी बुलावा आ रहा ह नाटयनिकेतन के प्रवोध गुह के पास स, कभी आह्वान किया रग महल के यामिनी मित्र सतु सेनन। उधर ग्रामोफान कम्पनी की पुकार है। कभी-कभा रडियो की चिट्ठी आ जाती है। सिटी आफिस का सब हिसाब रखना पडेगा।

मित्र लाग कहत हैं— बच्चू, पूवजन्म म रलवे स बहुत उधार लिया था, सो इस जन्म म चुकाना पड रहा है।" नाटयकार निर्विकार। आवागमन जारी रहता है—बालुरघाट और कलकत्ता

इस अभयगुह रोड वाल घर म कितने लागा की पदधूलि पडी है, साचकर अवाक हा जाता हू। पदापण किया है नटसूय अहीन्द्र चौधुरी, नाट्यकार शचीन सेनगुप्त, सतु सन यामिनी मित्र, प्रबोध गुह बाबू लाल चाखानि सुरशिल्पी नितार्द मातीलाल अनिल विश्वास रवि राय भूमन राय, डी० जी० वीरेन्द्र कृष्ण भद्र नपेन चट्टोपाध्याय नजरुल इसलाम जहानारा चौधुरी भीष्मदव चट्टोपाध्याय और भी जाने कितने मशहूर मशहूर लोगा न।

नाटयनिकतन वाल प्रबाध गुह बडे मजेदार आदमी थ। कही कुछ नही एकाएक कलकत्ता म पोस्टर लग गये—यशस्वी नाट्यकार मन्मथ राय का पौराणिक नाटक सावित्री'। नाटयनिकतन म आसन्न। आकषण! अब इलाज क्या छूटत ही पत्र लिखना पडा बालुरघाट।

खबर पाते ही नाटयकार दौड़े जाते। सम्भव है तब तक उन्होंने नोट-बुक ही न खरीदी हो। मन्मथ राय के अधिकांश नाटकों का यही इतिहास। मगर एक बार यदि लाइन वाला रजिस्टर हाथ में ले लिया और नाटक लिखना शुरू कर दिया तो हम लोग उनकी रचना की द्रुतगति देखकर आश्चर्यचकित ही हुए हैं। सम्भवतः रात भर नाटक लिखते रहे। मगज में डायलॉग कुलबुला रहे हैं कलम में ज्वार आया है। द्रुतगति में दृश्य पूरे हो रहे हैं। एक एक दृश्य के अन्त में नाट्यकार की हुंकार— सुनिये यह कैसा जमा ?" और साथ ही साथ परेश को बुलाकर आदेश पर आदेश। परेश नौकर। परेश पान ले आ। जर्दे का डिब्बा कहाँ है ? '

सम्भवतः मैंने कहा— 'नाटक गजब का जम रहा है !" अगले ही क्षण नया दृश्य शुरू हो गया।

नाटयकार की लिखाई साफ सीधी बड़ी-बड़ी सौ कापी एक के बाद एक भरती जाती हैं और परेश को नयी खरीदने के लिए दौड़ना पड़ता है। वाकई नाट्य रचना का ज्वर आया हुआ है।

रवीन्द्रनाथ के लेख से पता चलता है कि द्विजेन्द्र नाथ जब स्वप्न प्रयाण काव्य रचना कर रहे थे, तो उनकी कापी के पृष्ठ ठाकुरबाड़ी के बरामदे में उड़ते रहते थे। नाट्यकार मन्मथ राय की नाट्य-रचना का यह मजेदार दृश्य हम लोगों ने देखा है। उनकी नाट्य-रचना में असंख्य फूल फूटने कितने ही मुकुल अनादर से झर जाते।

नाटयकार के बड़े बड़े मजेदार संस्कार थे। जाने किस मित्र ने बताया था भोर उठते ही यदि 'सवत्सा धेनु' दिखाई दे तो दिन अच्छा जाता है। हमारे घर की उल्टी दिशा में रहते थे स्वनामधन्य वकील तपन मित्र। उनके यहाँ रोज सुबह एक ग्वाला दूध दुहकर दे जाता था। नाट्यकार सुबह आँखें बन्द किये ही प्रश्न करते— 'आ गया ?' मतलब वह ग्वाला गाय-बछड़ा लेकर आ गया कि नहीं ? आया हो तो आँखें खोलें नहीं

जे० एन० घोष ने मेगाफोन रिकॉर्ड कम्पनी नाम से एक प्रतिष्ठान खोला था। उसका एक नाट्य विभाग शुरू होगा जहाँ से लघुनाटकों के रिकॉर्ड निकलेंगे। साथ ही साथ विभाग का शुभारम्भ। नाटयकार मन्मथ

राय। नाट्य परिचालक और नायक दुर्गादास बंद्योपाध्याय। संगीत परिचालना—भीष्मदेव चट्टोपाध्याय। संगीत रचना अखिल नियोगी। पहला रिकार्ड निकला 'खना'। यह 'खना' नाटक नटनिकेतन में अभिनीत हुआ तो असामान्य सफलता हासिल हुई।

पात्र परिचय था, वराह—अहीन्द्र चौधुरी, मिहिर—दुर्गादास बंद्योपाध्याय, खना—नीहार वाला श्याम देव—मनोरंजन भट्टाचार्य इत्यादि। रिकार्ड-नाटक खूब जमा, जबरदस्त बिक्री होने लगी।

एक दिन जितेन घोष महाशय ने आकर सगर्व घोषणा की—'खना' की बिक्री सौ तक पहुंच गई। उस मेगाफोन रिकॉर्ड कम्पनी में खूब खाना-पीना हुआ। जितेन बाबू ने मुझे संगीत रचना के लिए एक पोर्टेबल मशीन उपहार में दी। हम लोगों ने अपनी छत पर बैठकर उस यंत्र पर मन्मथ राय के 'खना', शकुन्तला 'रामप्रसाद' कितनी बार सुने हैं ठीक याद नहीं।

रोज शाम को नाट्यनिकेतन में भी एक सान्ध्य मजलिस बैठती। योगदान करते बहुत-से गुणी लोग। नाट्य चर्चा में प्रबोध बाबू की गोष्ठी मुखर हो उठती। इसके अतिरिक्त, प्रबोध चन्द्र अपने हाथों से तैयार करते चॉप कटलेट। वे सब स्वादिष्ट चीजें वितरित होती मित्रों के हाथों। गरम-गरम धूमायित चाय के प्याले आते। सान्ध्य मजलिस जम जाती। कभी कभी काजी नजरुल स्वर की सुरधुनी बहा देते। मजलिस की मक्षीरानी नीहार वाला कभी-कभी रवीन्द्र संगीत प्रस्तुत करती। इन सब गुणी-स्नेही शिल्पियों की बात याद आती है। नृत्य गीत में, अभिनय में बातचीतों में कुशल।

नाट्यकार का 'चाँद सौदागर' था 'भारत लक्ष्मी' की पताका के नीचे छायाचित्र में रूपान्तरित हुआ था तब अहीन्द्र चौधुरी डालिमतला लेन में रहते थे। उनके शयन-कक्ष में चित्रनाट्य रचना की गोष्ठी चलती थी। परिचालक प्रफुल्ल राय, स्वयं नाट्यकार गृह स्वामी अहीन्द्र चौधुरी और यह नाचीज नित्य वहां उपस्थित होते।

प्लेट पर प्लेट भरकर हम लोगों की बौदि अहीन्द्र बाबू की सहधर्मिणी नाश्ता भेजती। ऐसी स्नेहशीला और धर्मपरायणा महिला हमने कम ही देखी हैं। कहीं ठाकुर रामकृष्ण अथवा विवेकानन्द पर वार्ता है व चुप-

चाप दो निमत्रण-पत्र नाटयकार को और मुये देकर कहती— आप लाग सुन आइय, फिर मैं आप लोगा स सब पूछ लूगी।'

वावूलाल चोखानि की गाडी म अहीन्द्र वावू नाटयकार और मैं रोज स्टडियो जात। रास्त म यदि नाटयकार गाडी रुकवाकर सिगरट खरीदने को होत, तो अहीन्द्र वावू उन्ह रोकत हुए कहत— अरे र। कर क्या रहे है? दस मिनट वाद ही हम लोग स्टूडियो राज्य म पहुच जायगे। वहा वजू वावू का राज्य। सिगरेटा की क्या कमी? जरा सी दर धय नही रख पा रहे?' अहीन्द्र वावू भी कम मजेदार न थे। स्टूडियो स व किमी भी दिन खाली हाथ नही लौटेंगे। वजू वावू स फुसफुसाकर कहते— देखिय भाई वजू वावू खाली हाथ लौटना हमारे धम म निषेध है। कम स कम एक चवन्नी जेब म डाल दीजिय नही ता मा लक्ष्मी रुष्ट हो जायेंगी। उनकी अभिनव रसिकता सुनकर हम लोग हस पडते।

इस चाद सौदागर की जिस दिन अन्तिम एडिटिंग थी सारी रात बीत गई। सारा कलकत्ता सो रहा है। नश-नीरवता भेदत हम चार जने (प्रफुल्ल राय अहीन्द्र चौधुरी नाटयकार और मैं) स्टूडियो की गाडी म लौट रहे हैं। धमतला के पास आकर अहीन्द्र वावू की तमन्ना हुई हिन्दुस्तान विल्डिंग क नीचे वाले रेस्तरा को खुलवाया जाय। प्रफुल्ल दा का उत्साह भी असीम। दोना जने जाकर दो वोतल लकर मशगूल हा गय। हठात् हम लोगा की तरफ नटसूय की नजर पडी। वोल— आज आप लागो को भी नही छोडूगा। मैंन असहाय भाव स नाटयकार की ओर देखा। गजब की उपस्थित बुद्धि नाटयकार की। [उन्हाने दो लाल लमनड की बोतलें लाकर रख दी। उन्ह पीकर हम दोना न इज्जत बचाई।

जब नाटयनिकतन म नाटयकार क मीरकासम को मचस्थ करन की बात तय हुई तो नायक का अभिनय कौन करेंगे इस बात का लकर चचा का अन्त नही। निमलेन्दु लाहिडी तब शायद अस्वस्थ थ। प्रवोधचन्द्र बोल— छवि विश्वास मीरकासम हागे। नाटयकार वड वडाय। छवि वावू न इसस पहल मच पर अभिनय नही किया। इसालिए नाटयकार का डर। मगर छवि विश्वास तो मच पर आत ही एकबारगी ।ता—।दा—।ट। इसी नाटक म अभिनय करक व रातारात विख्यात हो गय। उमर कुमार

मफलता म भरे उनक जी न की वात किसी स छिपी नहीं।

नाट्यकार का एतिहासिक नाटक अशाक जव रगमहल म मचस्थ हुआ तव एक नयी तरग दखी। रगमहल के तीन कणधारा (ब्रह्मा विष्णु महश)—शिशिर मल्लिक, यामिनी मित्र, सतु सन—न इस नाटक को रूप दान करने म जरा भी कजूसी नही दिखाइ। साज-सज्जा दृश्यपट, प्रकाश क अभिनव आयोजन म दाना हाथ खालकर खच किया। परिचालक नरेश मित्र और तिष्यरक्षिता की भूमिका म शाति गुप्ता। इतिहास कहता ह कि अशाक कुत्सित दशन थ। यही कारण ह कि बहुत साच विचार कर रवि राय को सम्राट की भूमिका के लिए चुना गया। 'उना नाटक की तरह अशाक' के गीत भी मैंने रच। स्वर सयाजन था निताइ मोतीलाल का। स्वर सृष्टि की दृष्टि स नाटक गजब का था। प्रत्यक चरित्र का अभिनय भी उच्च स्तर का था। एतिहासिक नाटक की दृष्टि स 'अशोक' बग रगमच पर वाकइ एक लण्डमाक था। मगर इतन अपव्यय के बावजूद 'अशाक' आशानुरूप नही चला।

नाटयकार न एक बार मरी एक हास्य कहानी—'शुभतरस्पश' का भारत स्टूडियो म चित्र म रूपान्तरित किया था। तीन रीला क इस हास्य चित्र म जवाहर गागुली भानु वद्यापाध्याय, चित्तरजन गास्वामी और इन्दु बाला पहली बार चित्र म आये तथा वाद। यथासमय यह चित्र रिलीज हुआ।

एक वार हम लाग दल बनाकर दार्जिलिंग गय थ। दल म थे नाट्यकार नन्दन इसलाम और म। वहा पहुचकर सख्या दुगुनी हा गई। एक दिन सब मिलकर रवीन्द्रनाथ स भेंट कर आये। कवि और नजरल के गीता का लकर जा चचा-समीक्षा हुई वह हर दृष्टि स उपभाग्य थी। फिर देखन म आया कि नाटयनिकेतन के प्रवाध गुह दलवल सहित दार्जिलिंग आये हैं। तब नजरुल और नीहार बाला के गीता न हम लागा की सान्ध्य महफिलें आनन्द मुखर हो उठी। यही हम लागा का परिचय हुआ था बगम जहानारा के साथ। बेगम जहानारा चौधुरी। परवर्ती काल म उन्हान कवि की अशीवाणी प्राप्त कर 'रूपवाणी' प्रकाशित की थी।

कलकत्ता लौटकर फिर उसी नाटयस्रोत म अवगाहन। मै तब रूपवाणी

का प्रचार सचिव था। एक दिन सुनने म आया कि श्री सिनेमा म एक मशहूर निदेशी छवि आई है। तय किया गया कि देखने चलगे। दल म हम चार जने थ दुगादास वद्योपाध्याय डी०जी० नाटयकार और मैं। दुर्गादास बोले कि व ही सारा खच करग। इण्टरवल म उन्हाने हम लोगा को लाल रग की लेमनेड पिलाई। अगल दिन कलकत्ता म बात फल गइ कि दुर्गादास के माथ रहकर हम लाग पतन के रास्त चल गय। सुनकर दुगादास की वह हसी-सी हसी।

नाटक क नशे म मशगूल कस मस्ती भरे दिन थ व। फिर उन अभाव क दिना को भूलना भी मुश्किल। परश चम्पत। हम लागा क डर म खाना नही बना। नाटयकार की जेव खाली। मैं भी खाली गाठ। मगर हम लागा म उत्साह का अभाव न था। सदूक के तल म स दो चार आन बटोरकर सीधे जा पहुचे मिख की दुकान पर। वहा राटी और मास। उसी को आनद स खाकर फिर डेरे पर लौट आना। सुख दुख म मिले नाटक क नशे म मस्त यौवन स छलकत व दिन क्या कभी भुलाये जा सकत है। वद्धावस्था म वे दिन और भी ज्यादा याद आत है।

हम दो जना को हर वक्त एक साथ चलत फिरत उठत बठत देखकर नाटयजगत के महर्षि मनोरजन भट्टाचाय न हमारा एक सुदर नामकरण किया था। व हम लागा को कहत— Long and short of the story' यदि वे कभी नाटयकार का अकला दखत ता पूछत— Where is the short of the story? फिर कभी मुझ सगाहीन अवस्था म देखत ता उनकी आश्चयजनक जिज्ञासा होती— Where is the long of the story?

महर्षि का दिया हुआ यह नाम नाटयजगत म फल गया था। नाटयकार क बारे म कितनी ही बात तो आज मन म उमडती ह मगर गुरु स्मृति गा क्या अत है। अतएव कहित पुस्तक वाड, मक्षप रचिनु। (बहन स पुस्तक बडी हाती है, सक्षप म लिख दिया)।

अपूर्व अरूप

□□

जीवन की डगर म कभी-कभी विद्युत चमक की तरह एक एसा उज्ज्वल मित्र मिल जाता है जिसकी बातें भूलना बडा मुश्किल होता है। एस ही व्यक्ति थे अरूप'। उनका एक और नाम है स्वामी प्रेमघनानद। मैं उन्ह 'अरूप' क नाम स ही पुकारता था। और व मुझे कहते स्वपनवूडो।

अरूप के स्वभाव म एक एसा सहज सारल्य था, साथ ही एसी एक वज्रकठोरता थी कि देखकर आश्चर्य होता। मित्र के रूप में सहज-सरल निकट क व्यक्ति थ, मगर जिस बात को वे अन्याय समझते, उस कराने क लिए कोई भी अनुरोध-उपराध उन्ह तिलमात्र भी डिगा नही सकता था। तब तो वे वज्र की भांति कठोर हो जाते।

मेरे साथ जब परिचय हुआ, तब व सक्युलर रोड के साइन्स कॉलेज के पास एक दुमजिले घर म रहत थे। परिचय के साथ ही-साथ वे अपने जन बन गय। ऐसा मधुर स्वभाव मैंने जीवन म कम लोगों का ही देखा है। चेहर पर एक अम्लान हसी हर वक्त बनी रहती।

बहरहाल मैंने गौर किया है, आदश का एक मगलप्रदीप उनक अन्तर म हर वक्त जलता रहता था। रवीन्द्रनाथ ने इसी को बताया है 'अन्तर प्रदीपखानि।

अरूप मुझस प्राय कहते— दखिय स्वपनवूडो, अपने प्रदश के लडके-लडकियो क अन्तर मे बडी छाटी उम्र से ही एक ऐसा बीजमन्त्र फूकना होगा जिससे वे सभी बगला भाषा का प्यार करें, श्रद्धा करें। बगला सीखिये बगला लिखिये बगला बोलिय यही उनका बीजमन्त्र था।

उनके उस दुमजिले मकान पर कवि सुनिमल बसु और मैं बीच-बीच म जात। तब बच्चो के साहित्य को लेकर कितनी कितनी तरह की चर्चाए हाती सब बातें ठीक से याद नहीं। मगर बच्चा के लिए एक मासिक पत्र

प्रकाशित करने के विषय मे उनका हार्दिक आग्रह देखता। हम लोग उन्हे खूब उत्साहित करते। कवि बधु सुनिमल मुह जबानी गीत-छद सुनाते। अरूप हम लोगो के लिए मुरमुरे और जाने क्या-क्या ले आते। तीनो गोलाकार बैठते। वह मुरमुरे मुह मे आते ही अमृत हो जाते। साथ मे तरह-तरह की चर्चा। इस चर्चा का परवर्ती अध्याय हुआ अरूप की 'किशोर बाग्ला' की शुरुआत। मगर वह बहुत बाद की बात है।

युद्ध के समय जब कलकत्ता पर बम गिरा, तब मैंने और सुनिमल बसु ने मछलन्दपुर मे एक जमीन की बात सुनी। दोनो दोस्तो ने दो दो बीघे जमीन उस गाव मे खरीद ली। कवि सुनिमल रसिकता करते हुए बोले—'शुधु, बिघे दुइ, छिल मोर भुइ, आर सबइ गेछे ऋणे।' (सिर्फ दो बीघे जमीन मेरी थी, बाकी सब कर्ज मे चला गया।)

उस चार बीघे जमीन पर हम लोगो ने अपने कच्चे मकान तैयार किये। उद्देश्य यह था कि कलकत्ता से कुछ दूर गाव मे निरापद आश्रय मे वास करेंगे।

सुनिमल अपने पूरे परिवार के साथ वहा रहने लगे। मैं भी गया था, मगर मैं तब बगाल सरकार के प्रचार विभाग में काम करता था इसलिए स्थायी रूप से नही रह सका। नौकरी जारी रखने के लिए कलकत्ता ही लौट आना पड़ा।

हम दोनो बीच-बीच मे सियालदह ट्रेन मे बैठकर मछलन्दपुर चले जाते और वहा सुनिमल के साथ दिन भर हो-हुल्लड करते। फिर कलकत्ता लौट आते।

अरूप कहते—"आइए, कवि के लिए कुछ मछली खरीदकर ले चलें।" दोनो सियालदह बाजार से मछली लेते। मौसम का जो फल होता, वह भी लेते। कभी हम दोनो जाते, कभी अरूप अकेले ही उस गाव चले जाते।

वह गाव उन दिनो सुनसान ही था। तीनो मित्र गाव के रास्ते घूमते-फिरते और तरह-तरह की चर्चा-समीक्षा करते। सुनिमल की पत्नी हम लोगो को तरह-तरह की चीजें बना-बनाकर खिलाती। बस विशुद्ध आनद के दिन थे। हम मे से कोई बडा आदमी नही था, मगर सबके मन मे एक आदर्श का दीप जला करता।

बच्चो के लिए किस प्रकार की चीजें लिखी जानी चाहिए, उनकी भाषा कैसी होगी विषयवस्तु किस तरह की हो—इन सब विषयों पर हम लोग चर्चा करते। अरूप ने जब 'किशोर बांग्ला' प्रकाशित की, तो सुनिमल और मैं नियमित रूप से लिखते। इस तरह उस पत्रिका को केन्द्र बनाकर हम तीनों की मैत्री और भी बढ़ गई।

मैंने जब स्थायी रूप से 'युगान्तर' में योगदान करके सब 'पेयछिर आसर' तैयार किया, तब सुनिमल और अरूप से नाना प्रकार की सहायता और मूल्यवान परामर्श प्राप्तकर धन्य हुआ था। आसर' के प्रायः प्रत्येक अनुष्ठान में अरूप भाग लेते और परामर्श सहयोग देकर हम लोगों के सभी कामों में प्रेरणा का संचार करते बच्चों के नाटक लिखने में भी वे मुझे उत्साहित करते।

उन दिनों प्रति वर्ष हम लोग पौष पावण उत्सव सम्पन्न करते। परिकल्पना थी अभिनव। पहले से ट्रेन का डिब्बा आरक्षित करा पौष-संक्रान्ति के दिन सुबह के वक्त हम लोग लड़के लड़कियों के एक बड़े दल को लेकर किसी नयी जगह चले जाते। दिन भर पौष पावण उत्सव चलता वार्ता समीक्षा होती खेल कूद होते। और लड़कियाँ आस पास किसी किसान के घर जाकर चावल पीसकर तरह-तरह के केक तैयार करतीं। पायस का स्वाद मिलता। अरूप हम लोगों के साथ उत्सव में होते।

उस बार तय हुआ कि डायमण्ड हार्बर चलेंगे।

अरूप ने मुझे बुलाकर कहा—"स्वपनबूड़ो, पौष पावण उत्सव हो, यह तो बड़े आनंद की बात है। मगर उसके साथ स्वामी विवेकानंद का जन्मोत्सव भी मनाना होगा। जानते हैं न पौष पावण के दिन स्वामी जी का जन्म हुआ था।'

अरूप का परामर्श मैंने भी सानंद मान लिया। पहले से ही ऐसी व्यवस्था की गई कि बच्चे स्वामी जी के विषय में स्वरचित कविताएं सुनायें। फिर अरूप कुछ बोलेंगे और मैं भी कुछ चर्चा करूंगा। और सुनिमल भी कविता पाठ करेंगे।

डायमण्ड हार्बर पहुंचकर सभी बड़े खुश। तब यह जगह खूब खुली थी। हम लोगों को एक खुला आंगन मिल गया।

लडकियाँ पास म एक कृषक के घर चावल पीसने चली गइ। हम लाग घूम फिरकर कामकाज देखने लगे और दिनभर का कार्यक्रम तयार करने लगे।

मगर कुछ समय बाद हुआ यह कि बाद वाली ट्रेन स और भी बहुत से लडके-लडकियाँ आ पहुचे। फलस्वरूप जो डर था वही हुआ। खिचडी और मास कम पड गये। मगर अरूप जरा भी विचलित न हुए। कमर म अंगोछा बाधकर बोले—'मैं एक हाडी खिचडी बनाऊंगा। साथ ही साथ बाजार स दाल चावल खरीदकर लाय गय। शिल्पी धीरेन बल हम लोगा क साथ थे। उन्हाने उत्साहित होकर कहा—'मैं मास तयार करूंगा।' फिर मास खरीदकर लाया गया। और ये दोनो कर्मवीर काम स जुट गये।

अरूप बोले— 'स्वामी जी के आशीर्वाद से किसी भी चीज की कमी नहीं पडेगी।' वाकई बडी दक्षता के साथ दोनों ने काम पूरा किया। मास-खिचडी खाकर बच्चे बडे खुश।

बहरहाल हमारा कार्यक्रम योजना क अनुरूप ही सम्पन्न हुआ। शाम की गाडी स सभी लोग गीत गाते गाते कलकत्ता और आस पास के अचलो को लौट आये।

ये थे हम लोगो के अरूप। किसी भी विपदा म व हिम्मत हारने वाले न थे। कोई सकट सामने आता, वे स्वय आगे आते और समस्या हल करते। उन्होने जब किशोर बांग्ला प्रेस लगाया तो स्वय ही बडे उत्साह स कम्पोजिंग करते। वेणु नामक एक आदर्शवादी कर्मनिष्ठ लडका हर काम म उनकी सहायता करता था। बाद म यह वेणु ही स्वामी सोमानद महाराज के रूप म प्रतिष्ठित हुआ और उसने माहेशश्री रामकृष्ण आश्रम का योग्यतापूर्वक सचालन किया।

अरूप मुझसे प्राय कहते— समझे स्वपनबूडो। मैंने परीक्षा कर देखा है, लडको की अपेक्षा लडकियाँ अच्छा कम्पोजिंग कर सकती है। उनके काम म निष्ठा और एकाग्रता होती है। और कम गलतियाँ करती है। लडके सिर्फ टालमटोल करते है और हर तरह स गोलमाल करने का मौका देखते है।" उन्होंने स्वय की चेष्टा से कुछेक लडकियो को सुदर कम्पोजिंग करना सिखा दिया था।

एक और काम अरूप ने यत्नपूर्वक किया था। उन दिनों गाने की स्वर लिपि छापने हेतु टाइप अधिकांश प्रेसों में नहीं मिलता था। उन्होंने इसकी अच्छी व्यवस्था की थी। याद आता है मेरे चिन्तन ही गीतों की स्वर लिपि वहीं किशोरीमोहन प्रेस में छपी थी।

'सेवे पयेछिरे आसर' में जब नव वर्ष उत्सव होता, अरूप स्वयं आकर सक्रिय योगदान करते। और इस मामले में हम लोगों की सहायता करते व्यायामाचार्य विष्णु चरण घोष, आयरन मैन नीलमणि दास तथा और भी बहुत से शिशुप्रेमी मित्र लोग। कवि सुनिर्मल वसु तो सभी कामों में सहयोग करने के लिए आगे रहते।

संगठन के कामों में अरूप की ऐसी लगन थी कि वे किसी भी मुश्किल काम को दु:साध्य न समझते। सहज ही वे उसे पूरा कर सकते थे। अनेक बार बहुत सी घटनाओं में उनकी कार्य प्रणाली देखकर हम लोग विस्मित हुए हैं, मन ही मन उनकी प्रशंसा की है।

एक बहुत पुरानी बात याद आयी। तब रवीन्द्रनाथ हम लोगों के साहित्याकाश में देदीप्यमान थे। एक दिन 'मौमाछि' और अरूप मेरे पास आये। उनका प्रस्ताव निःसन्देह अभिनव था—बंगाल के नामी बाल साहित्यकारों द्वारा 'डाकघर' मंचस्थ कराया जाय। और उस नाटक का अभिनय कलकत्ता रेडियो स्टेशन के सहयोग-संरक्षण में रील के माध्यम से कवि को शांतिनिकेतन में सुनाया जाय।

परिकल्पना सुनकर मैं भी उत्साहित हो उठा। तब मैं हरि घोष स्ट्रीट में रहता था। वहां एक बड़ा हाल था। तय हुआ रोज शाम को वहां पूर्वाभ्यास होगा।

जहां तक याद है उस महफिल में हाजिर होते थे कवि नरेन्द्र देव, गिरिजा कुमार बसु, मन्मथ राय, नपेन्द्र कृष्ण चट्टोपाध्याय, मौमाछि, प्रभात किरण बसु, शिल्पी धीरेन बल, बुद्धु भूतुम, जयनाल आबदीन, अरूप तथा और भी बहुत लोग।

अवश्य ही इस नाटक में अरूप ने कोई भूमिका ग्रहण नहीं की। वे व्यवस्था में थे। कवि सुनिर्मल वसु आकर एकदम महफिल जमा देते। इन्दिरा देवी आतीं अपनी छोटी बहन को लेकर। उस लड़की ने सुधा की